स्वर्ण जयन्ती प्रकाशन 2013

BIHAR YOGA

स्वर्णिम संग्रह 5

बिहार योग परम्परा के मौलिक प्रकाशनों का संकलन



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

स्वर्णिम संग्रह 5



WORLD YOGA CONVENTION 2013
GANGA DARSHAN, MUNGER, BIHAR, INDIA
23rd–27th October 2013

स्वर्णिम संग्रह 5

बिहार योग परम्परा के मौलिक प्रकाशनों का संकलन



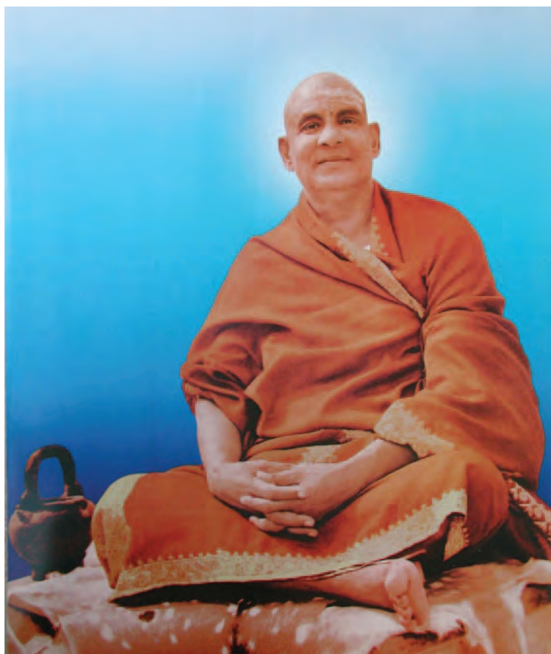
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा प्रथम प्रकाशन 2013

ISBN: 978-93-81620-93-9

प्रकाशक एवं वितरक—योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट,
मुंगेर, बिहार, भारत
मुद्रक—एजीएन ऑफसेट प्रिंटर्स,
ग्रेटर नोएडा

वेबसाइट : www.biharyoga.net
www.rikhiapeeth.net



सविनय समर्पण

स्वामी शिवानन्द सरस्वती के चरणों में
जिन्होंने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को योग के रहस्यों की शिक्षा दी



नमो नारायण

योगविद्या भारतवर्ष की सबसे प्राचीन संस्कृति और जीवन-पद्धति है तथा इसी विद्या के बल पर भारतवासी प्राचीनकाल में सुखी, समृद्ध और स्वस्थ जीवन बिताते थे। जब से भारत में योग विद्या का ह्रास हुआ, तभी से भारतवासी गरीब, दुःखी और अस्वस्थ हैं। पूजा-पाठ, धर्म-कर्म से शान्ति मिलती है और योगाभ्यास से धन-धान्य, समृद्धि और स्वास्थ्य। भारत में सुख, समृद्धि, शक्ति और स्वास्थ्य के लिए हर व्यक्ति को योगाभ्यास करना चाहिए।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
रिखियापीठ, 2005

विषय सूची

पवनमुक्तासन और सुखी जीवन के रहस्य

माँ योगशक्ति

स्वामी सत्यानन्द जी की शिक्षाओं से

अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल, राजनाँदगाँव द्वारा प्रकाशन – 1962

बिहार योग विद्यालय द्वारा प्रकाशन – 2013



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

पवनमुक्तासन और सुखी जीवन के रहस्य

यह पुस्तक बम्बई में 24 से 31 दिसम्बर, 1961 तक आयोजित 'अध्यात्म शिक्षण शिविर' में माँ योगशक्ति द्वारा दिये गये एक प्रवचन से संगृहित है, जिसमें शारीरिक और मानसिक आरोग्य हेतु योगासनों के महत्त्व तथा विशेष रूप से स्वामी सत्यानन्द जी द्वारा प्रतिपादित पवनमुक्तासन शृंखला के अभ्यासों पर प्रकाश डाला गया है।

–*सम्पादक*

दो शब्द

माँ योगशक्ति का योग-प्रचार के हेतु उतरना क्या हुआ, मानो हमारे गुरुदेव, परमहंस स्वामी सत्यानन्द जी के आध्यात्मिक-मिशन के भविष्य की दिशा निश्चित हो गई। यह हमें तब मालूम हुआ जब माताजी ने पहले 'आध्यात्म-शिक्षण शिविर' में और बाद में अपने महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश व बिहार के प्रवास में हजारों सत्संगियों को उत्साह, प्रेरणा व मार्गदर्शन से मन्त्रमुग्ध कर दिया। यह पुस्तक उन्हीं के एक प्रवचन का सार है, जिसे इन्दिरा मिरचन्दानी ने पहले रिकॉर्ड में भरकर पुनः यहाँ प्रस्तुत किया है।

स्वामी सत्यव्रतानन्द सरस्वती
राजनाँदगाँव (म. प्र.)



पवनमुक्तासन और सुखी जीवन के रहस्य

भगवदनुरागी सत्संगियों,
तुलसीदास जी ने कहा है 'बड़े भाग मानुष तन पावा'। इस पर मैं विचार करती हूँ तो मुझे ऐसा लगता है कि उन्होंने बहुत बड़ा सत्य लिखा है। इस शरीर के गठन और इसके द्वारा उपार्जित करने योग्य महान् विद्याओं की ओर ध्यान दिया जाय तो दंग रह जाना पड़ेगा। शरीर की रचना ही कितनी विचित्र और रहस्यमयी है। मेडिकल साइन्स व फिजिओलौजिस्ट तो शरीर की चीर-फाड़ कर केवल स्थूल तत्त्वों का ही अध्ययन और ज्ञान प्राप्त करते हैं पर इस शरीर के अन्दर और भी ऐसी अनेक चीजें है, जिनका ज्ञान ऋषि-मुनियों को था।

अद्भुत शरीर

हिन्दू शास्त्रों के अनुसार शरीर के अन्दर 72 हजार नाड़ियाँ और अनेक यौगिक चक्र हैं, किन्तु इनका ज्ञान डॉक्टरों को नहीं। कुण्डलिनी शक्ति क्या है, इसे केवल योगी और सिद्ध ही जानते हैं। यह मानव शरीर ईश्वर की अनुपम कृति है। इसके सभी रहस्यों का पता भौतिक विज्ञान अभी तक नहीं लगा सका है। इसलिए ऐसे शरीर को पा लेना कम महत्त्व की बात नहीं।

फ्रांस में 17वीं सदी में एक मिस्टिक हुआ, जो पहले कानून का विद्यार्थी रहा एवं वकालत का पेशा करता था, किन्तु जब उसे यह पता चला कि मनुष्य के इस स्थूल जीवन के परे भी उसका एक अन्तर-जीवन है और एक आत्मिक जगत् है तो उसने वकालत वगैरह सब छोड़ दी और आध्यात्मिक जीवन के अनुसन्धान में लग गया। उसका नाम था Johann George Gichtel, उसी ने बाद में 'क्रिश्चियन मिस्टिक आन्दोलन' की नींव डाली। उसने भी इस शरीर के रहस्यमय चक्रों पर शोध की थी।

यह शरीर, मेरे विचार से, एक अमूल्य साधन है, जिससे लोक एवं परलोक दोनों साधे जा सकते हैं। इस शरीर से इस संसार में यश, धन, मान और मर्यादा प्राप्त किये जा सकते है एवं दूसरे अदृश्य लोकों का ज्ञान और आध्यात्मिक जगत् का अनुसंधान किया जा सकता है।

अत: ऐसे शरीर को सँजोकर रखना, स्वस्थ रखना और उसकी सुरक्षा का उपाय करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है। स्वार्थ और परमार्थ, दोनों को सिद्ध करने के लिए शरीर एक माध्यम है। अत: स्वस्थ शरीर ही मनुष्य की सच्ची पूँजी है। इसकी देखभाल सभी को अच्छी तरह करनी चाहिए।

किन्तु आज मनुष्य इस अनमोल धन को कौड़ी-भर के भोगों के लिए खर्च करते जा रहे हैं। क्षुद्र इच्छाओं की पूर्ति व विषयों के भोगों में अमूल्य स्वास्थ्य को नष्ट करते जा रहे हैं। जिह्वा की तृप्ति के लिए शरीर की शक्तियों का होम चढ़ा रहे हैं।

जीवन में इच्छाओं का स्थान

इच्छाएँ, चाहे जैसी भी हों, हमेशा मनुष्य को बन्धन में डालती हैं, किन्तु इच्छारहित बनना कठिन है। यदि गृहस्थों को मैं यह सिखाऊँ कि वे इच्छारहित बन जावें तो सारा कारोबार ही चौपट हो जायेगा और यदि गृहस्थ इच्छाओं को त्याग कर विरक्त बन जायेंगे तो समाज की शृंखला टूट जायेगी। अस्तु, गृहस्थों को इच्छा तो जरूर करनी चाहिए, किन्तु इच्छाओं में विवेक रखना ही होगा। शुभ संकल्प एवं सदिच्छा करें, निम्न इच्छाओं का त्याग करें। जिन विषयों से इन्द्रियों को तात्कालिक सुख मिलता है, किन्तु जिनका अन्त दु:खद और परिणाम भयंकर होता है, उन्हें सदिच्छा नहीं कहा जा सकता। प्रारम्भ में कष्ट भले ही हो, पर उसका प्रभाव स्थायी एवं परिणाम सुख और सौभाग्य-वर्धक हो तो उसे हम सदिच्छा कह सकते हैं। अत: मैं कहती हूँ कि आप इच्छा करें, पर विवेक के साथ।

धन से स्वास्थ्य नहीं मिलता

दुनिया में सभी वस्तुएँ धन से खरीदी जा सकती हैं, पर क्या स्वास्थ्य भी आप धन से खरीद सकते हैं? धन से डॉक्टरों की जमात घर में बुला सकते हैं, पर क्या मृत्यु और पीड़ा को अपनी इच्छानुसार हटा सकते हैं? चिकित्सा-विज्ञान जगत् का उपकार कर रहा है, किन्तु उससे मनुष्यों का संताप बढ़ा भी है।

मनुष्य की पीड़ा का जड़ से निदान करने में आधुनिक 'मेडिकल साइन्स' असफल रहा है। धन से स्वास्थ्य की उपलब्धि नहीं की जा सकती। अमेरिका में फोर्ड नामक व्यक्ति की, जिसके नाम पर 'फोर्ड कार' बनी है, दुनिया के सबसे धनी व्यक्तियों में गिनती थी, पर उसके शरीर की भोजन-नली खराब हो गई थी। ट्यूब से उसके शरीर में भोजन पहुँचाया जाता था। दुनिया के सबसे धनी व्यक्ति को खाने का कष्ट!

मनुष्य का पहला कर्त्तव्य अपने स्वास्थ्य की सुरक्षा करना है। स्वस्थ शरीर ही धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष का साधन है। जिसके पास स्वास्थ्य नहीं, उसके लिए दुनिया में कुछ भी नहीं। आखिर दुनिया में मनुष्य इतना परेशान क्यों होता है? केवल सुख भोगने की इच्छा से। पर यदि स्वास्थ्य ही न हो, शरीर सुखी न हो तो वह क्या सुख भोगेगा। इसीलिए कहा जाता है कि जब स्वास्थ्य नष्ट हो जाय तो समझो कि कुछ खो गया है।

स्वास्थ्य और साधना

ईश्वर-भजन और आत्म-साक्षात्कार के लिए भी सबसे पहले निरोग शरीर एवं सन्तोषपूर्ण जीवन की आवश्यकता है। रोगी एवं विक्षिप्त मनुष्य भाव से भजन भी नहीं कर सकते। बच्चों की परवरिश और गृहस्थी के अन्यान्य कार्यों की तो बात दूर की है। अस्वस्थ मनुष्य न तो अपना कुछ कल्याण कर सकता है और न समाज का ही।

सुखी और स्वस्थ रहने का तरीका शास्त्र-सम्मत जीवन है। इसके विषय में मैं आगे चर्चा करूँगी पर इतना समझना चाहिए कि सुखी जीवन की पहली शर्त्त है स्वास्थ्य। Sound body में ही sound mind रह सकता है। अस्तु, प्रत्येक मनुष्य को अपना स्वास्थ्य बनाने के लिए अवश्य प्रयत्न करना चाहिए, जिसके लिए कुछ उपाय मैं आगे बतलाऊँगी।

आनन्द की शर्तें

एक बात तो निश्चित ही है कि हम सब सुखी बनना चाहते हैं व आनन्द की प्राप्ति चाहते हैं। आनन्द की कामना मनुष्य का स्वाभाविक धर्म ही नहीं, वरन् उसका जन्मसिद्ध अधिकार भी है। लोगों में कुछ ऐसी धारणा है कि आनन्द की कामना धर्म विरुद्ध है, ईश्वरीय मार्ग के प्रतिकूल है। पर ऐसी धारणा सच नहीं। ईश्वर स्वयं ही सत्, चित् एवं आनन्द स्वरूप है। इसीलिए उसे

'सच्चिदानन्द' कहते हैं। आनन्द की कामना आप सब लोग करें, किन्तु कर्म में विवेक भी हो। कर्म वही करो, जिससे आनन्द की प्राप्ति हो, न कि दुःखों की सृष्टि।

मनुष्य के पास वह शक्ति है, जो सृष्टि के अन्य जीवों के पास नहीं। इसलिए मनस्वी जीव, मनुष्य को प्रत्येक कार्य विचार के साथ करना चाहिए। प्रत्येक कर्म का फल होता है। भौतिक विज्ञान से भी यह सिद्ध है। यदि तुम हाथ उठाते हो तो उसकी भी प्रतिक्रिया वायुमण्डल में होती है। प्रकम्पन उत्पन्न होते हैं। आघात से ध्वनि उत्पन्न होती है। अस्तु, जैसा कर्म करोगे, वैसा ही फल भी जरूर पाओगे। यहाँ मैं यह बतलाना चाहती हूँ कि आनन्द की चाह बुरी नहीं, किन्तु कर्म वही करो जिससे आनन्द की सृष्टि हो, दुःख की नहीं।

व्याधियाँ तीन प्रकार की होती है—दैहिक, दैविक और आध्यात्मिक। मनुष्य उनका निदान खोजता है और उन्हें दूर करने के लिए साधन खोज निकालता है। आदिकाल में हमारे पूर्वजों ने यही किया। हम भी आज यही कर रहे हैं और हमारे आगे आने वाली सन्तानें भी यही करेंगी। मनुष्य-नामक जीव कभी चुप नहीं बैठा रहा। मनुष्य मनस्वी है। वह कठिनाई से घबड़ाता नहीं, उन पर विजय चाहता है।

महत्त्वाकांक्षी मनुष्य सफलता एवं आनन्द का खोजी है। वह कम-से-कम परिश्रम में अधिक-से-अधिक आनन्द की प्राप्ति चाहता है। आज के युग में साधारण मनुष्य क्या चाहता है? स्वास्थ्य, सौन्दर्य, यश, परिवार और धन। इनकी ही प्राप्ति के लिए वह अनेक कार्य और मनोव्यापार करता है। मनुष्य की कल्पना और मान्यता है कि इनसे सुख की प्राप्ति होगी। जो भी हो, प्रत्येक संसारी मनुष्य इन्हें चाहता है।

उन साधुओं और योगियों की बात छोड़ दीजिए, जो आभास के बदले अंतिम सत्य को जानना चाहते हैं, स्थूल को छोड़ सूक्ष्म की ओर चलते हैं, इन्द्रिय-सुख के बदले अतीन्द्रिय सुख की खोज करते हैं। इन्द्रियों से प्राप्त सुख क्षणिक है और उसका अन्त कष्टमय है, किन्तु इन्द्रियों को बाह्य विषयों से हटा कर अन्तर्मुखी करना सबसे नहीं हो सकता। सब लोग ऐसा करने में समर्थ नहीं होंगे। अतः हम लोगों का यह कर्त्तव्य है कि मानव जाति के उपकार के लिए कुछ ऐसी लोकोपयोगी बातें बतलावें, जिनसे उनको कुछ राहत मिल सके, त्राण मिले।

जीवन की परिभाषा

केवल गति को ही जीवन नहीं कहा जा सकता। मनुष्य जीवन के तीन पक्ष या स्तम्भ हैं—शरीर, इन्द्रियाँ और मन। इन तीनों के योग से मनुष्य का जीवन गतिशील होता है। मनुष्य केवल 'बायोलौजिकल कम्पाउण्ड' मात्र नहीं है। शरीर के साथ इन्द्रियों और मन का संयोग मानना पड़ता है। जब इन तीनों में सामंजस्य रहता है, याने तीनों समस्वर रहते हैं, तभी मनुष्य सुख और सन्तोष प्राप्त कर सकता है। यही मनुष्य जीवन की पूर्णता है। सफल जीवन बिताने के लिए तीनों का योग होना आवश्यक है। योग का अर्थ यही है।

योग क्या है?

योग के विषय में जनसाधारण में आज बहुत-सी गलतफहमी फैली हुई है। योग के पूरे कोर्स को हम सरलता के लिए दो विभागों में बाँट सकते हैं। एक को 'प्रारम्भिक योग' और दूसरे को 'उच्च योग' कहा जा सकता है। पहले को यूँ कहिये कि वह entrance का कोर्स है। इसका ज्ञान लोकोपयोगी है, सर्वसाधारण के लिए लभ्य एवं मानवता के लिए आवश्यक भी। दूसरा है उच्च योग, याने यूनिवर्सिटी का कोर्स, जिसमें सिर्फ वे ही जाएँ जो इस योग का अभ्यास करने के लिए समय और शक्ति लगाने को तैयार होकर अधिकारी बन चुके हों।

मैं यहाँ पर यह भी स्पष्ट कर देना चाहती हूँ कि योग के नाम से जो लोग डरते हैं, बेकार डरते हैं। योग की कुछ सरल क्रियाओं और साधनों का अभ्यास प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है। इन अभ्यासों से नुकसान नहीं, अत्यधिक लाभ ही होगा। जैसा अब तक जनसाधारण योग के विषय में सोचता आया है, वह धारणा सही नहीं है। लोगों का यह विश्वास कि योग केवल साधु-संन्यासियों की चीज है, ठीक नहीं। योग का अभ्यास प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है और करना भी चाहिए। सफलता और आनन्द के इच्छुक प्रत्येक मानव के लिए योग उपयोगी ही नहीं, अनिवार्य है।

साथ ही मैं आपको यह बतला दूँ कि योग-साधना के लिए आपको घर छोड़ने की आवश्यकता नहीं। योगाभ्यास के लिए विरक्ति और गृहत्याग की जरूरत नहीं। योग के अभ्यास को अपनाने के लिए धनोपार्जन छोड़ना नहीं पड़ता। यह तो अपने आन्तरिक जीवन को जगाने और प्रकाशित करने का उपाय है; अपनी आत्मशक्ति को सचेत और जागृत करने की कला है; स्वस्थ

शरीर और स्वस्थ मन की प्राप्ति का साधन है। किन्तु अज्ञान के कारण आज मनुष्य इसे समझता नहीं। अभी तक लोग इसी ख्याल में हैं कि योग गृहस्थों के लिए नहीं, संन्यासियों के लिए है। जनता के बीच फैली हुई इस गलतफहमी को दूर करने में हमारे परमगुरु, ऋषिकेश के स्वामी शिवानन्द जी सफल हुए। बीसवीं सदी में योगासनों का प्रचार एवं धार्मिक जागृति का कार्य स्वामी शिवानन्द जी एवं उनके शिष्यों ने किया है। देश ही नहीं, विदेशों में भी उनके हजारों शिष्य योगविद्या का प्रचार कर जन-कल्याण कर रहे हैं।

योग समाज-धर्म है

मेरा यह सब कहने का तात्पर्य यही है कि योग-विषयक बातों में आप भी रुचि लेना प्रारम्भ कर दें, डरें नहीं। अमेरिका में योगासनों के प्रति लोगों की रुचि इतनी बढ़ रही है कि संक्षेप में बतलाया नहीं जा सकता। भारत से सैकड़ों साधुओं ने वहाँ जाकर वेदान्त और योगविद्या का प्रचार किया है। वहाँ की जनता भारत के इन विचारों का सहर्ष स्वागत कर रही है। विदेशियों में हमारी विद्याएँ इतनी लोकप्रिय हों और हम उनके विषय में कुछ जानकारी न रखें, यह ठीक नहीं। हम अपनी सम्पत्ति को न जानें, न पहचानें, यह हमारे लिए लज्जा की बात होगी। मुझे पता है कि कितने ही भारतीय विद्यार्थियों से, जो यहाँ से उच्च अध्ययन के लिए विदेश गए, जब वहाँ के लोगों ने भारत के प्राचीन इतिहास, सांस्कृतिक सम्पत्ति और अध्यात्म विषयक प्रश्न पूछे तो उन्हें निरुत्तर रह जाना पड़ा। यह इसलिए कि उन्होंने भारत के प्राचीन गौरव का अध्ययन नहीं किया था। हमारे लिए यह शर्म की बात है कि हमारे जिन प्राचीन ग्रन्थों पर विदेशी विद्वान् रिसर्च कर रहे हैं और उनका लोहा भी मान रहे हैं, भारतीय सन्तानों को उनकी जानकारी ही नहीं।

सनातन हिन्दू धर्म ही योग है

पर अब जागने का समय आ गया है। आप लोग उठें और सचेत होवें। अन्धकार में कितने दिन रहोगे? हिन्दुस्तान के जागने का समय आ गया है। राजनैतिक स्वतन्त्रता काफी नहीं। विचारों की पराधीनता तो अभी भी है। जब तक हमारे आचार-विचार स्वतंत्र और स्वधर्म से प्रेरित नहीं होंगे, राजनैतिक मुक्ति होने से कुछ फायदा नहीं होगा। हमारा धर्म क्या कहता है, उसके अनुसार चलने पर ही हमारा वास्तविक कल्याण होगा।

एक बार गुरुदेव भागलपुर से धनबाद जा रहे थे। ट्रेन में उन्हें एक अंग्रेज रिसर्च स्कॉलर महोदय मिले। हाल ही में उन्होंने डॉक्टरेट ली थी। बातचीत के सिलसिले में वे बोले, 'I am proud that I am a Christian'. एक पश्चिमी देश का उच्चत्तम शिक्षा-प्राप्त व्यक्ति अपने को क्रिश्चियन और धार्मिक कहने में कितने गौरव का अनुभव करता है और हमारे बच्चे! थोड़ी-सी शिक्षा प्राप्त कर लेने पर अपने को हिन्दू कहने में शरमाते हैं। कितनी हीनता की भावना हम में भर चुकी है!

लेकिन भाई, दोष बच्चों का नहीं, वरन् माता-पिता व गुरुजनों का है। वे ही अपने आचार, विचार, संस्कृति और धर्म को भूलते जा रहे हैं। अपने बच्चों को वे अपने अज्ञान के कारण सन्तोषजनक उत्तर नहीं दे पाते, क्योंकि उन्होंने स्वयं अपने धर्मग्रन्थों का समुचित अध्ययन नहीं किया, आधुनिक युग की परिस्थितियों के अनुकूल उनका अर्थ नहीं जाना। केवल धर्मग्रन्थों का पाठ-मात्र काफी नहीं। रूढ़िगत उत्तरों से आज के जिज्ञासु बच्चों और विद्यार्थी-समाज को सन्तुष्ट नहीं किया जा सकता। दुनिया किस ओर जा रही है, इसका भी कुछ ख्याल रखना होगा, और उसी ढंग से अपने धर्म और प्राचीन गौरव को बच्चों के सम्मुख रखना होगा। तुलसी का महत्त्व क्या है, गंगाजल का महत्त्व क्या है, व्रत-त्यौहारों का महत्त्व क्या है—इन सब चीजों को ठीक ढंग से लोगों के सम्मुख रखना होगा। औषधि के रूप में, मेडिकल साइन्स के दृष्टिकोण से, लोकोपयोगिता, मनोविज्ञान, समाज-शास्त्र और अर्थशास्त्र इत्यादि विभिन्न दृष्टिकोणों से देखा जाय तो हमारे धर्म के तमाम नियमों का आधार वैज्ञानिक है और वे सामूहिक और व्यक्तिगत लाभ के दृष्टिकोण से बनाए गए हैं। उनके भीतरी तथ्य व वास्तविक रूप को जानकर हमें अपने ऋषि-मुनियों की दूरदर्शिता, सूझ-बूझ व विचारशीलता पर चकित रह जाना पड़ता है।

कल का फैशन

आज आप लोगों ने फैशन चलाया है नास्तिकता का, पर मैं कहती हूँ कि अब समय आ गया है जब आस्तिकता को ही फैशन माना जायेगा। लोग अपने आपको धार्मिक कहने में गौरव का अनुभव करेंगे। क्यों? क्योंकि धर्म का अर्थ वास्तव में है जीवन की पद्धति अर्थात् जीने की कला। हमारा सनातन हिन्दू धर्म हमें जीवन की एक पद्धति प्रदान करता है। सब धर्मों में सनातन

धर्म ही एक ऐसा धर्म है, जो बड़ी-बड़ी राजनैतिक आँधियों और ऐतिहासिक तूफानों के बावजूद भी टिका है। इसके टिक सकने के पीछे कौन-सी शक्ति है, इस पर आपने कभी विचार किया? कभी अपने घर में गड़ी धनराशि को आपने पहचानने का प्रयत्न किया? आज दो-चार पुस्तकें लिखने वालों पर आप रिसर्च करते हैं, समाज-सुधार के दो-चार कार्य कर देने पर अभिनन्दन-ग्रन्थ लिखते हैं, पर जो अमूल्य ज्ञान हमारे ऋषि-मुनि हमारे लिए छोड़ गए हैं, उनको कभी आपने श्रद्धांजलि दी? मनुष्य जाति पर असीम उपकार करने वाले उन युगद्रष्टा और सिद्ध महात्माओं के विषय में हमने कोई खोज की? गोरक्षनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, घेरण्ड मुनि या महर्षि पतञ्जलि के विषय में क्या प्रत्येक हिन्दू को जानकारी है? भारतीय विद्यार्थी पूर्वी और पश्चिमी बुद्धिवादियों की पूजा करते हैं, पर परम ज्ञान देने वाले ऋषि-मुनियों के विषय में अधूरा ज्ञान भी नहीं रखते।

आप लोग पश्चिम वालों को ही आदर्श मानते हो। उनकी तमाम चीजों की नकल करते हो तो फिर उनकी अच्छाइयों की नकल क्यों नहीं करते? उनमें जो आत्म-गौरव और आत्म-विश्वास पाया जाता है, उसे क्यों नहीं अपनाते? एक अमेरिकन जियोलौजिस्ट को मैंने यह कहते हुए सुना कि दुनिया पाँच हजार वर्ष पूर्व बनी है, क्योंकि बाइबिल में ऐसा लिखा हुआ है। हर एक क्रिश्चियन अपने धर्म और अपने धर्मग्रन्थ के प्रति कितनी श्रद्धा रखता है। आज हम सभी जानते हैं कि जीवनशास्त्र और भूगर्भशास्त्र के अनुसार इस दुनिया को बने कई अरब वर्ष बीत चुके हैं। फिर भी, एक विद्वान् क्रिश्चियन धर्मविश्वासों का विरोध नहीं करता, क्योंकि उसके धर्मग्रन्थ का यह वाक्य है और यह वाक्य परमेश्वर का है। आपने अंग्रेजों की पोशाक अपनाई तो उनकी धर्म-भक्ति, श्रद्धा, ईसा मसीह व उनकी शिक्षाओं के प्रति प्रेम को क्यों नहीं अपनाते? जैसी उनकी अपने धर्म में श्रद्धा है, वैसी हम अपने धर्म में रखें तो नि:सन्देह परम कल्याण होगा।

सनातन हिन्दू धर्म

सनातन धर्म की शालीनता, वैज्ञानिकता और सत्यता के विषय में यदि चर्चा उठाऊँ तो घण्टों का समय लग जायेगा। हिन्दू धर्म दुनिया का सबसे प्राचीन व विशाल धर्म है। केवल धर्म-ग्रन्थ उसका आधार नहीं। सनातन धर्म से यदि सभी ग्रन्थों को हटा दिया जाय तो भी इसको कोई नुकसान नहीं होगा। यदि इसकी

सारी-की-सारी पुस्तकें विलुप्त कर दी जाएँ तो भी यह जीवित रहेगा। क्यों? यह सनातन धर्म है, युग-युग का धर्म है, आत्म-धर्म है। यहाँ की अध्यात्म-विद्या सम्प्रदायवाद नहीं। हिन्दू धर्म का प्रवर्त्तक कोई मनुष्य नहीं था। इसकी स्थापना करने वाला कोई एक सम्प्रदाय नहीं था। यह करुणामय ऋषि-मुनियों की शिक्षाओं वाला धर्म है। यह युगद्रष्टाओं द्वारा, जिनके सम्मुख पूर्वापर के पृष्ठ खुले रहते थे, प्रतिपादित सत्य का दर्शन है। यह कोई मत या सम्प्रदाय नहीं, जीवन-धर्म है। इसीलिए इसे 'मानव धर्म' भी कहा जा सकता है।

उदाहरणार्थ, यदि गंगा जी में मुसलमान अथवा ईसाई भी नित्य स्नान करें तो उन्हें वही लाभ होगा, जो हिन्दू को स्नान करने से होगा। गंगा का जल कीटाणुनाशक है व उसकी तरंगों में रेडियोएक्टिविटी भी है। तुलसी का भी महत्त्व है। मुसलमान हो या क्रिश्चियन, कोई भी तुलसी के पौधों को लगायेगा और उसके पत्तों का सेवन करेगा तो उसे वही लाभ होगा, जो हिन्दुओं को होता है। हिन्दू धर्म एक ऐसा धर्म है जो मानवमात्र के लिए लाभदायक व उपयोगी है। हिन्दू धर्म के सर्वांगीण पहलुओं की चर्चा यहाँ नहीं करूँगी, पर इतना आप जरूर याद रखें कि इस जीवन को यूँ ही वृथा नहीं खोना है। जीवन अमूल्य है। इसका सदुपयोग करें। जीवन का लक्ष्य पहचानें। धर्म हमारे पथ-प्रदर्शन का कार्य करेगा।

ईश्वर है

सन्त एवं शास्त्र कहते हैं कि जीवन का परम लक्ष्य ईश्वर-प्राप्ति याने ईश्वर को जानना है, पर वास्तव में ईश्वर क्या है? वह साकार है या निराकार? उसे जानने अथवा पाने का मार्ग क्या है? ये प्रश्न मानव-मस्तिष्क में स्वभावत: उठते हैं। मनुष्य इनका समाधान चाहता है। ईश्वर है या नहीं, इस पर काफी मतभेद है, किन्तु धर्म को चुनौती देने वाला विज्ञान भी आज अदृश्य सत्ता एवं शक्ति को मानता है। साइन्स भी अब यह दावा नहीं करता कि वह अन्तिम सत्य को जान चुका है। बड़े-बड़े वैज्ञानिकों, विद्वानों एवं राजनीतिज्ञों ने ईश्वर की सत्ता को कबूल किया है। विज्ञान से उस अदृश्य शक्ति का अस्तित्व सिद्ध ही होता है। आधुनिक युग के सबसे बड़े वैज्ञानिक आइन्स्टाइन ने भी ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार किया है।

यह सारी सृष्टि चमत्कारों से पूर्ण है। प्रत्येक वस्तु ईश्वरीय अस्तित्व का प्रमाण है। मनुष्य ने शरीर के एक-एक अंग के तत्त्वों व कार्यों को जान लिया

है, अणु-परमाणु तक का ज्ञान प्राप्त कर लिया है, किन्तु फिर भी वह मरे हुए व्यक्ति को पुनर्जीवित नहीं कर सकता। ईश्वर की शक्ति व महिमा का पार मनुष्य नहीं पा सकता। ईश्वर साकार है अथवा निराकार? इस विषय में भी उसको केवल साकार कह देना या केवल निराकार कह देना ठीक नहीं। वस्तुत: ईश्वर साकार और निराकार दोनों ही है। भक्तों की प्रसन्नता के लिए वह साकार बनता है, पर वह निराकार भी है। अनन्त शक्ति वाले ईश्वर में क्या साकार रूप धारण करने की शक्ति नहीं? अन्यथा वह सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान कैसे कहलाता?

ईश्वर साकार भी है और निराकार भी; एक भी है, अनेक और अनन्त भी; किन्तु ईश्वर के अस्तित्व को सिर्फ मान लेना भर काफी नहीं। कुछ दिव्य-सम्पदा को जीवन में धारण भी करना चाहिए। सब लोगों को मैं संन्यासी बनने को नहीं कह सकती, किन्तु जीवन में कुछ नियमों को व्यवहार में लाने को जरूर कह सकती हूँ। आपको अपने जीवन में कुछ सिद्धान्त बनाने चाहिए और उन सिद्धान्तों पर भरसक चलने का प्रयत्न करना चाहिए। कुछ नियम जीवन में बनाएँ और उन पर अमल करें। उदाहरणार्थ आपको प्रात: 4 बजे उठने का नियम रखना चाहिए। जीवन में अपनाने और अमल करने की ऐसी ही दो-चार बातें मैं बतलाऊँगी।

धर्म की विशालता

प्रात: उठने पर पहला शब्द हरिनाम हो। नित्य प्रात: स्वास्थ्य के लिए दो-चार आसन करने का नियम रखो। एक-दो प्राणायाम भी करो। कुछ देर कीर्त्तन व भजन भी भक्ति-भाव से करो। भजन करने से मन साधना के लिए तैयार हो जाता है, फिर कुछ देर इष्ट व गुरुदेव का ध्यान करो। प्रात: ताम्रपात्र का जल पीना एवं स्नान के बाद तुलसी के पत्ते खाना स्वास्थ्य के लिए अच्छा है। गुरुजनों में भक्ति रखना न छोड़ो। मन्दिरों में भी जाना न छोड़ो।

अपने धर्म को भूलने में हमारा गौरव नहीं। गौरव उसके पालन में है। हमारी धार्मिक परम्पराएँ बड़े महत्त्व की हैं। उनका सामाजिक और व्यक्तिगत महत्त्व दोनों है। धर्म की विशालता का एक उदाहरण साकार और निराकार उपासना-विधि है। आपको मूर्तिपूजक भी मिलेंगे और निरीश्वरवादी भी। देवों की भी उपासना होती है और देवियों की भी। द्वैतवाद भी है और अद्वैतवाद भी। प्रभु के साथ अनेक भाव रखकर उपासना की जा सकती है।

साधना की अनेक पद्धतियाँ और चित्त को एकाग्र करने के अनेक साधन आपको मिलेंगे। ऐसा प्रजातान्त्रिक धर्म अन्य कहीं आपको नहीं मिलेगा। इसमें सभी विचार वालों के लिए स्थान है। कोई हनुमान का उपासक है तो कोई महेश्वर का। कोई देवी का उपासक है तो कोई शिव का। कोई कृष्ण के बाल रूप का ध्यान करता है तो कोई उनके विराट् रूप का। कोई बिन्दु पर ध्यान करता है तो कोई ॐ पर। कोई नाद का अनुसन्धान करता है तो कोई त्राटक योग साधता है। कोई मंत्रयोग की साधना करता है तो कोई अष्टांगयोग की। इतना व्यापक धर्म है हिन्दू धर्म कि इसका पार कोई नहीं पा सकता। ज्योतिषशास्त्र, न्यायशास्त्र, अर्थशास्त्र, आयुर्वेद इत्यादि इसके अलग-अलग अंग हैं। ये सब हमारे हिन्दू धर्म के ही अंग हैं। चार वेद, अठारह पुराण और स्मृतियाँ तथा उपनिषद् इत्यादि का अक्षय भण्डार भरा है इस धर्म में। कहाँ तक मैं आपको गिनाऊँ। आप कुछ पाना चाहते हों तो उसमें गहरी डुबकी लगाइए और आपको मैं विश्वास दिलाती हूँ कि जो खोजेगा वह अवश्य पायेगा।

हिन्दू धर्म सामाजिक धर्म है। यह मत और सम्प्रदाय नहीं। मानव जीवन की तमाम समस्याओं का समाधान आप इसमें पायेंगे। हर प्रकार का ज्ञान इसमें है और वे सब हिन्दू धर्म के ही अंग हैं। गणित, ज्योतिष, लोकनीति, राजनीति, अध्यात्म, परमार्थ, स्वास्थ्य—सभी विषयों पर अच्छे-से-अच्छे ग्रन्थ मौजूद हैं। यहाँ तक कि आधुनिक विज्ञानों का भी उल्लेख हमारे ग्रन्थों में है। समझने वाले उसे समझते हैं।

अत: मेरा कहना आपसे यही है कि आप अपने धर्म को अपने साथ ले चलो। सुख, शान्ति और सफलता का यही रास्ता है। अपने धर्म की शिक्षाओं पर अमल कर देखो कि उनका क्या फायदा है। हिन्दू धर्म अगाध समुद्र है। डुबकी लगाने पर ही गहराई और रत्नों का पता चलेगा।

हिन्दू धर्म में ईश्वर-प्राप्ति को जीवन का लक्ष्य माना गया है क्योंकि वही परम सत्य है। इसे न मान कर जो व्यक्ति सांसारिक वस्तुओं को ही पाना अपना लक्ष्य समझ लेता है, वह अपने लिए दु:खों का बीज बोता है। संसार से उसे सुख भी मिलता है और दु:ख भी। संसार में जमकर वह सुख-दु:ख की आँखमिचौली खेलता रहता है, किन्तु संसार के वही कर्म जब ईश्वर-निमित्त मानकर किए जाते हैं तो उनसे प्राप्त सुख व दु:ख उसे व्याप्त नहीं करते। वह कर्मों का अकर्त्ता बन जाता है। इस भाव से जब वह सारे कर्म

करने लगता है तो उससे वही कर्म होते हैं जो ईश्वरीय इच्छा के अनुकूल होते हैं।

हिन्दू धर्म कर्मों का त्याग करने को नहीं कहता। वह कहता है कि कर्म करो, किन्तु कर्त्ता स्वंय न बनो। यदि कर्त्ता भी बनो तो भोक्ता मत बनो। संसार में कर्म करते हुए भी उसके प्रभावों से अपने को निर्लिप्त रखो। संसार में उसी तरह रहो, जैसे कमल का पत्ता जल में रहता है या जैसे नाव नदी पर रहती है अथवा जैसे मकड़ी जाले को बुनती हुई भी उसमें नहीं फँसती। आज संसार के मनुष्यों की गति रेशमी कीड़ों की भाँति है, जो अपने ही बनाए जाल में खुद फँस जाते हैं।

अत: मैंने कहा कि सनातन हिन्दू धर्म की शिक्षाओं का जीवन में पालन करने से आपको सुख, शान्ति और सफलता प्राप्त होगी। इसलिए उन पर मनन करो और सत्य तक पहुँचने की चेष्टा करो। यही एक ऐसा धर्म है, जिसमें मनुष्य जाति की तमाम समस्याओं का निदान मौजूद है। यह एक विशाल, व्यापक और मानवीय धर्म है तथा सुखी और आनन्दमय बनने का मार्ग है। विश्व के अन्य किसी धर्म में इतना व्यापक दृष्टिकोण नहीं पाया जाता। यह धर्म सब धर्मों का जनक है। इस धर्म की न तो स्थापना हुई और न प्रचार ही।

मैं आपको केवल यही बतलाना चाहती हूँ कि धर्म के प्रति आप लोगों में जो अश्रद्धा है, उसे दूर करें। कुहरा छा जाने से आकाश नहीं दिखता, किन्तु कुहरा हमेशा नहीं रहता। अब आप अपने धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझिए। राजनैतिक और सामाजिक परिस्थितियाँ बहुत बदल चुकी हैं लेकिन सत्य का स्वरूप सदा एक होता है। सत्य वही है जो तीनों कालों में एक-सा रहे। जीवन का लक्ष्य सनातन सत्य का आत्म-साक्षात्कार है। इस आत्म-साक्षात्कार के बिना दुनिया की सभी विद्याओं का ज्ञान बेकार है। दुनिया की विद्याएँ सीमित और उनके वरदान भी सीमित हैं, पर आत्मविद्या का क्षेत्र असीमित और वरदान भी असीमित हैं।

व्यावहारिक धर्म

मैंने बहुत पहलुओं से अध्यात्म के स्वरूप को समझाने का प्रयत्न किया, पर अध्यात्म अगाध रत्नसमुद्र है। यह प्रिज़्म की तरह है। हर दृष्टिकोण से आपको एक नया ही नजारा दिखेगा। अत: मैं यह आवश्यकता महसूस करती हूँ कि

अध्यात्म के साथ-साथ कुछ ऐसी बातें सिखाई जावें जिनसे मनुष्यों की कुछ व्यावहारिक भलाई हो सकेगी। मैंने कुछ भ्रमण किया है। भ्रमण में मैंने यह पाया कि सभी मनुष्य दु:खी हैं। कोई-न-कोई दु:ख, कोई-न-कोई शारीरिक अथवा मानसिक कष्ट उन्हें है। अध्यात्म की ओर वे तभी जा सकते हैं, जब उन्हें तात्कालिक दु:ख से छुटकरा मिले। अधिकतर लोग रोग से पीड़ित हैं। उनका शरीर अस्वस्थ रहता है और उससे मन भी अस्वस्थ रहता है। मैं यह भी मानती हूँ कि शारीरिक रोग अधिकतर मानसिक कारणों से होते हैं और उन्हें साइकोलौजिकल हीलिंग की आवश्यकता है।

रोगों के कारण

रोगों के कारण तो अनेक हैं। अनियमित खान-पान और रहन-सहन से तो रोग होते ही हैं, पर कुछ रोग अनुवांशिक, कुछ संसर्ग-जनित और कुछ अज्ञात कारणों से होते हैं। मेरे पास तीनों प्रकार के रोगी आते हैं—शारीरिक रोगी, मानसिक रोगी और आध्यात्मिक रोगी। मैं सबको आसन करने की सलाह देती हूँ। वे आसन करते हैं और चंगे हो जाते हैं। गुरुदेव कई वर्षों से आसन सिखाते आ रहे हैं और मैंने देखा है कि आसनों से सबको बेहद लाभ हुआ है। असाध्य रोगों को भी आसनों से मैंने अच्छा होते देखा है। इसलिए स्वास्थ्य के लिए सबको आसन करना चाहिए। आसनों द्वारा मानसोपचार भी होता है।

बहुत-से रोगों के कारण मनोवैज्ञानिक होते हैं। डॉक्टर भी रोगी को आश्वासन, सान्त्वना, सहानुभूति और दवाइयों का फायदा बतला कर रोगी के मन को स्वास्थ्यवर्धक संस्कार देते हैं और इस प्रकार दवाओं के साथ मानसिक उपचार भी जोड़ते हैं। सफल डॉक्टर वही होते हैं जो रोगी की शारीरिक जाँच के साथ-साथ उसकी मानसिक स्थिति का भी अध्ययन करते और यथोचित व्यवहार करते हैं। यह बिल्कुल सही है कि यदि रोगी का चिकित्सक में विश्वास हो तो चिकित्सक के हाथ से दिया हुआ मामूली जल भी दवा का असर ला सकता है। रोगी का आत्म-विश्वास यदि जग जाय तो वह अपने को स्वयं ही अच्छा कर सकता है।

अध्यात्म चिकित्सा

डॉक्टरों की भाँति हम साधु भी लोगों के रोगों का उपचार करते हैं। मैं यहाँ एलोपैथिक डॉक्टरों की advertising agent नहीं, वरन् अध्यात्मपैथी या

अध्यात्मोपचार की एजेन्ट हूँ। मैं आपको spiritual treatment बतला रही हूँ। अपनी बीमारियों को मनुष्य स्वयं भी अच्छा कर सकता है, उन्हें विकट रूप धारण करने से रोक सकता है और उनके आने का दरवाजा बन्द कर सकता है। बीमारियाँ किसी को अच्छी नहीं लगती, किन्तु अनजाने में मनुष्य उन्हें निमन्त्रण देता है और उनके लिए प्रवेश द्वार खुला रखता है। प्राय: मैंने देखा है कि जो अपने स्वास्थ्य के विषय में अत्यधिक सचेत एवं भयभीत रहते हैं, उन्हें बीमारियाँ जल्दी धर दबाती हैं। रोगों का भय और रोगों का चिन्तन हमारी मानसिक शक्ति को दुर्बल करता है और बीमारियों को जन्म देता है। यदि मनुष्य की मानसिक शक्ति प्रबल हो तो मनुष्य स्वयं बीमारियों को अच्छा कर सकता है। कम-से-कम उनके आक्रमण से तो अपने को बचा ही सकता है।

मानसोपचार

अत: मैं आपसे यही कहूँगी कि आप अपनी 'सोई हुई शक्ति' को जगाइए। स्वास्थ्य ही सबसे अमूल्य वस्तु है। मनुष्य का तीन प्रकार का स्वास्थ्य होता है—शारीरिक, मानसिक और आत्मिक। सिर्फ शरीर ही हृष्ट-पुष्ट रहे यह काफी नहीं। मन का भी स्वस्थ रहना आवश्यक है। अधिकांश बीमारियाँ मानसिक सन्ताप से होती हैं। हिस्टीरिया, इन्सौम्निया, पागलपन इत्यादि बीमारियों का कारण मन का विक्षिप्त रहना है। बीमारियों के बढ़ने और घटने में भी मन का बहुत बड़ा हाथ रहता है। बहुतेरी बीमारियों के शुरू होने का कारण मन के अन्दर छिपा हुआ भय रहता है।

उदाहरण के लिए, यदि आपके मन में यह भय है कि कदाचित् मुझे ठण्ढ लग जाए तो आपको अवश्य सर्दी लग सकती है। लेकिन मन में दृढ़ता लाकर यदि कोई कठिन कार्य भी किया जावे तो उसमें सफलता मिल जाती है। मन शक्ति का स्रोत है। इस शक्ति को जिधर चाहें हम लगा सकते है। यह हमें स्वस्थ करने की ताकत रखती है तो बीमार करने की भी ताकत इसमें है। मन में सृजनात्मक शक्ति भी है और विनाशकारी शक्ति भी। मन की इस शक्ति को आप पहचानिए। उसका प्रयोग कीजिए। स्वास्थ्य से मन का घना सम्बन्ध है। बीमारियों पर मानसिक चिन्ता व विश्वास का प्रभाव पड़ता है। इसीलिए मैं कहती हूँ कि आरोग्य के लिए सर्वप्रथम मानसिक स्वस्थता आवश्यक है। शरीर तभी स्वस्थ रहेगा जब मन विकार-रहित और सबल रहेगा।

आत्मिक स्वास्थ्य

मानसिक स्वास्थ्य की ही भाँति आत्मिक स्वास्थ्य भी अति आवश्यक है। भरपेट भोजन व आराम का जीवन ही मनुष्य की आत्मा की प्यास नहीं मिटा सकते, लेकिन हाँ, आत्मिक स्वास्थ्य के लिए निरोग शरीर की आवश्यकता पहली है।

सरकार अपराधों का पता लगाने के लिए सी.आई.डी. (C.I.D.) अर्थात् 'क्राइम इन्वेस्टिगेटिंग डिपार्टमेंट' खोलती है, लेकिन मैं लोगों को एस. आई.डी. (S.I.D.) 'सेल्फ इन्वेस्टिगेटिंग डिपार्टमेंट' खोलने की राय देती हूँ। आप लोग जब तक ऐसा नहीं करोगे, आपको रास्ता नहीं मिल सकेगा। जब मनुष्य अपनी कमजोरियों को खोजता है और उन्हें दूर करने के लिए तत्पर होता है, तभी उसे रास्ता मिलता है। यदि आप अस्वस्थ रहते हों तो पहले उन कारणों की तलाश कीजिए, जिनसे आप अस्वस्थ रहते हैं। चेतन मन और अचेतन मन, दोनों में तलाशिए। आत्म-विश्लेषण कीजिए, सेल्फ एनालिसिस कीजिए।

दुनिया में जिधर देखो, दु:ख ही दु:ख नजर आता है। किसी को शान्ति और आराम नहीं। सारा जगत् देहिक, दैविक और भौतिक तापों से तप रहा है। मैंने पहले बतलाया कि आसनों से लोगों को काफी फायदा पहुँचता है। मानसिक और आध्यात्मिक उपचार इनसे किए जा सकते हैं। प्रत्येक मनुष्य के अन्दर 'शक्ति' सोई हुई है, जिसे यदि किसी माध्यम से जागृत कर दिया जाय तो मनुष्य अधिक शक्तिवान् बन सकता है। यह शक्ति आत्म-शक्ति है। योग-शास्त्रों में इसका नाम 'कुण्डलिनी शक्ति' है। इस शक्ति का केन्द्र-स्थल मूलाधार चक्र है। मूलाधार के अतिरिक्त अन्य कई चक्र भी हैं, जो अभी तक निश्चल हैं। योगासनों और यौगिक क्रियाओं से उन्हें चालित किया जा सकता है। ऐसा योगशास्त्रों में लिखा भी है पर 'कुण्डलिनी शक्ति' का रास्ता सबके लिए नहीं। यह केवल उसी के लिए है, जिसे गुरु इस मार्ग में दीक्षित करे।

योगासन

चालीस-पचास वर्ष पूर्व आसनों का इतना अधिक प्रचार नहीं था। लोग यही जानते थे कि आसन गृहस्थों को नहीं करने चाहिए, किन्तु हाल के प्रयोगों से यह सिद्ध हो चुका है कि आसनों को प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है, चाहे युवा हो या वृद्ध, स्त्री हो या पुरुष। लड़के और लड़कियाँ सभी कर सकते हैं।

योगासन हमारे पूर्वजों की अपूर्व देन हैं। ऋषि-परम्परा से ये चले आ रहे हैं। योग के आठ अंग माने जाते हैं। उनमें एक अंग आसन का माना जाता है। योगासन पर अनेक प्राचीन ग्रंथ उपलब्ध हैं, जैसे घेरण्ड संहिता, हठयोग प्रदीपिका, गोरक्ष संहिता इत्यादि। इन ग्रन्थों में योगासनों व तत्सम्बन्धी क्रियाओं का अनुभूत वर्णन मिलता है।

योगासनों के विषय में शास्त्रों में ऐसा उल्लेख है कि जितनी योनियाँ होती हैं, उतने आसन होते हैं, अर्थात् 84 लाख आसन हैं। पर ग्रन्थों में चौरासी मुख्य आसनों का ही विवरण मिलता है। उनमें भी वही मुख्य तेंतीस आसन, जो मनुष्यों के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं, उन्हीं का वर्णन मिलता है। प्रत्येक मनुष्य को सब आसनों का अभ्यास प्रतिदिन करना आवश्यक नहीं। जो अपने स्वास्थ्य की रक्षा के लिए आसन करना चाहते हैं, उनके लिए आसनों का 10-12 मिनट अभ्यास काफी है। जो बीमारियों के निवारण के लिए आसन करना चाहते हैं, वे एक या दो आसन अपने लिए चुनें और उनका अभ्यास प्रतिदिन 8-10 मिनट तक नियमित रूप से करें तो पूर्ण लाभ होगा।

आसन निषेधात्मक, उपचारात्मक एवं स्वास्थ्यवर्धक होते हैं। बीमारियों को रोकना, उनका उपचार करना और शरीर को स्वस्थ बनाए रखना—ये त्रिगुणात्मक पक्ष हैं आसनों के। ये तो हुए शरीर के लिए। आसनों का मन पर भी काफी प्रभाव पड़ता है। इनसे मन सूक्ष्म होता है, एकाग्रता की शक्ति बढ़ती है और विचारों पर नियन्त्रण-शक्ति प्राप्त होती है। मन विचारों की प्रोडक्शन कम्पनी है और आसन मन के ऊपर रेगुलेटर का कार्य करते हैं, याने विचारों पर कन्ट्रोल लगाते हैं। आसनों द्वारा अध्यात्मोपचार भी होता है। जिसने योग-साधना द्वारा अपनी आत्मिक शक्ति बढ़ाई है, वह आसनों से spiritual healing कर सकता है। आसन आत्म-जागृति के साधन भी हैं। आप इनके महत्त्व को यदि ठीक-ठीक समझ लें तो इनसे बहुत फायदा उठा सकेंगे।

योगासन और व्यायाम

मनुष्य का शरीर एक यन्त्र है। इसके पुर्जों को यदि घुमाया-फिराया न जाए तो वे जंग खा जायेंगे। इनमें भी सफाई करने और तेल देने की आवश्यकता होती है। शरीर के सभी बाह्य व आन्तरिक अंगों को बराबर चलाया न जाय, प्रयोग में लाया न जाय तो उनमें जकड़न पैदा हो जाती है। वे कुछ समय बाद अशक्त होकर खराब हो जाते हैं। इसलिए शरीर के तमाम यंत्रों और अंगों का व्यायाम

होना चाहिए। अन्य व्यायामों से भी मनुष्य को लाभ प्राप्त होता है, किन्तु कई दृष्टिकोणों से साधारण शारीरिक व्यायामों से योगासन कहीं अधिक उपयोगी व लाभदायक हैं। व्यायाम और खेलों का अपना महत्त्व है, किन्तु उनसे कुछ त्रुटियाँ होती हैं। योगासन उनकी पूर्ति करते हैं।

व्यायामों से केवल मांसपेशियाँ पुष्ट होती हैं। कुछ खेल और व्यायाम ऐसे हैं, जो शरीर के किसी विशेष अंग को ही पुष्ट बनाते हैं। पुन: इन व्यायामों से शरीर के आन्तरिक यंत्रों का व्यायाम नहीं होता। व्यायाम शरीर की आन्तरिक क्रियाओं का समुचित नियंत्रण नहीं करते। कभी-कभी यह भी पाया गया है कि व्यायामों और खेलों से शरीर के किसी यंत्र को नुकसान भी पहुँचा है।

हमारे शरीर के अन्दर कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थियाँ हैं, जैसे पिट्यूटरी, थाइरॉइड, एड्रीनल इत्यादि। इनके कार्य बड़े महत्त्वपूर्ण होते हैं, यह सिद्ध हो चुका है। इन ग्रन्थियों से जो हॉर्मोन बनते हैं, वे शरीर के विकास को प्रभावित करते हैं। मनुष्य का स्वास्थ्य इन ग्रंथियों के उचित कार्य सम्पादन पर निर्भर करता है। व्यायामों में इन ग्रंथियों को सबल करने और इनके कार्यों को नियंत्रित करने का साइन्स नहीं है, किन्तु योगासनों का प्रभाव पूरे शरीर की मांसपेशियों, सन्धि-स्थानों, आन्तरिक यंत्रों, ग्रंथियों, स्नायु-मण्डल आदि सभी पर पड़ता है। आसनों पर विशेष अध्ययन और उनका अभ्यास करने पर आपको ये बातें समझ में आ जायेंगी।

योगासनों द्वारा शरीर के जोड़ों में रहने वाली वायु द्वारा उत्पन्न जकड़न भी मुक्त होती है। वायु की यह पकड़ यदि मुक्त न हो तो पीड़ा और अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। आसनों से सन्धि-स्थानों की यह जकड़न दूर होती है, तमाम स्नायुओं के तनाव दूर होते हैं, शरीर के सभी अंगों का कड़ापन दूर किया जाता है। यदि शरीर के इन विकारों को दूर नहीं किया गया, तो यही रोग का रूप धारण कर लेते हैं। शरीर के अन्दर पाचन-संस्थान, रक्त-संचारण-संस्थान, श्वास-संस्थान, सन्धि-संस्थान, स्नायु-संस्थान आदि संस्थानों का योगासनों द्वारा व्यायाम और उनके कार्यों का सुसंचालन होता है।

कौन से आसन करें?

वैसे आसन तो सभी लाभदायक हैं, किन्तु प्रत्येक आसन हर व्यक्ति नहीं कर सकता। हर एक के लिए आसन अलग-अलग होते हैं। किसके लिए कौन-सा आसन उपयुक्त होगा, इसका निश्चय कई बातों को ध्यान में रख कर करना

उचित है। व्यक्ति की आयु, उसके शरीर की बनावट, रोग और मानसिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए उसे आसन बताना व सिखाना चाहिए। शरीर दुबला है या मोटा, शरीर में कड़ापन है या लचीलापन, रोग है या नहीं इत्यादि बातों को ध्यान में रखकर उसके योग्य आसन बतलाने चाहिए।

आजकल कुछ ऐसी बीमारियाँ निकली हैं, जिनमें आसन और व्यायाम दोनों वर्जित हैं, जैसे रक्तचाप और हृदय-रोग, किन्तु ऐसे लोगों के लिए भी एक आसन है। यहाँ मैं केवल एक ही, और ऐसा ही आसन बतलाऊँगी, जिसे सभी लोग कर सकें और जिसके करने से सभी आसनों का फायदा प्राप्त हो। कुछ लोग अपने शरीर की सख्ती के कारण, कुछ लोग अपने मोटापे के कारण, कुछ लोग अपने अनावश्यक रूप से बढ़े हुए पेट के कारण और कुछ लोग शारीरिक दुर्बलता के कारण मुश्किल आसनों को करने में असमर्थ रहते हैं। दीर्घकाल से लोगों को आसन सिखाते रहने से मेरे गुरुदेव को आसन सिखलाने में जो कठिनाइयाँ पड़ती हैं, उनका पूरा ज्ञान है। इसीलिए एक नए आसन का प्रावधान उन्होंने किया हैं, जिससे ऐसे व्यक्तियों को भी, जो अन्य आसनों को नहीं कर सकते, आसनों का पूरा-पूरा फायदा पहुँच सके। मैंने भी आसनों पर काफी खोज की है, और कुछ वर्षों से इस नए पवनमुक्तासन को लोगों को कराते आ रही हूँ। इससे लोगों को काफी लाभ मिला है।

गुरु की योग्यता

आसनों का प्रयोग therapy के रूप में किया जा रहा है और इसके लिए एनाटौमी और फिज़िओलौजी का ज्ञान आवश्यक है। आसनोपचार वे ही कर सकते हैं जिन्हें शरीर-विज्ञान का प्रत्यक्ष ज्ञान हो और साथ-साथ जिन्होंने स्वयं भी आसनों का अभ्यास कर उनके प्रभाव को अनुभव से जाना हो। इसीलिए आप आसन उन्हीं से सीखिए, जिन्होंने आसन सिखाने के दृष्टिकोण से भी उनका अभ्यास व अध्ययन किया हो।

पवनमुक्तासन एक सरल व श्रेष्ठ आसन है और करने में बहुत सरल है। इसमें अनेक क्रियाएँ हैं, जिन्हें मैं क्रमवार समझाऊँगी।

पवनमुक्तासन

हमारे शरीर के तमाम हिस्सों में वायु से उत्पन्न बन्धन हैं, जिन्हें पवनमुक्तासन की क्रिया मुक्त करती है। इसीलिए इसे मैंने पवनमुक्तासन ही कहना ठीक

समझा। शरीर के सन्धि-स्थलों पर वायु के प्रकोप को मुक्त न करने पर अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। जोड़ों के अतिरिक्त आँतों में भी दूषित वायु का प्रकोप होता है, जिसे बाहर निकालना अत्यन्त आवश्यक है। पेट में वायुगोले की शिकायत प्राय: सुनने में आती है। गठिया का रोग भी वायु के प्रकोप के कारण होता है। वातरोग का यही कारण है।

पवनमुक्तासन से शरीर की जकड़न व तनाव दूर होते हैं। आजकल नौकरी-पेशे वाले काम कुछ इस तरह के हो गए हैं, जिनमें व्यक्तियों को लगातार आठ-आठ, दस-दस घण्टों तक एक ही प्रकार का कार्य करना पड़ता है, जिससे उनके किसी अंग विशेष पर अत्यधिक जोर पड़ता है। अन्य अंगों की अवहेलना होती है तथा अंग विशेष पर अत्यधिक बोझ हो जाता है। कुर्सी पर बैठकर कार्य कर रहे हैं तो घण्टों एक ही अवस्था में बैठकर कार्य करना पड़ता है। लिखने का कार्य है तो घण्टों एक ही हाथ को श्रम करना पड़ता है। खड़े होकर कार्य करना है तो घण्टों खड़े ही रहते हैं। खड़े होकर काम करने वाले प्रोफेसरों, डॉक्टरों और वकीलों के पैरों के हैमस्ट्रिंग्स सख्त हो जाती हैं, बाद में वे जमीन पर बैठने में असमर्थ हो जाते हैं। इसलिए ऐसे सभी लोगों को मेरी सलाह है कि वे पवनमुक्तासन अवश्य करें।

इस आसन में कई क्रियाएँ हैं। प्रत्येक को करने में कुछ सेकेण्ड लगते हैं। पूरा कोर्स करने में केवल 12-15 मिनट लगेंगे।

पवनमुक्तासन की विधि

पहले साफ जमीन पर चौपरत कम्बल बिछा लीजिए और पैर फैला कर बैठ जाइए। अब करना प्रारम्भ कीजिए।

क्रिया 1—हाथों को या तो अपनी जाँघ पर रखिए अथवा अपने बगल में जमीन पर हथेलियों के बल। पहले पैरों की उँगलियों का व्यायाम होगा। दोनों पैरों को सटा कर रखिए। अब दोनों पैरों की उँगलियों को एक साथ आगे-पीछे तानिए। पैर नहीं हिलेंगे सिर्फ उँगलियों का चालन कीजिए। 12-15 बार ऐसे ही कीजिए।

क्रिया 2—दोनों पैरों को थोड़ा अलग कर लीजिए। दोनों के बीच एक फुट का फासला रखिए। अब दाहिने पैर के पंजे को गोलाकार घुमाइए। केवल टखनों के पास से पंजे घूमेंगे। पूरा पैर स्थिर अवस्था में रहेगा। 8 से 10 बार गोलाकार घुमाइए। दाहिने पैर के बाद बाएँ पैर के पंजे को इसी भाँति

गोलाकार 8-10 बार घुमाइये। पुन: दोनों पैरों के पंजों को एक-साथ, पहले दाहिने से बाएँ घुमाइए फिर बाएँ से दाहिने दस-दस बार।

क्रिया 3—पूर्वावस्था में ही पैर फैलाकर बैठे रहिये। अब दाहिना पैर मोड़कर खड़ा कर लीजिये। दोनों हाथों से अपने दाहिने पैर को जाँघों के पास पकड़ कर पेट की ओर दबाए रखिये। तत्पश्चात् घुटनों के पास से साइकिल चलाने की क्रिया की तरह सिर्फ दाहिने पैर को आगे व पीछे घुमाएँ दस बार।

अब बाएँ पैर को पहली कही हुई विधि के अनुसार मोड़कर खड़ा कर लीजिये। दोनों हाथों से जाँघों को उँगलियों के गठबन्धन से पकड़ कर पेट की ओर दबा लीजिये और बाएँ पैर से साइकिल चलाने की क्रिया कीजिये। यह आपके घुटनों को सबल एवं पुष्ट बनाने का आसन है।

क्रिया 4—पूर्व की तरह ही पैर फैलाकर बैठो। पैरों की भाँति हाथों को भी पैरों के समानान्तर अपने सामने फैलाकर रखो। हाथ हवा में तने रहेंगे। अब उँगलियों से मुट्ठी बाँधने और खोलने की क्रिया 10-12 बार दुहराइये। इस क्रिया से उँगलियों के सन्धि-स्थानों की सफाई होती है।

क्रिया 5—चौथी क्रिया की ही अवस्था में बैठे रहिये। उँगलियों को बन्द कर दोनों हाथों की मुट्ठी बाँध लीजिये। दोनों मुट्ठियों को साथ-साथ गोलाकार पहले दाहिने से बाएँ घुमाइये। तत्पश्चात् दोनों को बाएँ से दाहिने घुमाइये। ये क्रियाएँ 10-10 बार कीजिये। हाथ सामने बिल्कुल सीध में रहेंगे। यह क्रिया कलाई के जोड़ों के रोग, जकड़न और वात को दूर करती है।

क्रिया 6—चौथी क्रिया की भाँति हाथ व पैर फैला कर बैठे रहिये। दोनों हाथ पूर्व की ही भाँति कन्धों की सीध में रहेंगे। मुट्ठियाँ बँधी रहेंगी, किन्तु मुट्ठियों का मुख अब ऊपर आकाश की ओर रहेगा जबकि क्रिया नम्बर 4 और 5 में हथेलियों और मुट्ठियों का रुख पृथ्वी की ओर था। अब दोनों हाथों को साथ-साथ केहुनी पर से मोड़िये और फैलाइये। पुन: मोड़िये और फैलाइये। इस प्रकार मुट्ठी बाँधे हुए लगातार 10 बार हाथों को केहुनी पर से मोड़ते हुए कन्धे की ओर ले जाइए और पुन: फैलाइये। यह केहुनियों के जोड़ों का व्यायाम है।

इसी को आप एक अन्य ढंग से भी कर सकते हैं। इसमें दोनों हाथों को सामने न फैलाकर बगल में फैलाया जा सकता है। बाकी क्रिया पूर्ववत् रहेगी।

क्रिया 7—पूर्ववत् ही पैरों को फैलाकर बैठे रहिए। अब आपको कन्धों की ओर ध्यान देना होगा। दोनों हाथों की मुट्ठी बाँधकर हाथों को सामने की ओर

पहले फैलाकर रखिये। अब इंजन के पहिये की भाँति दोनों हाथों को चक्राकार कन्धों के पास से घुमाएँ। घुमाते समय हाथ केहुनी के पास से मुड़ेंगे व सीधे होंगे। हाथों को पहिये की भाँति घुमाते हुये आगे व पीछे ले जाइए। हाथों को पीछे ले जाते समय केहुनी के पास से हाथ मुड़कर बाजू पर दुहरे हो जाते हैं। इस तरह दोनों हाथों को साथ-साथ पहिए की भाँति दस बार घुमाइये।

क्रिया 8—यह गर्दन का व्यायाम होगा। आप पहले की भाँति बैठे रहिये। दोनों हाथों को जाँघों पर रख लीजिये। अब गर्दन को पहले आगे झुकाकर छाती के ऊपर के भाग से सटा लीजिये। फिर बाईं ओर से गर्दन घुमाना शुरू कीजिए, घुमाते हुये पहले बाएँ कन्धे की ओर सिर ले जाइये और घुमाते हुये सिर को पीठ की ओर झुकाइये। घुमाते-घुमाते ही सिर दाहिने कन्धे से सटाते हुये फिर छाती की ओर झुकाइये। संक्षेप में गर्दन को गोलाकार में घुमाइये। चक्राकार बाईं ओर से घुमाना प्रारम्भ करने में पहले ठुड्डी छाती से सटेगी। उसके बाद बायाँ कान बाएँ कन्धे में सटेगा। तत्पश्चात् सिर पीठ की ओर झुकेगा। फिर दाहिना कान दाहिने कन्धे में सटेगा और अन्त में ठुड्डी छाती पर आ जायेगी। यह एक राउण्ड हुआ। बायीं ओर से पाँच राउण्ड कीजिए, फिर दाहिनी ओर से भी पाँच राउण्ड कीजिये। कुल मिलाकर दस राउण्ड कीजिये।

क्रिया 9—नम्बर 8 तक की क्रियाएँ बैठकर थीं, अब सभी क्रियाएँ लेटकर की जाने वाली हैं। कम्बल पर पीठ के बल लेट जाइए। हाथों को अपनी बगल में जमीन पर शरीर से सटा कर रख लीजिये। दोनों पैरों को मोड़ घुटनों को पेट पर सटा लीजिए। फिर पैरों को पूरा फैलाइए और फिर मोड़कर घुटनों को छाती से सटाइये। इसी प्रकार इस क्रिया को 7-8 बार दुहराइये। इससे कमर और पैरों का व्यायाम होता है। पैरों को फैलाते समय वे जमीन से थोड़ा ऊपर ही रहेंगे। जमीन छूएँगे नहीं।

क्रिया 10—पीठ के बल लेटकर दाहिनी पैर को मोड़कर दाहिना घुटना पेट पर सटा लीजिये। दोनों हाथों से घुटनों को पेट पर दबाकर रखिये। दोनों हाथों की उँगलियाँ एक-दूसरे में गुँथी रहें। अब बाएँ पैर को जमीन से एक फुट ऊपर उठा लीजिये और गोलाई में उसे वृत्ताकार घुमाइए। बाएँ पैर का पंजा तना हुआ रहेगा। घुटना सीधा रहेगा। बाएँ पैर को वृत्त के आकार में 5-7 बार घुमाइये।

इसी क्रिया को अब दूसरे पैर से दुहराइये। बाएँ पैर को मोड़कर घुटने को पेट पर सटा लीजिये। दोनों हाथों से बाएँ घुटने को पेट पर दबाए रखिये।

तत्पश्चात् दाहिने पैर को पृथ्वी से उठाकर वृत्त के आकार में 5-7 बार घुमाइये। याद रहे दाहिने पैर का घुटना बिल्कुल सीधा रहेगा।

इसी क्रिया को अब दोनों के साथ-साथ करना होगा। दोनों पैर फैला लीजिये और सटाकर रखिये। दोनों पैरों को पृथ्वी से ऊपर उठा लीजिये और वृत्त के आकार में पहले दाएँ से बाएँ पाँच बार घुमाइये। पंजे तने हुए रहें। इसी क्रिया को पुन: उल्टी ओर से करें अर्थात् दोनों पैरों को उठाकर वृत्त के आकार में बाएँ से दाहिने पाँच बार घुमाइये।

क्रिया 11—पीठ के बल लेटे रहिये। दोनों हाथों को अपनी बगल में दोनों तरफ जमीन पर रखो। दाहिना पैर मोड़ो और घुटने को पेट पर सटा कर दोनों हाथों की ही भाँति पकड़ लो। बायाँ पैर जमीन से ऊपर उठाओ और साइकिल की भाँति आगे-पीछे चलाओ। इसमें बाएँ पैर को मोड़ते हुये आगे लाओ और पुन: फैलाते हुए पीछे ले जाओ। 5-7 बार ऐसा करो।

इसी क्रिया को अब दूसरे पैर से करो। बाएँ पैर को मोड़ घुटने को पेट पर सटाओ और दाहिने पैर से साइक्लिंग पाँच-सात बार करो। यही क्रिया अब दोनों पैरों से साथ-साथ करो। ध्यान रहे कि करते समय जब बायाँ पैर नीचे जाय तो दाहिना ऊपर आएगा और जब दाहिना नीचे जाएगा तब बायाँ ऊपर आयेगा।

क्रिया 12—पीठ के बल लेटे रहिए। दाहिना पैर मोड़कर घुटने को छाती पर सटाइये। दोनों हाथों की उँगलियों के गठबन्धन से दाहिने घुटने को कसकर पकड़ लीजिये। सिर उठाइये और नाक को दाहिने घुटने से छुवाइये। सिर उठाने के पहले गहरी साँस लीजिये और नाक से घुटना छूते समय श्वास को अन्दर तब तक रोके रहिये, जब तक आप आसानी से रोक सकते हों। इस पोजीशन में 2-3 मिनट तक रहने की कोशिश कीजिये। बायाँ पैर बिल्कुल सीधा व पृथ्वी पर रहेगा। इसी क्रिया को अब दूसरे पैर से कीजिए। विधि वही रहे। बायाँ पैर मोड़िये। घुटना छाती पर सटाइये। दोनों हाथों से घुटना पूर्ववत् पकड़े रहिये। गहरी साँस लीजिये। सिर उठाइए। नाक घुटने पर सटाइये और श्वास रोके रहिए। दाहिना पाँव सीधा जमीन पर। इस पोजीशन में कुछ देर रहिए।

तीसरी स्टेज में दोनों पैरों को मोड़िए। दोनों घुटनों को दोनों हाथों में बाँध लीजिये और पेट व छाती की ओर दबाइये। श्वास अन्दर लीजिये। सिर उठाइए और घुटनों से नाक को सटाइए। श्वास अन्दर रोक कर कुछ देर इसी अवस्था में रहिये।

क्रिया 13—नम्बर 12 की तीसरी अवस्था में आइये अर्थात् दोनों घुटनों को मोड़, छाती से सटाते हुए हाथों से बाँधे रहें। इसी स्थिति में एक झटके से उठकर बैठने की चेष्टा करें और फिर उसी प्रकार पीछे लुढ़क जाएँ। हाथों और घुटनों का बन्धन खुलेगा नहीं। घुटनों को पेट से सटाए हुए और दोनों हाथों से बाँधे ही बाँधे बार-बार झटके से उठकर बैठिए और पीछे लुढ़किये। यह क्रिया आठ बार कीजिए।

क्रिया 14—पीठ के बल सीधे लेट जाएँ। दोनों पैर एक लाइन में सीधे व पंजे तने हुए रहें। गहरी श्वास अन्दर लीजिये। सिर व कन्धे को पृथ्वी से थोड़ा ऊपर करीब 6 इंच उठाइये। श्वास रोकिए। जब तक रोक सकें, इसी अवस्था में रहें। पुनः सिर व कन्धे जमीन पर वापस ले जाएँ। श्वास छोड़ दीजिये।

क्रिया 15—पूर्ववत् पीठ के बल लेटे रहिए। श्वास लेकर अन्दर रोकिये। दोनों पैरों को साथ-साथ पृथ्वी से थोड़ा ही ऊपर उठाइये। घुटने बिल्कुल सीधे रहेंगे। पंजे तने रहेंगे। श्वास रुकी रहेगी। इसी अवस्था में कुछ देर, जितनी देर आसानी के साथ आप रह सकें रहिए। उसके बाद पैरों को धीरे से पृथ्वी पर ले आइए। श्वास छोड़ दीजिये।

क्रिया 16—पीठ के बल लेटे रहिये। श्वास लेकर रोकिए। सिर और कन्धे तथा दोनों पैरों को एक साथ पृथ्वी से थोड़ा ऊपर उठाकर उसी अवस्था में श्वास रोक कर कुछ देर रहिए, जितनी देर सरलता से आप रह सकें। उसके बाद वापस पूर्वावस्था में आ जाइये।

क्रिया 17—बायीं करवट लेटिए। बाएँ हाथ को शरीर के नीचे से पीठ की ओर निकाल लीजिये। दाहिना हाथ भी पीठ की ओर ले जाइए। बाएँ हाथ की मुट्ठी बाँधिए और दाहिने हाथ से बाएँ हाथ की कलाई कसकर पकड़ लीजिये। अब बाएँ करवट पर 'बैलेन्स' करते हुए दोनों पैरों व सिर को ऊपर उठाइये। पैर व सिर इस प्रकार उठाए जाएँ कि शरीर का आकार नौका की तरह हो जाए।

क्रिया 18—अब दाहिनी करवट ले लीजिये। पूर्ववत् अब दाहिने हाथ को पीठ की ओर ले जाइये। बाएँ हाथ को भी पीठ की ओर ले जाकर बाएँ हाथ से दाहिनी कलाई कस कर पकड़ लीजिए। दोनों पैरों व सिर को जमीन से ऊपर उठाइये। क्रिया पहले कही हुई नम्बर 17 की विधि की तरह है, अन्तर केवल यही कि पहले क्रिया बायीं ओर से की गई और अब दाहिनी ओर से की जा रही है।

क्रिया 19– वज्रासन में बैठ जाइये। दोनों हाथ दोनों जाँघों पर रख लीजिये। पेट के कपड़े ऊँचे कर लीजिये। श्वास लेकर पूरी श्वास को बाहर निकाल कर बाहर ही रोकिये। अब पेट को इतना अन्दर ले जाइये कि पीठ व पेट बिल्कुल एक हो जाएँ। फिर पेट को पूर्वावस्था में लाकर फुला लीजिए। पुनः पेट को अन्दर लीजिये। पुनः पूर्व अवस्था में लाकर फुलाइये। पेट को अन्दर ले जाना और फिर फुलाना। इसी क्रिया को बार-बार दुहराइए। याद रहे कि यह क्रिया श्वास बाहर रोक कर की जाती है। एक बार श्वास रोक कर पाँच-सात बार पेट को अन्दर ले जाने और बाहर निकालने की क्रिया कीजिये। यह क्रिया 'अग्निसार' कहलाती है और पेट के तमाम रोगों की अचूक क्रिया है।

क्रिया 20– पद्मासन लगाकर लेट जाइये। केहुनी का सहारा लीजिये। दोनों हथेलियों से दोनों जाँघों को पीछे की ओर से पकड़ लीजिये और पद्मासन की अवस्था में पैरों को ऊपर उठाइये। सिर और पीठ का भाग भी पृथ्वी से ऊपर रहेगा। शरीर का पूरा भार दोनों केहुनियों और कमर के पिछले हिस्से पर रहेगा। सिर व पैर दोनों पृथ्वी से ऊपर रहेंगे।

आसन जब भी किए जाएँ, जमीन पर चौपरत कम्बल बिछाकर किए जाएँ। आसन करने का उत्तम समय प्रातःकाल शौचादि से निवृत्त होने के बाद है, किन्तु पवनमुक्तासन निपटने के पहले भी किया जा सकता है।

आसन करते समय वस्त्र हल्के हों। आसन शुद्ध वायु वाले कमरे में किए जाएँ। आसन करते समय आँखें बन्द रहें, मन शान्त हो। आसन चित्त को एकाग्र करके करना चाहिये। चित्त की एकाग्रता के लिये आसन करते समय अपने गुरु-मंत्र का मानसिक जप करना चाहिये। जल्दीबाजी में आसन न किये जाएँ। बहुत तेज हवा में आसन न किये जाएँ। आसन करते समय एकान्त हो तो उत्तम। जितनी एकाग्रता और दृढ़ भावना से आसन करेंगे, उतना ही उससे लाभ होगा।

आसन करते समय यह समझना चाहिये कि आसन यौगिक क्रियाएँ हैं, साधारण व्यायाम नहीं। आसनों का प्रभाव अचेतन मन पर भी पड़ता है, इसलिए आसनों को श्रद्धापूर्वक और फाइन आर्ट समझ कर करना चाहिए।

रॉकेट युग और योगासन

आज के समय में जबकि मनुष्य के मन में मानसिक तनाव बहुत अधिक हो गए हैं, आसन करना आवश्यक है। आज के संघर्षमय जीवन में, जबकि

मनुष्य के मन पर बराबर बाहर से घात-प्रतिघात पड़ते रहते हैं, उसकी अनेक इच्छाएँ अपूर्ण रह जाती हैं और मेन्टल टैन्शन्स बराबर बढ़ते जाते हैं, आसन ही लोगों की रक्षा करता है। संसार में जितने भी लोग आज हैं, उनमें कोई भी पूरा नॉर्मल नहीं पाया जाता। उसका कारण है कि आज के जीवन में हर क्षण मनुष्य को विषम परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। वह इच्छाएँ बहुतेरी करता है, किन्तु सौ में से निन्यान्वे इच्छाएँ अपूर्ण रहकर मन में दबी रह जाती हैं। ये जीवन में मानसिक तनाव उत्पन्न करती हैं। इनसे मनुष्य का मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है। आसनों के द्वारा ये मानसिक तनाव दूर होते हैं। व्यक्ति मानसिक सन्तुलन प्राप्त करता है।

आसनों का अत्याधिक महत्त्व आज के युग में इसलिए भी है कि आज का मनुष्य बहुत व्यस्त जीवन बिताता है। अपने शरीर और स्वास्थ्य के विषय में उसे सोचने का भी मौका नहीं मिलता, समय देना और कुछ करना तो दूर की बात है। ऐसे समय में आसन मनुष्य को कम-से-कम समय में अधिक-से-अधिक लाभ देता है। थोड़े समय में शारीरिक व्यायाम, मानसिक सन्तुलन व आत्मिक शान्ति देता है। आसनों से शरीर में एक कान्ति उत्पन्न हो जाती है और शरीर की पूरी-पूरी गवर्नमेन्ट बदल जाती है।

इसलिये आप सभी लोगों से मेरा यह अनुरोध है कि आप आसनों को अपने जीवन में महत्त्व दें। आसनों का आज विश्वव्यापी प्रचार हो रहा है। सफलता मिलने का कारण यही है कि आसन अमित उपयोगी सिद्ध हुए हैं। ये ऋषियों के परीक्षित सत्य हैं। आसन योग की क्रियायें हैं जिनसे मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा पर गहन एवं व्यापक प्रभाव पड़ता है।



दो शब्द

अब वह जमाना गया, जब योगविद्या को विदेशियों-विधर्मियों ने बदनाम कर उसे हमारी नजर में नीचे गिरा दिया था। उस युग का अब आरम्भ हो चुका है, जिसमें योग साइन्स की आत्मा बनेगा और योग के प्रयोग पूरी मानव-जाति के उपयोग आएँगे।

लाखों लोग माँग कर रहे हैं कि उन्हें योग सिखलाओ। पूज्य माता जी की प्रस्तुत पुस्तक उसी माँग की एक छोटी-सी प्रति है, जिसे हमने श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती की 39 वीं वर्षगाँठ पर उन्हीं के ज्येष्ठ पुत्र बाबा बनारसी दास (बनारस सिंह, एडवोकेट, छपरा) की सहायता से सत्संगियों के लाभार्थ प्रकाशित किया है। सम्पादन-कार्य के लिए भी हम बन्धु भक्तमाल (योगेश्वर प्रसाद सिन्हा, सीतामढ़ी) के अत्यन्त आभारी हैं।

'योगनिद्रा और प्राणायाम-विज्ञान' पर यह छोटी-सी पुस्तिका, माँ योगशक्ति के दो-वर्षीय शिशु-शिष्य निरंजन के हाथों में दी जा रही है, जो हाथ कभी मानवता की निःस्वार्थ सेवा करेंगे। हमें पूर्ण विश्वास है यह पुस्तिका प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

गिरधारी त्र्यम्बक पुरवार
प्रकाशक

योगनिद्रा और प्राणायाम-विज्ञान

धर्म और योग

धर्म के विषय में आज जनसाधारण में अनेक भ्रमपूर्ण धारणाएँ फैली हुई हैं। प्राय: पढ़ा-लिखा समाज अब धर्म को जीवन की एक आवश्यकता नहीं समझता, पर मैं समझती हूँ कि जीवन और धर्म का अभिन्न सम्बन्ध है। धर्म का महत्त्व जीवन के लिए ही है। जीवन में व्यवहार करने योग्य नियमो के संकलन को ही धर्म की संज्ञा प्रदान की गई है।

हमारे पूर्वज ऋषियों ने मनुष्य जीवन की विविध और सर्वांगीण आवश्यकताओं को देखते हुए उनकी पूर्ति के हेतु कुछ नियम बनाए। ये नियम मनुष्य की भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओं के अनुसार रचे गए। इन्हें मानवोपयोगी, कल्याणकारी और मंगलदायक समझ कर ऋषियों ने इसे धर्म का नाम दिया।

दुनिया में सात बड़े-बड़े धर्म प्रचलित हैं। उनके अन्दर भी अनेक मत और समुदाय पाए जाते हैं, लेकिन वास्तव में सात ही मुख्य बड़े धर्म हैं – ईसाई धर्म, इस्लाम, पारसी-धर्म, सिक्ख-धर्म, जैन-धर्म, बौद्ध-धर्म, और हिन्दू-धर्म। इनमें सबसे प्राचीन धर्म हिन्दू-धर्म है। हिन्दू-धर्म के सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद माने जाते हैं। उनमें भी ऋग्वेद सबसे पुराना है। इसके रचना-काल का ठीक-ठीक पता कोई नहीं लगा सकता है। इतिहासकार 5000 वर्ष पहले का अनुमान लगाते हैं जिस समय अन्य पाश्चात्य देश, जो आज हमसे आगे होने का दावा करते हैं, उनकी सभ्यता का नामोनिशान भी न था।

हमारे देश के प्राचीन ग्रन्थों से जो कुछ ज्ञान उपलब्ध है, उसके आधार पर हम यह अंदाज लगा सकते हैं कि हमारे पूर्वज मानव-विकास के किस

ऊँचे शिखर पर पहुँच गए थे। ज्ञान और विज्ञान का कोई क्षेत्र उनसे अछूता नहीं था। जो इसे जानना चाहते हैं उन्हें हमारे धर्म के गुप्त ज्ञान के पक्ष (occult side) को पकड़ना होगा। सूत्रों, श्लोकों और कहानियों के माध्यम से बतलाए हुए प्रकृति के अखण्ड नियामों को जानना पड़ेगा।

जो विज्ञान के विद्यार्थी हैं, उन्हें अनुसन्धान करने के लिए बहुत मसाला हमारे धर्म-ग्रन्थों में मिल सकता है। किन्तु हमारे धर्म-ग्रन्थों में छिपे हुए कुछ अध्यात्म-रहस्यों के बारे में ऐसा लगता है कि वे विज्ञान के बहुत आगे की अवस्थाएँ हैं, जिन्हें जानने का एकमात्र उपाय धर्म की शरण, अध्यात्म मार्ग का अवलम्बन और गुरु की कृपा है। दुरुपयोग की संभावना से कदाचित् प्रकृति ने उसे छिपा रखा है। बुद्धि के द्वारा उस ज्ञान को पाना कठिन है। अन्तर्ज्ञान (intuition) से ही मनुष्य उस ज्ञान को प्राप्त कर सकता है। ध्यान के द्वारा ही वहाँ तक हम लोगों की पहुँच हो सकती है।

अन्य धर्मों की बात नहीं कह सकती, किन्तु हिन्दू धर्म के विषय में मैं व्यवहार, अनुभव और ज्ञान के आधार पर कह सकती हूँ कि यह एक पूर्णत: वैज्ञानिक धर्म है। इसकी सभी क्रियाओं, मान्यताओं आडम्बरों, रूढ़ियों और स्वीकृतियों के पीछे कोई-न-कोई वैज्ञानिक आधार है। किसी-न-किसी मानव-हित को ध्यान में रख कर वे बनाई गई हैं। लोग उनका पालन करें, इसलिए उनका सम्बन्ध किसी देवी, देवता, पर्व, तीर्थ इत्यादि से जोड़ दिया जाता है। उनके पालन से लोगों के कल्याण में वृद्धि होगी, इसी भाव से उनका पालन अनिवार्य करने की कोशिश की गई है। हिन्दू-धर्म के सभी नियमों, उत्सवों इत्यादि में मानव-मनोविज्ञान का अपूर्व ध्यान रखा गया, ऐसा लक्षित होता है। Mass psychology के अनुरूप भी नियम बनाए गए प्रतीत होते हैं। शरीर-विकास, मनोविकास और आत्म-विकास के लिए अनुपम कोर्स हिन्दू-धर्म के पास मौजूद हैं।

मनोविज्ञान के भारतीय विद्यार्थी आज पाश्चात्य ग्रन्थों को पढ़कर अपने को धन्य मानते हैं। विदेश जाकर मनोविज्ञान की डिग्री लेते है। किन्तु योगवाशिष्ठ और महर्षि पतंजलि के योगदर्शन का अध्ययन और मनन उन्होंने नहीं किया, क्योंकि ये तो धर्म-ग्रन्थ हैं न। हम धर्म-निरपेक्ष राज्य के नागरिक हैं। फिर धर्म-ग्रन्थों में रुचि रखना तो आधुनिकता से हट जाना है। इस तरह की बहुत-सी भावनाएँ आज विद्यार्थियों के समाज और सुसंस्कृत कहलाने वाले लोगों के बीच फैली हुई हैं। आज जरूरत है कि प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति एक खुले

दिमाग से सब बातों पर विचार करे। अध्ययन और स्वाध्याय से अपनी बुद्धि को प्रौढ़ करे, और तब समाज, धर्म, विज्ञान एवं कला पर अपना सम्मति जाहिर करे। पर प्राय: ऐसा हो नहीं पाता। समाज के विद्वान् पुरुष आज अपनी बनाई हुई परिस्थिति, दायरे, पद व मान में ऐसे बँध जाते हैं जैसे रेशम का कीड़ा। जनसाधारण को उनका लाभ नहीं पहुँच पाता। उनका ज्ञान सीमित दायरे में ही रह जाता है।

धर्म मानव-मात्र की आवश्यकता है और समाज की भी। पर आज सभी स्कूलों, कॉलेजों और सार्वजनिक स्थानों में धर्म-शिक्षा बन्द कर दी गई है। यही कारण है कि आज सद्‌गुणों (human values) के प्रति हमारा सम्मान घटता जा रहा है। भाषण और लेखन में हम भले ही इन सद्‌गुणों की स्तुति कर लें, पर व्यवहार में लाने की हमारी कतई इच्छा नहीं होती। चारित्रिक विकास का स्तर नीचे गिर गया है। बच्चे नेताओं को दोष देते और नेता समाज व परिस्थिति को। परिस्थितियों को बदलने की सक्रिय इच्छा लोगों में सुप्त है।

देश और समाज की उन्नति के लिए सरकार द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में कार्य किए जा रहे हैं। पर सरकारी योजनाओं के साथ-साथ यदि सभी व्यक्तियों के अन्दर भी अपने को उन्नत, समर्थ और श्रेष्ठ बनाने की इच्छा जाग्रत हो जाए तो अत्यधिक सफलता प्राप्त हो सकती है। किन्तु दु:ख इस बात का है कि बहुतेरे लोग अपने कल्याण को स्वयं नहीं जानते। गलत लक्ष्य और गलत साधन उन्हें अनेक पीड़ाओं का शिकार बना देता है।

मनुष्य की सर्वांगीण उन्नति के लिए बहुत-सी योजनाओं की आवश्यकता है। एक पक्ष उतना ही आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है जितना दूसरा। अच्छी अर्थ-व्यवस्था, राज्य-व्यवस्था, कला, साहित्य, शिक्षा – मनुष्य को सबकी आवश्यकता है। किन्तु सबसे जरूरी वस्तु है मनुष्य का स्वस्थ रहना और मानसिक एवं शारीरिक पीड़ाओं से मुक्त होना। हिन्दू-धर्म को हम लोग मानव धर्म इसीलिए मानते हैं कि वह मनुष्य के लिए एक ऐसी जीवन-विधि का निरूपण करता है, जिससे उसका भौतिक और आध्यात्मिक, दोनों तरह का विकास हो। विशेषकर 'अष्टांग योग' पूर्णत: शरीर-विज्ञान या यूँ कहिए मनुष्य को आधार बना कर चलता है। यह योग मनुष्य के स्थूल और सूक्ष्म, दोनों विभागों की पूर्ण खोज कर उपलब्ध ज्ञान देता ही नहीं, बल्कि उस ज्ञान को प्राप्त करने का पूर्ण साधन भी बतलाता है।

मनुष्य के एक नहीं, अनेक शरीर हैं। अन्न पर पलने के कारण जिसे अन्नमय कोष कहा जाता है, वह ठोस, स्थूल शरीर है। इसीलिए वह हमारी आँखों से दृष्टिगोचर होता है। पर मनुष्य के अन्य शरीर सूक्ष्म तत्त्व के बने होने के कारण इन आँखों से दिखाई नहीं पड़ते। उनके अस्तित्व को उसी प्रकार सिद्ध नहीं किया जा सकता जिस प्रकार विचारों को प्रत्यक्ष दिखा नहीं सकते। विचार मस्तिष्क में आते हैं, उनका अनुभव हमें होता है, लेकिन फिर भी हम आँखों से उन्हें देख नहीं सकते। इसी प्रकार मनुष्य के सूक्ष्म शरीर हैं जो हमें स्थूल नेत्रों से नहीं दिखाई पड़ेंगे, किन्तु यौगिक क्रियाओं के अभ्यास से उनका अनुभव हो सकता है।

योग के अभ्यास से मनुष्य के इन शरीरों को स्वस्थ और दीर्घजीवी बनाया जा सकता है। यदि मनुष्य नीरोग रहना सीख जाए तो दुनिया का दु:ख एक बड़ी मात्रा में हट जाए। असंख्य लोग आज स्वाभाविक मृत्यु से नहीं, दोषपूर्ण जीवन और उसके परिणामस्वरूप रोगों के शिकार होकर मरते हैं। उन लोगों को जीने का सही तरीका कैसे सिखाया जाए, यह एक बड़ी समस्या है। सभी जानते तो हैं कि नियमित आहार-विहार और जीवन में कुछ अन्य नियमों का पालन करने से वे नीरोग, सबल, स्वस्थ और दीर्घायु हो सकते हैं, पर अपनी संकल्प-शक्ति के अभाव में ऐसा जीवन अपना नहीं पाते।

मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए योग का अभ्यास आज आधुनिक दृष्टिकोण से भी अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हो चुका है। इधर थोड़े ही वर्षों में योगासन और प्राणायाम का काफी प्रचार हो गया है। प्रतिशत तो नहीं बताया जा सकता, पर बहुतेरे व्यक्ति अपने-अपने घरों में नित्य आसनों का अभ्यास करते पाए जा रहे हैं। जो नियमित अभ्यास करते हैं उन सबको मैंने यही कहते सुना है कि आसनों से उन्हें अत्यन्त लाभ पहुँचा है। जिन्होंने गुरुदेव से सीखा है या उनके आदेश पर करना शुरू किया है, उनकी तो भयानक बीमारियाँ भी सिर्फ एक-दो आसन के अभ्यास करने से छूट गई हैं। इसके अनेकों व्यक्तिगत प्रमाण हैं। जिन बीमारियों को एलोपैथिक इलाज नहीं अच्छा कर पाया, वे भी आसनों से दूर होती पायी गयी हैं। सन्तों के लिए तो आसन प्राय: आध्यात्मिक शक्ति संचरित करने के माध्यम होते हैं।

योगासन और प्राणायाम स्वास्थ्य के लिए लाभदायक ही नहीं, आवश्यक भी है। जनसाधारण का यह भ्रम कि इनसे नुकसान पहुँचता है, धीरे-धीरे दूर होता जा रहा है। वास्तव में उच्च योग की जो क्रियाएँ हैं, उन्हें गुरु से सीख कर

ही करना चाहिए। यदि आप गुरु से सीखकर कोई क्रिया करेंगे तो उत्तरदायित्व गुरु का हो जाता है। योग्य गुरु शिष्य की योग्यता और अधिकारत्व देखकर ही उसे योग-विज्ञान में दीक्षित करता है। साधारण आसन और प्राणायाम के सभी अधिकारी हैं। गृहस्थ भी इनका अभ्यास कर सकते हैं। स्त्री, पुरुष, युवा, वृद्ध और दस साल से ऊपर के सब बच्चे इनका अभ्यास कर सकते हैं।

योगासन और प्राणायाम कम-से-कम समय में और बिना एक पैसे के खर्च के आपको अमूल्य स्वास्थ्य प्रदान करते हैं। यदि आप धनी हैं तो बात दूसरी है। प्राय: यह देखा जाता है कि कम मूल्य की दवा से धनी रोगियों को सन्तोष नहीं होता। छोटे डॉक्टर पर उनका विश्वास नहीं होता। फिर बिना मूल्य के इलाज पर उनकी आस्था कैसे होगी? पैसे खर्च करने से, महँगी दवा खाने से और मोटी फीस लेने वाले डॉक्टरों से ही उन्हें आत्म-सन्तोष होता है। ठीक है, वे ऐसा करें, इसमें कोई हर्ज नहीं। धन तो आने-जाने वाली चीज है। किन्तु कुछ व्यक्ति मनोवैज्ञानिक लिप्साओं को शान्त करने के लिए कितना महँगा मूल्य चुकाते हैं, वे इसे नहीं जानते। स्वयं अपने मन की आदत व शक्ति को न पहचान, अपने शरीर और स्वास्थ्य के साथ खेलते हैं। कितने अप्राकृतिक और जहरीले तत्त्वों को अपने अन्दर लेकर अपनी प्राकृतिक शक्ति को खो देते हैं। शरीर हमेशा के लिए दवाओं का गुलाम हो जाता है। शरीर के कई यन्त्र बेकार हो जाते हैं और उनका काम दवाइयों द्वारा पूरा किया जाता है।

इतने पर भी उनमें वह प्राकृतिक स्वास्थ्य, सौन्दर्य, शक्ति और स्फूर्ति नहीं रहती जो एक साधारण स्वस्थ और नीरोग व्यक्ति में होती है। यौवन और स्वास्थ्य, ये दो ऐसी चीजें हैं जिनकी प्राणपण से रक्षा होनी चाहिए। भोग के लिए नहीं, बल्कि उच्च कार्यों की पूर्ति के वे साधन हैं, ऐसा समझ कर उनकी रक्षा करनी चाहिए। स्वस्थ शरीर ही आपका अर्थ, धर्म और मोक्ष का साधन है।

जन-स्वास्थ्य की रक्षा के लिए सरकार अस्पतालों का निर्माण और मेडिकल कॉलेजों की संख्या बढ़ा रही है। सरकार समझती है कि ऐसा करने से वह जन-स्वास्थ्य को सुधार सकेगी, अस्वाभाविक मृत्यु की संख्या घटा सकेगी, नई-नई दवाइयाँ और इन्जेक्शन लोगों का सुन्दर स्वास्थ्य प्रदान कर सकेंगे, दवाइयाँ रोगों पर विजय प्राप्त कर सकेंगी। यह विचार ठीक तो है पर पूर्ण नहीं। ये सीमित साधन हैं। दवाइयों का जितना आविष्कार हो रहा है, उतनी ही बीमारियाँ भी बढ़ रही हैं। एक तरफ डॉक्टरों की संख्या बढ़ रही है, दूसरी ओर बीमारों और अस्पतालों की भी।

चिकित्सा का प्रबन्ध तो होना चाहिए पर साथ ही ऐसा उपाय भी होना चाहिए, जिससे लोग कम बीमार पड़ें। ऐसे प्रबन्ध और शिक्षा की भी आज आवश्यकता है, जिससे लोग स्वस्थ रहने के नियम जान सकें और उनके पालन की उन्हें प्रेरणा मिले।

मानव शरीर एक यन्त्र की भाँति है। इसे यदि मशीन की भाँति बराबर काम में न लाया जाए, समय-समय पर सफाई न की जाए, तेल न डाला जाए, कल-पुर्जों को घुमाया न जाए तो जंग लग जायेगा, जकड़ जायेगा, गन्दगी इकट्ठी हो जायेगी और शरीर बेकार हो जायेगा। केवल दवाइयाँ, इन्जेक्शन, अस्पताल और डॉक्टर दुनिया के शारीरिक और मानसिक रोगों का खात्मा नहीं कर सकते। यह निश्चित है। विज्ञान जितना उन्नति करेगा, उतना ही मानव जीवन जटिल, दु:खी और अशान्त होता जायेगा।

कारण क्या है? यही कि हम मूल न पकड़ कर शाखाओं को सींचना चाहते हैं। दु:ख के कारण का निदान न कर, दु:ख के परिणाम का निदान करते हैं। दु:खों की उत्पत्ति रोकने का उपाय और प्राप्त दु:खों को दूर करने का उपाय – ये दोनों कार्य यदि साथ-साथ नहीं किये जायेंगे तो हमारी मनुष्यों को सुखी बनाने की योजना सफल नहीं हो सकेगी। रोगों को आने से रोकना और रोगों के उपचार की व्यवस्था भी करना – ये दोनों काम साथ-साथ होने चाहिए। तभी लोगों का कल्याण हो सकेगा।

आधुनिक विज्ञान ने हर दिशा में अपने डग बढ़ाए हैं और कुछ प्राप्त भी किया है, किन्तु फिर भी हमें यह मानना पड़ेगा कि हमारे पूर्वज ऋषिगण भी अपने काल के महान् वैज्ञानिक थे। आज के वैज्ञानिकों से उनका स्थान श्रेष्ठ था। उन ऋषियों ने भी मानव जीवन के विभिन्न आयामों में अनुसन्धान किया और अपने उपार्जित ज्ञान की संहिताएँ अपनी सन्तानों के लिए छोड़ गए।

भारत के प्राचीन गौरव, सभ्यता, विद्या और साहित्य का सम्मान विदेशियों ने भी किया है, उनकी उत्कृष्टता को माना है। विदेशी भाषाओं में भारत के प्राचीन ग्रन्थों का अनुवाद किया गया है। वेद, उपनिषद्, गीता, स्मृतियाँ, पुराणों और योग के ग्रन्थों का बहुतेरे विदेशी विद्वानों ने अध्ययन किया है और करते हैं। कितने ही विदेशी भारतीय साधुओं और योगियों की खोज में भारत आए। जिन्होंने सच्ची खोज की, उन्हें सच्चे गुरु भी मिले।

जॉन वुडरूफ कलकत्ता हाइकोर्ट के जस्टिस थे। उन्होंने भारत में ही एक तान्त्रिक गुरु से तन्त्रशास्त्र की दीक्षा ली थी। वे स्वयं योग का अभ्यास करते

थे। उन्होंने 'महानिर्वाण तन्त्र' का अंग्रेजी में अनुवाद किया। कुण्डलिनी योग के विषय में भी उन्होंने अंग्रेजी में पुस्तकें लिखी हैं।

किसी भी देश की कला, साहित्य और विज्ञान उन्नति के शिखर पर तभी पहुँचते हैं, जब वहाँ के बच्चे अपने उत्तरदायित्व को समझते और निभाते हैं। उनमें उन्नति तब होती है, जब वहाँ की आगे आने वाली पीढ़ियाँ अपने पूर्वजों द्वारा अर्जित ज्ञान को प्रथम, सुरक्षित रखने की चेष्टा करती हैं; द्वितीय, उनकी खोजों में अपनी खोजों के परिणामों को जोड़कर उस ज्ञान की शाखा की निरन्तर वृद्धि करती जाती हैं। हमारे यहाँ यह नहीं हुआ। पाश्चात्य देशों में यही किया गया। पश्चिम वालों ने अपने पूर्वार्जित ज्ञान को भी सुरक्षित रखा। साथ-साथ उसमें सुधार और वृद्धि भी समयानुसार करते गए। यही कारण है कि वहाँ पर विभिन्न विचारों और वादों का क्रमबद्ध विकास पाते हैं। उनका ज्ञान वैज्ञानिक, सुसम्पन्न और अप-टू-डेट माना जाता है।

हम अपने देश में इस कार्य में पीछे रह गए। उत्तरदायित्व निभाने में हमने कमी कर दी। लिबरल होने के चक्कर में पड़ अपनी सम्पत्ति को बढ़ाना तो दूर रहा, उसकी सुरक्षा भी भूल गए। इसीलिए जो कुछ ज्ञान और ग्रन्थ उपलब्ध हैं वे छिट-पुट, यत्र-तत्र, अव्यवस्थित और बिखरे हुए हैं। हमारे देश में आईं बड़ी-बड़ी राजनैतिक आँधियाँ और उलट-फेर कुछ हद तक इसके लिए जिम्मेवार हैं। पर इन बाधाओं, बन्धनों और कठिनाइयों के बीच भी कुछ महान् साहसी आत्माएँ अपना कर्त्तव्य निभा गईं। धर्म और संस्कृति को जीवित रखने के लिए कुछ कर गईं। यही कारण है कि आज भी उनका नाम साहित्य और इतिहास में अमर है। जनता आज भी श्रद्धा व सम्मान के फूल उन्हें चढ़ाती है।

हमारे समाज में कुछ ऐसे भी लोग हैं, जिन्हें अपने देश की संस्कृति, साहित्य, अद्भुत योगविद्या, धर्म और विभिन्न दर्शनों का कुछ ज्ञान नहीं। वे अपने देश के प्राचीन गौरव से अनभिज्ञ हैं। किन्तु तब भी ये धर्म के विषय में अपनी अनधिकार सम्मति और आलोचना देने में पीछे नहीं रहते। हिन्दू-धर्म के ग्रन्थों को बिना गम्भीरता से अध्ययन किए हुए यह नहीं बताया जा सकता कि हिन्दू धर्म क्या है।

हिन्दू धर्म क्या है और क्या नहीं, यह कहना बड़ा ही कठिन है। यह बड़ा ही व्यापक, सामाजिक तथा प्रजातांत्रिक धर्म है। इसे किसी परिभाषा में बाँधा नहीं जा सकता। विभिन्न दृष्टिकोणों और सत्य के विभिन्न पहलुओं का

सम्मिश्रण है यह। जो हिन्दू-धर्म के वास्तविक स्वरूप को थोड़ा भी समझ सके हैं, वे इसे साम्प्रदायिक परिभाषा में बाँध नहीं सके।

मानव-कल्याण की प्रायः सभी बातें हिन्दू-धर्म की सीमा में आ जाती हैं। ज्योतिष, आयुर्वेद, निरुक्त, न्याय, अर्थ-शास्त्र – सभी इसमें आ जाते हैं। द्वैत, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, सांख्य, चार्वाक् – सब तरह के मतों और दर्शनों का समन्वय है हिन्दू-धर्म। पुरुष की भी पूजा है और स्त्री-शक्ति की भी। साकार का पूजा-विधान भी है और निराकार उपासना की पद्धति भी। शुद्ध हठयोग भी है और ज्ञानयोग, भक्तियोग एवं कर्मयोग भी। वैदिक तन्त्र भी हैं और वामतन्त्र भी। एक ओर संन्यास की श्रेष्ठता उपस्थित की गई है, तो दूसरी ओर गृहस्थाश्रम को सब आश्रमों से बढ़कर बतलाया गया है। एक तरफ सकामोपासना की विधि बतलाई गई है और दूसरी तरफ निष्काम कर्म की महत्ता। यहाँ तक कि मोक्ष-प्राप्ति की इच्छा को भी कामना माना गया है।

ऐसा क्यों? क्या यह विरोधाभास उलझन पैदा करने के लिए है, भ्रमित करने के लिए है? नहीं। यह इसलिए कि हिन्दू-धर्म सर्वोदयवादी है। यह इसलिए कि हिन्दू-धर्म एकता में अनेकता और विभिन्नता के प्राकृतिक नियम को समझ कर स्थापित किया गया है। यह इसलिए कि सब की रुचि, स्वभाव, विचार, इच्छा और विकास का स्तर एक नहीं होता। जैसे विभिन्न उम्र के रोगियों को दवा की मात्रा एक समान नहीं दी जाती, उम्र के अनुसार कम-अधिक कर दी जाती है, उसी प्रकार हिन्दू-धर्म भी एक ही सत्य को मनुष्य के विकास के अनुकूल भिन्न-भिन्न रूपों में और विभिन्न तरीकों से सामने रखता है। यही एक ऐसा धर्म है, जिसमें सब अपने कल्याण का मार्ग पा सकते हैं।

शूद्र को भी यह कल्याण-मार्ग दिखाता है और ब्राह्मण के भी कर्म की प्रशंसा करता है। पौराणिक और धार्मिक कहानियों में अनेक प्रसंग ऐसे हैं जिनमें शूद्रों ने भी परम गति प्राप्त की है। विवाह को ही ले लें तो न मालूम कितनी पद्धतियाँ वर्णित पाई जाती हैं और वे सब हिन्दू-धर्म के अन्तर्गत ही हैं। यदि राम ने एकपत्नी-व्रत निभाया तो कृष्ण की सोलह हजार रानियाँ थीं। जहाँ सब स्त्रियों का एक पति होता था, वहाँ द्रौपदी के पाँच हुए। पिता द्वारा आयोजित विवाह भी होते थे और स्वयंवर की प्रथा भी थी। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि हिन्दू-धर्म बड़ा विशाल, व्यापक और उदार धर्म है। इसे यदि संकीर्ण बनाया तो हम लोगों ने। अपने-अपने स्वार्थ को सिद्ध करने के

लिए मनुष्य जब-तब उसको तोड़ मरोड़ कर माने-मतलब लगाता है। पर इससे उसका शुद्ध स्वरूप विकृत नहीं होता।

मैं यहाँ यही कहना चाहती हूँ कि धर्म वास्तव में मानव जीवन की एक आवश्यकता है और जो धर्म मनुष्य जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति न कर सके, हर मनुष्य को कल्याण का मार्ग न दिखा सके, उसको सुख और दु:ख में शान्ति न दे सके, वह सच्चा धर्म नहीं हो सकता।

आज का मनुष्य उपयोगितावादी है। धर्म की यदि जीवन में उपयोगिता सिद्ध न हो सके तो हम सब उसे छोड़ देना चाहेंगे। मनुष्य बुद्धिवादी और स्वार्थी है। सभी कामों में वह स्वार्थ को सर्वप्रथम स्थान देता आया है। भगवान की खोज भी वह इसीलिए करता है कि इससे उसे सांसारिक दु:खों से मुक्ति मिलेगी और सच्चिदानन्द की प्राप्ति होगी। जिस कार्य से कोई लाभ न हो उसे कोई भी करना नहीं चाहेगा। लेकिन फिर प्रश्न यही है कि किसे स्वार्थ समझा जाए और किसे स्वार्थ के विरुद्ध। मनुष्य सभी काम आनन्द और स्वार्थ के लिए ही तो करता है। तो क्या उसके सब काम ठीक ही हैं? उसे मनचाहा ही करते रहना चाहिए?

नहीं, मनुष्य अपना स्वार्थ कभी-कभी स्वयं नहीं समझ पाता। क्षणिक सुख के लिए वह कुछ ऐसे आनन्द की प्राप्ति भी चाहने लगता है, जिसका अन्त दु:खदायी होता है। जैसे सिनेमा, शराब, जुआ, निरुद्देश्य घूमना, धूम्रपान इत्यादि। कभी-कभी मनुष्य विवेक नहीं कर पाता कि क्या करना उचित है और क्या नहीं। मनुष्य तात्कालिक और अल्पकालीन सुख में अपने दीर्घकालीन और स्थायी तथा अधिक लाभदायक सुख को भूल जाया करता है। मनुष्य में उतावलापन है। वह धीरज रखना नहीं चहता, त्याग करना नहीं चाहता, सन्तोष नहीं चाहता। इन गुणों का पालन न करने से वह अपने उचित स्वार्थ को नहीं समझता और न पाता है। आज का मनुष्य केवल अधिक-से-अधिक पैसा प्राप्त करना चाहता है और अधिक-से-अधिक भोग करना चाहता है। हर एक युवक अपनी योग्यता और गुणों को बढ़ाना आवश्यक नहीं समझता, केवल बढ़िया नौकरी चाहता है। बढ़िया कार, बढ़िया बंगला और बढ़िया बीबी। बस यहीं तक सबकी दुनिया सीमित है। साधारणत: लोग इसी प्रकार की जिन्दगी बिताते हैं या बिताना चाहते हैं।

कुछ लोग समाज में ऐसे भी हैं जो मानवता के मार्ग-प्रदर्शन का कार्य कर सकने में समर्थ हैं। ये ही हमारे समाज के उद्धारक और धर्म के स्तम्भ होते हैं।

धर्म ही वास्तव में समाज को सही रास्ता दिखाता है। धर्म समाज को बिगड़ने से रोकता है या बिगड़ जाने पर उसका सुधार करता है। *'धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे'।* सन्त और महात्मा ही समय-समय पर आकर समाज और व्यक्ति का धर्म निश्चित कर जाते हैं। धर्म ही मनुष्य को अधर्म करने से रोकता है, समाज के नैतिक स्तर को ऊँचा उठाता है और लोगों के लिए व्यवहार के नियम निश्चित करता है। धर्म के नियमों का पालन मनुष्य की स्वेच्छा पर निर्भर करता है। इसीलिए मनुष्य उन्हें मानने के लिए स्वयं तैयार हो जाता है। राज्य और सरकार द्वारा बनाए हुए नियम मनुष्यों पर लादे जाते हैं, इसीलिए मनुष्य उनके पालन में त्रुटि करता है। धर्म के नियमों को मनुष्यों ने समय-समय पर अपनी आवश्यकतानुसार बदला है। जैसे श्रीकृष्ण ने अर्जुन को युद्ध और कर्म करना ही धर्म बतलाया। महात्मा बुद्ध ने अहिंसा का प्रचार किया। जगद्‌गुरु शंकराचार्य ने वेदान्त का सहारा लिया। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने युग की माँग पूरी की। गुरु गोविन्द सिंह और समर्थ गुरु रामदास जैसे महात्माओं का उदाहरण भी हमारे सामने है।

तुलसीदास ने गुलामी से पीड़ित जनता को भक्ति सिखाकर शान्ति देने की कोशिश की, लेकिन तब भी वे बातों-ही-बातों में अपने भाव प्रकट किए बिना रह भी न सके। उनकी वाणी सुनिए –

कहा कहौं छवि आपकी, भले बने हो नाथ ।
तुलसी मस्तक तब नवै, धनुष बाण धरो हाथ ॥

ऊपर से तो यही मालूम होता है कि वे श्रीकृष्ण की मुरली की ओर संकेत कर रहे हैं। किन्तु क्या आपको यह विश्वास है कि तुलसी जैसे तत्त्वज्ञानी और दूरदर्शी अकारण या कोरी भावना में बहकर यह लिख जा सकते हैं? उन्होंने लोगों को धर्म बता दिया पर लोगों ने संकेत पकड़ा नहीं। प्रथम पंक्ति में कृष्ण केवल आधार हैं। लक्ष्य हैं बुद्ध और उनका चलाया बौद्ध धर्म। कितना मीठा और तीखा व्यंग्य तुलसी ने छोड़ा है – 'आप तो भले बन गए हो!' तुलसी के दिल की मार्मिक व्यथा तो समाज की दुर्दशा देखकर इसमें छिपी हुई है ही, साथ ही जनता के लिए युग-धर्म का संकेत भी है।

आज भी जनता अपने धर्म को समझ नहीं पा रही है। हर एक व्यक्ति धर्म के विषय में भ्रमित हो रहा है। जो धर्म-पालन करना भी चाहते हैं, उन्हें भी यह सूझ नहीं पड़ रहा है कि हिन्दू-धर्म की कौन-सी बात मानें, कौन-सी

नहीं। हिन्दू-धर्म तो ऐसा डेमोक्रैटिक धर्म है कि किसी को उसने अपनी बात कहने से रोका नहीं। सभी धर्मावलम्बी आ-आकर अपना प्रचार कर गए। स्वयं हिन्दू-धर्म में भी इतने मत, सम्प्रदाय, दर्शन और वाद हैं कि एक साधारण व्यक्ति को यह समझ में नहीं आता कि वह क्या माने, किस ओर जाए? साधु-महात्माओं और गुरुओं की ओर देखिए तो वे भी अनन्त और बिरले-बिरले। कोई वैरागी, कोई उदासी, कोई संन्यासी, कोई कर्मकाण्डी। कोई शिव के उपासक तो कोई शक्ति के। कोई वेदान्ताचार्य तो कोई भक्तिमार्गी। ऐसी स्थिति में साधारण जिज्ञासु के लिए यह महान् समस्या होती है कि वह किस मार्ग का अवलम्बन करे याने इस विशाल हिन्दू-धर्म के किस पक्ष को पकड़े।

इसलिए आज युग की यह आवश्यकता हो गई है कि सन्त-महात्मा जन-साधारण का मार्ग-प्रदर्शन करें। काल और परिस्थिति के अनुकूल जनता के लिए पालन-योग्य धर्म का स्वरूप निश्चित करें। आतिथ्य-धर्म, परोपकार, दया और अहिंसा के orthodox प्रचार और अंगीकरण से देश ने अपनी आजादी खो दी। दान, शान्ति और त्याग की नीति से हमने कैलास-मानसरोवर को दान कर दिया। जो ठण्ढा धर्म हमें कल्याण का मार्ग न दिखा सके, जीवन की आवश्यकताओं को साथ लेकर न चले, उस धर्म में हमारी आस्था रह ही कैसे सकती है? तब क्या वास्तव में हमारा धर्म केवल एक hypothesis है? क्या यह लोगों का मार्ग-प्रदर्शन कर सकने में असमर्थ है? क्या धर्म जीवन की दौड़ में हमें पिछड़े रहने की प्रेरणा और सीख देने वाला है?

इन बातों पर विचार करने की जरूरत है और जरूरत है कर्मनिष्ठ सन्तों की, जो आज के बच्चों का नेतृत्व कर सकें, जो आज के बच्चों को उनका सच्चा धर्म सिखला सकें, उन्हें सही जीवन और सही कर्म का रास्ता बतलाएँ। मनुष्य का कल्याण इस जगत् में भी हो और आगे भी। हम भौतिक मूल्यों को भी पहचानना सीखें और आध्यात्मिक मूल्यों को भी। जीवन की दौड़ में सबसे कदम मिला कर चल सकें। हिन्दू-धर्म का स्वरूप भी यही है। उसने जहाँ शरणागतों-निर्बलों की रक्षा और उन पर दया करना सिखलाया है, वहीं आततायियों और शठों को दण्ड देने का भी विधान बतलाया है।

श्रीराम को लोग इष्ट मानते हैं, पर उनके सिखाए और उपस्थित किए हुए आचरण व धर्म का पालन नहीं करते। श्रीराम विनय की मूर्ति और शील के आदर्श थे, पर उनकी भी ध्वनि सुनिए – 'जौ रन हमहि पचारै कोऊ, लरहिं सुखेन कालु किन होऊ।'

श्रीकृष्ण ने क्या किया? युद्ध को भी धर्म बताया, कर्मयोग की शिक्षा दी और संन्यास का आदर्श भी प्रस्तुत किया –

अनाश्रित: कर्मफलं कार्यं कर्म करोति य:।
स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रिय: ॥6.1॥

जो कर्मफल को न चाहते हुए करने योग्य कर्म को करता है, उसे ही श्रीकृष्ण संन्यासी और योगी कहते हैं। अग्नि त्यागने और कर्म को त्यागने वाले को न संन्यासी कहते हैं, न योगी।

इसलिए मेरा कहने और समझाने का तात्पर्य यह है कि आप सब धर्म की गहराई में उतरो, उसे पहचानो, और पहचान कर धर्म के प्रकाश में अपना मार्ग ढूँढ़ो। मार्ग बतलाया जा सकता है, पर चलने की तैयारी आपको ही करनी पड़ेगी। चलना आपको ही पड़ेगा। रोगी को दवा देना डॉक्टर का काम, पर खाना और लाभ उठाना तो उसके अपने वश की बात है।

समाज को सच्चे साधुओं और सन्तों की आवश्यकता है जो उसे मार्ग दिखला सकें। अनेक साधु-महात्मा जो इस पृथ्वी पर ईश्वर के दूत हैं, लोगों को ज्ञान का प्रकाश और सही जीवन का रास्ता दिखलाने की कोशिश कर रहे हैं। पर यदि हम अपने कान बन्द रखें तो उनका क्या दोष! हममें कुछ पाने, अपनाने का उत्साह न हो, कुछ ऊँची महत्त्वाकांक्षा न हो तो वे क्या करें।

सच्चा आध्यात्मिक जीवन तो हमें इस जीवन में सफलता पाने और सुखी बनने का रहस्य भी बतलाता है, साथ ही प्रकृति के कुछ अन्य गूढ़ और गुप्त रहस्य भी बतलाता है, जिससे हम अपनी शक्ति को और बढ़ा सकते हैं। अध्यात्म-मार्ग हमें भूतल पर विचरने के लिए पैरों को मजबूत बनाने का साधन सिखलाता है, साथ ही नभ में उड़ने की कला भी सिखाता है। धर्म कभी भी हमें अयोग्य, गुणहीन, डरपोक और अकर्मण्य बनना नहीं सिखलाता। प्राय: लोग यह समझते हैं कि धार्मिक बनने से और पूजा-पाठ करने से उनके साथी और दुनिया के लोग उन्हें हेय दृष्टि से देखने लगेंगे। उनकी हँसी उड़ेगी और वे बेवकूफ समझे जाएँगे। अभी तक साधारणत: यही होता रहा है, पर अब नहीं होने वाला। यदि हममें योग्यता हो तो लोग हमारी पूजा करने को बाध्य होंगे। हममें यदि प्रतिभा हो तो हम लोगों को झुका सकते हैं। यदि हम कुशल डॉक्टर हैं तो रोगी हमारे पास आएगा। यदि हमारे पास कुछ ऐसी प्रतिभा है, जिससे हम लोगों का कल्याण कर सकते हैं तो लोग अवश्य पास आएँगे। हमें

अपनी योग्यता से आज सिद्ध करना पड़ेगा कि आध्यात्मिक व्यक्ति समाज की बहुत भलाई कर सकता है, समाज को नई दिशा दे सकता है, लोगों को शान्ति प्रदान कर सकता है।

वास्तव में पढ़े-लिखे साधु ही दुनिया के लोगों को बदल सकते हैं। भारत में पहुँचे हुए साधु तो बहुत हैं। बहुतों को अनेक सिद्धियाँ भी प्राप्त हैं पर स्वामी विवेकानन्द जो काम थोड़े समय में कर सके, वह और कोई नहीं कर सका। जो काम आदि शंकराचार्य ने किया, वैसा कोई और संन्यासी नहीं कर सका।

धर्म और धार्मिकता का क्या अर्थ है, इसे लोग ठीक-ठीक नहीं समझ पा रहे हैं। कभी-कभी तो मनुष्य अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए धर्म की आड़ ले लिया करता है। हम धर्म के आदेशों का पालन स्वयं न भी करते हों तो भी दूसरों के लिए धर्म निश्चित कर देते हैं। स्वयं कभी जप या ध्यान कर उसके महत्त्व और परिणाम को भले ही न जाना हो, लेकिन कहेंगे जरूर कि भाई, सेवा सबसे बड़ा धर्म है, दया सबसे बड़ा धर्म है। बच्चों की सेवा ही धर्म है, स्त्री का सबसे बड़ा धर्म है पति सेवा, साधु को समाधि लगानी चाहिए और तपस्या करनी चाहिए, न कि पैसा छूना इत्यादि। पर यदि मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और तथ्य का अनुसन्धान करें तो ऐसा लगता है मनुष्य अपनी ही दुर्बलताओं पर पर्दा डालने के लिए दूसरों की निन्दा करता है। अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए वह धर्म का उपदेश करता है। अपने कार्य के औचित्य को सिद्ध करने के लिए धर्म की दुहाई देता है। दोष इसमें किसी का नहीं। अज्ञान के कारण ही मनुष्य ऐसा करता है। बिना ज्ञान के भ्रम का निवारण नहीं होता।

इसीलिए आज समाज में सच्चे गुरुओं और साधुओं की जरूरत है, जो लोगों को धर्म का मार्ग बतला सकें। धर्म के दो पक्ष हैं। एक वह है, जो समाज को धारण करता है। समाज को सुव्यवस्थित रखने के लिए, सुख और शान्ति बनाए रखने के लिए ही यह सिखलाया जाता है। दूसरा है वैयक्तिक धर्म, जिसका मनुष्य आत्मोन्नति, आत्म-साक्षात्कार और ज्ञान का प्रकाश पाने के लिए पालन करता है।

पहले पक्ष में वे सामाजिक नियम आते हैं, जो समाज के स्वास्थ्य, शान्ति और धनधान्य की वृद्धि के उद्देश्य से जनता में धर्म के ही अंग के रूप में प्रचारित किए जाते हैं। यह सामाजिक धर्म इस प्रकार का होता है कि इसका पालन सभी कर सकें।

धर्म का दूसरा पक्ष है व्यक्ति को उन्नत बनाना और उसे साधना का मार्ग बतलाना, जिससे उसे प्रकृति के गूढ़ रहस्यों और अपनी आत्मशक्ति का ज्ञान हो सके, वह स्वयं को पहचाने, छिपे हुए प्राकृतिक रहस्यों को जाने और आत्मतत्त्वदर्शी बन सके। यह मार्ग सर्वसाधारण के लिए नहीं, क्योंकि सब इस मार्ग पर जाने की क्षमता नहीं रखते। सब लोग व्यक्तिगत साधना के लिए समय लगाने के लिए प्रथम तो तैयार ही नहीं होते, फिर उनमें साधना के परिश्रम को सहने की शक्ति भी नहीं होती। पुन: उनमें साधना के लिए आवश्यक धैर्य नहीं होता कि वे दिन-प्रतिदिन धीरज के साथ महीनों और वर्षों तक अभ्यास चलाते रहें। लोग अपने स्वार्थ के कार्यों को छोड़कर क्या इसमें आने को तैयार हैं? क्या वर्षों तक बिना कुछ प्राप्त किए कोई आसन, प्राणायाम, जप और ध्यान में घण्टों समय लगाने को तैयार है? सफलता न मिलने पर भी धीरज न खोना – यह साधारण लोग नहीं कर सकते। जहाँ धन मिले, इज्जत मिले, पद मिले, प्रशंसा मिले, उस कार्य के लिए सब जा सकते हैं। किन्तु जहाँ राग-द्वेष से ऊपर उठना सिखाया जाए, निन्दा-स्तुति को समान समझना पड़े, शीत और गर्मी सहनी पड़े, जिह्वा के स्वाद से परे जाना पड़े, कई-कई घण्टे एक आसन में बैठना पड़े तो क्या यह जनसाधारण के सधने योग्य है?

साधारण लोगों के लिए नहीं, लेकिन जो जीवन में कुछ करने की अभिलाषा रखते हैं, जो कुछ अमूल्य वस्तु पाने की आकांक्षा करते हैं, जो त्याग और तपस्या का मूल्य जानते हैं, वे ही इस मार्ग में दीक्षित होते हैं। सबको नहीं, चुने हुए लोगों को ही यह विद्या बतलाई जाती है। साधकों के लिए है यह मार्ग। कठिनाइयाँ बहुत हैं और साधक की परीक्षा भी लेते हैं भगवान। किन्तु दृढ़प्रतिज्ञ, धैर्यवान् और उत्साही साधक को कोई कठिनाई बड़ी नहीं मालूम पड़ती। गुरु की कृपा से वह सरलता से सबको पार करता हुआ वैसे ही आगे बढ़ता जाता है, जैसे बच्चा स्वाभाविक रूप से नित-प्रति बढ़ता जाता है। हाँ, बिना गुरु के साधना सरल नहीं। गुरु का शिष्य बनना भी बड़ा कठिन कार्य है। उद्दालक के आरुणि की तरह जो शिष्य बन सके, वह गुरु से बहुत कुछ प्राप्त कर सकता है। ये सब बातें उच्च योग-साधना से सम्बन्धित हैं। धर्म के अन्तर्गत ही अध्यात्म-विद्या का यह मार्ग है।

इसके अतिरिक्त प्राइमरी योग भी है जो सबके लिए सुलभ और सुगम ही नहीं, वरन् आवश्यक भी कहा जा सकता है। योग हमारे भविष्य की संस्कृति

होगी। उसकी तैयारी अभी से शुरू हो गई है। योग की प्रारम्भिक एवं सरल क्रियाओं के अभ्यास से शरीर नीरोग और स्वस्थ रहता है, मानसिक शान्ति और मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त होता है, चित्त की एकाग्रता बढ़ती है, मन में दृढ़ता आती है, अधिक कार्य करने की क्षमता आती है, घबड़ाहट कभी नहीं होती, निद्रा और तामसिक गुण कम हो जाते हैं, कोई काम असम्भव नहीं मालूम होता, कभी थकान का अनुभव नहीं होता, मुख की कान्ति बढ़ती है, हृदय की बीमारी कभी नहीं हो सकती और मन में प्रसन्नता तथा हल्केपन का सदैव अनुभव होता है।

भौतिकवादियों के लिए तो योगमार्ग एक ऐसा रास्ता है, जिससे वे सभी ईश्वरीय नियमों को प्रत्यक्ष जान सकते व उनका परीक्षण कर सकते हैं। योग-मार्ग स्थूल का आधार लेकर चलता है और वह स्थूल आधार है मनुष्य का शरीर। शरीर प्रयोगशाला याने लेबोरेटरी है और हमारा अन्त:करण है ऐपरेट्स। इसी लेबोरेटरी में एक योगी ईश्वरीय नियमों की खोज व परीक्षा करता है। यह प्रयोग सभी लोग कर सकते हैं। इन प्रयोगों को करने के लिए न आपको धन की जरूरत है और न महँगे साधनों की। बाहर की ऐसी किसी वस्तु की जरूरत नहीं, जो सबको न मिल सके।

युवकों को तो मेरी सलाह है कि वे अपने जीवन का अमूल्य समय बर्बाद न कर योग का आरम्भिक अभ्यास गुरु से पूछकर एकदम शुरू कर दें। ये चीजें बुढ़ापे की नहीं हैं। योग के अभ्यास से नुकसान कुछ भी नहीं, लेकिन फायदा बहुत है। आप खुद करके देखें कि फायदा है या नुकसान। किसी काम को करने पर ही फायदा और नुकसान मालूम पड़ता है। योगाभ्यास से निश्चय ही शरीर मजबूत और दीर्घायु होता है। *'नास्ति योगात्परं बलं'* – योग से बढ़ कर दूसरा बल नहीं।

योगियों का कथन है कि मानव-शरीर कच्चा घड़ा है। इसे योग की अग्नि में तपा कर पका न लिया जाए तो भोगों के जल में यह गल जायेगा। जो दीर्घजीवी, स्वस्थ और सबल रहना चाहते हैं उन्हें योग की क्रियाएँ अवश्य करनी चाहिए। योग के अभ्यास में बड़ी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इसमें आपको किसी भी विशेष आडम्बर और झंझट की जरूरत नहीं है। अमीर-गरीब सब इसका अभ्यास कर सकते हैं।

प्रतिदिन घण्टों समय हम व्यर्थ की गप-शप और हानिकारक मनोरंजनों में व्यतीत कर देते हैं। होटल, सिनेमा, क्लब, ताश, सैर-सपाटे में हम कितना

समय बिता देते हैं। किन्तु यदि प्रतिदिन आधे घंटे भी हम योग के अभ्यास में लगाएँ, शरीर की वास्तविक सेवा में लगाएँ तो अत्यन्त लाभ होगा। स्वास्थ्य और शक्ति प्राप्त होगी, दवा और डॉक्टरों की फीस के पैसे बचेंगे। शरीर को अनेकों कष्टों से छुटकारा मिल जायेगा।

विज्ञान की उन्नति से मानवता का बहुत कल्याण हो रहा है, इसमें सन्देह नहीं। पर विज्ञान के कारण हम लोगों की आदतें भी बिगड़ती जा रही हैं। पहले के मनुष्यों का स्वास्थ्य इसलिए अच्छा रहता था कि उन्हें जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए शारीरिक श्रम करना पड़ता था। शारीरिक श्रम अच्छे स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है। आज विज्ञान की मदद से हम कम-से-कम श्रम करने लग गए हैं। पहले मनुष्यों को बहुमुखी परिश्रम करना पड़ता था, जिससे उनके शरीर के सब अवयवों की कसरत हो जाया करती थी। पर आज के औद्योगिक और वैज्ञानिक युग में श्रम और कार्य में भी स्पेशलाइज़ेशन की प्रथा चल पड़ी है। इससे शरीर के एक अंग पर अत्यधिक श्रम और बोझ पड़ने से वह कालान्तर में कमजोर और रोगी हो जाता है।

आजकल आविष्कार भी कुछ ऐसे हो रहे हैं कि मनुष्य को कम-से-कम सहना पड़े और कम-से-कम शक्ति लगाकर अधिक-से-अधिक कार्य हो। परिणाम यह है कि हमारी सहन-शक्ति दिनोंदिन क्षीण होती जा रही है। भौतिक समस्याएँ तो सुलझ रही हैं, पर मानसिक समस्याएँ बढ़ रही हैं। समय आ रहा है जब मनुष्य स्वास्थ्य के बल पर नहीं, दवाओं के बल पर जियेंगे। इन्जेक्शन की जगह अब ऐसी दवाएँ निकल गई हैं जो त्वचा पर मलते ही शरीर के अन्दर प्रविष्ट हो जायेंगी और तत्काल प्रभाव करेंगी। विज्ञान हमारे जीवन में सुख और भोग के नए-नए साधन प्रस्तुत कर रहा है। पर इनसे मनुष्य का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य क्षीण होता जा रहा है। अन्य दोषों को छोड़ दीजिए। मनुष्य का स्वावलम्बन घटता जा रहा है और मनुष्य पंगु और गुलाम होता जा रहा है। मनुष्य मशीनों पर निर्भर रहकर अपनी आदतों से फिर लाचार होकर कष्ट उठाएगा।

जीवन को प्रकृति से प्राप्त साधनों द्वारा ही कैसे पूर्ण और ज्ञानमय बनाया जा सकता है, यह विद्या हमारे पूर्वज जान पाए थे। भारत की अध्यात्म-विद्या सब विद्याओं से श्रेष्ठ विद्या है। इसका अनुसन्धान ऋषि-मुनियों ने किया था और कागज न रहने पर भी भोजपत्रों पर उस ज्ञान को लिखकर हमारे लिए सुरक्षित रख गए।

मेरा काम है धर्म और योग में आपकी रुचि पैदा करना तथा आपके खोए हुए पराजित विश्वास को जगा देना। आप स्वयं इन बातों पर सोचें, धर्म को समझने का प्रयत्न करें और जीवन में उसका व्यवहार भी करें। इसके पूर्व की कक्षाओं में भी योग और धर्म के महत्त्व पर प्रकाश डाल चुकी हूँ। चूँकि पूर्व के प्रवचनों में पवनमुक्तासन, सूर्यनमस्कार और चित्त को एकाग्र करने के उपाय बतला चुकी हूँ, इसलिए आज आपको प्राणायाम करने की विधि तथा स्फूर्ति देने वाली निद्रा (योगनिद्रा) के विषय में बतलाऊँगी।



प्राणायाम-विज्ञान

आसन और प्राणायाम शरीर को स्वस्थ और ठीक दशा में रखने के लिए आवश्यक हैं। संसारी को भी स्वस्थ शरीर की जरूरत है और परमार्थी को भी। बिना स्वस्थ शरीर के न इस दुनिया में कोई कार्य किया जा सकता है न भगवद्-प्राप्ति ही हो सकती है। रोगी व्यक्ति भजन-पूजन भी नहीं कर सकते। अच्छे स्वास्थ्य की कामना तो सभी करते हैं, लेकिन ज्ञान न रहने के कारण कष्ट भोगते हैं। स्वास्थ्य बनाने का उपाय योग में बतलाया गया है।

वायु ही हमारा जीवन है, यह सभी जानते हैं। भोजन और पानी के बिना मनुष्य कुछ समय जीवित रह सकता है, किन्तु श्वास लिए बिना नहीं। हम श्वास लेते हैं, जिससे वायु अन्दर जाती है। वायु में ऑक्सीजन रहती है, जिसकी शरीर में बहुत आवश्यकता है। वायु में मिली हुई ऑक्सीजन ही इस संसार के सब प्राणियों के जीवन का आधार है। यदि वायु में ऑक्सीजन न हो तो सृष्टि के सभी जीवों का जीवन नि:शेष हो जाएगा। ऑक्सीजन से संयुक्त होने पर वस्तु जलती है। धीरे-धीरे स्वयं जलते रहने की क्रिया का नाम ही जीवन कहा जा सकता है।

हमारे शरीर के सभी तन्तु धीरे-धीरे ऑक्सीजन के साथ संयुक्त होते रहते हैं। इसके परिणाामस्वरूप बहुत से तन्तु बराबर जलते और नष्ट होते रहते हैं। इससे शरीर में गर्मी पैदा होती और शरीर का ताप बना रहता है।

हमारे शरीर में सब अंगों में रक्त का परिभ्रमण होता रहता है। सारे शरीर में रक्त की नलियों और कोशिकाओं का जाल-सा बिछा हुआ है। कोशिकाएँ बाल से भी बारीक खून की नलियाँ हैं। इन कोशिकाओं की दीवारें अत्यन्त पतली और झिरझिरी होती हैं। इन दीवारों से खून से एक तरल पदार्थ निकल कर तन्तुओं में पहुँचता है। तन्तु उसमें से पोषक तत्त्व तो ले लेते हैं, किन्तु अपना गन्दा तत्त्व रक्त की नलियों में छोड़ देते हैं। इसी कारण खून का रंग नीला हो जाता है। खून से ऑक्सीजन गैस निकल कर तन्तुओं में चली जाती है और उसकी जगह कार्बन-डाइ-आक्साइड आकर

रक्त में प्रवेश कर जाती है। यह कार्बन आक्सीजन के द्वारा बेकार तन्तुओं के जलने से पैदा होती है।

यह रक्त शरीर की सब गन्दगियों को समेटता हुआ फिर शिराओं के द्वारा पहले हृदय में लौटता है। फिर हृदय से वह फेफड़ों में छोटी-छोटी नलियों द्वारा भेजा जाता है। फेफड़ों की रक्तनलिकाएँ वायु की थैलियों के सम्पर्क में आती हैं। वायु और रक्त, दोनों की झिल्लियाँ अत्यन्त झिरझिरी याने सूक्ष्म होने से रक्तनलिकाएँ वायु की थैलियों से पुन: आक्सीजन ग्रहण कर लेती हैं और बदले में जलवाष्प और कार्बन-डाइ-आक्साइड दे देती हैं। यही कार्बन और जल-वाष्प फिर नि:श्वास के साथ शरीर के बाहर निकल जाता है।

हमारे शरीर की प्रत्येक चेष्टा का कारण शरीर के तन्तुओं (cells) में रासायनिक परिवर्तन है। जब कोई पेशी सिकुड़ती है या किसी ग्रन्थि से रस निकलता है या हम कुछ सोचते हैं, उस समय उस कार्य से सम्बन्धित अवयवों में रासायनिक परिवर्तन होता है। रासायनिक परिवर्तन का अर्थ ऑक्सीडेशन की क्रिया है। रक्त के द्वारा जो ऑक्सीजन सारे शरीर के अंगों में पहुँचता है, वह संयुक्त पदार्थों से मिलकर उन्हें तोड़-फोड़ डालता है। इस प्रकार की टूट-फूट से अनेक ऐसे पदार्थ उत्पन्न होते हैं, जो शरीर के लिए बेकार होते हैं। उनका शरीर के बाहर निकल जाना आवश्यक होता है। ये पदार्थ रक्तनलिकाओं में मिल कर अशुद्ध रक्त के रूप में दाहिने हृदय से होते हुए फेफड़ों में पहुँचते हैं। वहाँ से वायु-नलिकाओं में पहुँच कर प्रश्वास के साथ शरीर के बाहर निकल जाते हैं।

यह बहुत संक्षेप में ऑक्सीडेशन की क्रिया बतलाई। प्राणायाम सीखने से पहले थोड़ा-सा शरीर-विज्ञान का ज्ञान रखना यदि आवश्यक नहीं, अच्छा जरूर है। यह तो आपकी समझ में आ गया होगा कि ऑक्सीजन शरीर के लिए अत्यन्त आवश्यक है। वास्तव में शरीर का स्वास्थ्य शरीर के आन्तरिक यन्त्रों, ग्रन्थियों, अवयवों इत्यादि के सु-संचालन पर निर्भर करता है। शरीर के मुख्य कार्यों में से एक है श्वास और प्रश्वास की क्रिया। यदि श्वसन-क्रिया रुक जाए तो मनुष्य की कुछ मिनटों में मृत्यु हो सकती है।

इसलिए यह आवश्यक है कि श्वसन-क्रिया का सम्पादन करने वाले सभी अवयव स्वस्थ और शक्तिशाली हों। प्राय: श्वसन-क्रिया के अवयवों की दुर्बलता के कारण श्वसन-कर्म का सम्पादन उचित ढंग से नहीं हो पाता और श्वास-सम्बन्धी अनेक रोग मनुष्य को धर दबाते हैं। यह क्रिया ठीक न

होने से या इनका सम्पादन करने वाले अवयवों की कमजोरी से न्यूमोनिया, प्लुरिसी, क्षयरोग, खाँसी, गले के रोग, जुकाम, इन्फ्लुऐंजा, नाक के रोग इत्यादि हो जाते हैं।

इन रोगों को दूर करने और सम्बन्धित अवयवों को मजबूत बनाने के लिए प्राणायाम करना चाहिए। प्राणायाम करने वाले लोगों को ये रोग नहीं होते। इन रोगों का उपचार भी प्राणायाम के द्वारा ही होता है। 'अष्टांग योग' में प्राणायाम का चौथा नम्बर आता है। अब, प्राणायाम कहते किसे हैं, पहले यह समझ लें तो अच्छा रहेगा।

श्वास को अन्दर लेना, श्वास को बाहर निकालना और श्वास को रोकना – इन तीन क्रियाओं का सामूहिक नाम ही प्राणायाम है। प्राण का अर्थ है वायु। जो वायु हमारा जीवन धारण करती है उसे प्राणवायु कहते हैं। प्राय: लोग प्राणायाम का नाम सुनकर डर जाते हैं। कुछ ऐसी भ्रान्त धारणाएँ उनमें फैली हुई हैं कि प्राणायाम करने वालों को प्राणवायु खींचकर ब्रह्मरन्ध्र में चढ़ानी पड़ती है और उससे ब्रह्मरन्ध्र फटने और मृत्यु हो जाने का अंदेशा रहता है। वास्तव में बात ऐसी नहीं। मैं आपको कोई खतरे की चीज नहीं बतलाने जा रही। ऐसी चीजें भला किसी को क्यों बतलाई जाएँगी, जिनसे जीवन पर खतरा हो?

इसलिए यदि प्राणायाम के विषय में आपको किसी तरह का भी भय हो तो उसे आप अपने मन से निकाल दीजिए। वैसी चीजें कभी भी आप योग के साहित्य में नहीं पाएँगे। हाँ, कुछ क्रियाएँ ऐसी जरूर हैं जो गुरु ही अधिकारी शिष्यों को सिखलाते एवं अपने सामने अभ्यास करवाते हैं, पर जनसाधारण के लिए जो प्राणायाम बतलाया जाता है या जिसे यहाँ बतलाऊँगी, उसमें किसी प्रकार का खतरा नहीं है।

जैसा पहले बतलाया, प्राणायाम में केवल तीन क्रियाएँ होती हैं, जिन्हें मनुष्य बराबर करता रहता है, चाहे वह प्राणाायाम करे या न करे। वह है श्वास लेना, श्वास छोड़ना और जितनी देर आराम के साथ हो सके श्वास कुछ देर रोकना। लेना, निकालना और रोकना, यही तो प्राणायाम है। सभी प्राणायाम सिर्फ इन्हीं तीन क्रियाओं के योग से बने हैं। आप इस बात को अच्छी तरह समझ लें कि प्राणायाम करने से स्वास्थ्य बनता है, बिगड़ता नहीं। प्राणायाम की विधि सविस्तार बतलाऊँगी।

प्राणायाम का अभ्यास करने से फेफड़े मजबूत होते हैं, उनका लचीलापन बढ़ता है। शरीर में अधिक गर्मी पैदा होती है, जिससे शरीर को फायदा

पहुँचता है। प्राणायाम करने से अधिक-से-अधिक मात्रा में आक्सीजन शरीर में पहुँचता है। जितना अधिक आक्सीजन पहुँचता है, उतना ही अधिक फिर कार्बन भी शरीर से बाहर निकलता है। अधिक कार्बन के शरीर में पैदा होने और बाहर निकलने का अर्थ है अधिक मात्रा में शरीर की गन्दगी का बाहर निकल जाना।

अधिक परिश्रम करने से हमारे शरीर में जो रासायनिक परिवर्तन होता है, टूट-फूट होती है, शक्ति का ह्रास होता है, उस कमी की प्राणायाम आक्सीजन की अधिक सप्लाई कर पूर्ति करता है।

प्राणायाम करने से दिमाग के स्नायु-मण्डलों पर भी प्रभाव पड़ता है। मस्तिष्क तेज होता है तथा उसके विकार दूर होते हैं। छोटे मस्तिष्क और बड़े मस्तिष्क की बहुत सी सुप्त-शक्तियाँ भी प्राणायाम के द्वारा जागृत की जाती हैं। प्राणायाम के द्वारा पिट्यूटरी और पीनियल ग्रन्थियों को विकसित किया जाता है।

श्वास-सम्बन्धी अवयवों के रोगों में तो प्राणायाम फायदा पहुँचाता ही है, पर इसके अतिरिक्त कान, जिह्वा, नेत्र और गले के रोगों (गण्डमाला इत्यादि) में भी फायदा पहुँचाता है। आसनों की तरह प्राणायाम के भी निषेधात्मक (preventive) और उपचारात्मक (curative) दो स्वरूप हैं। प्राणायाम अवयवों को मजबूत बनाकर उन्हें रोगों के आक्रमणों से बचने की शक्ति देता है। और यदि रोग हो गया हो तो उन्हें भी प्राणायाम की क्रियाओं से दूर किया जा सकता है। जानकार और अधिकारी व्यक्ति से प्राणायाम सीखकर रोगमुक्ति प्राप्त की जा सकती है। गले का भारीपन, टॉन्सिल विकार, गालों के छाले, कानों का बहरापन इत्यादि रोग भी प्राणायाम के द्वारा दूर किये जा सकते हैं।

प्राणायाम-क्रिया का प्रभाव श्वसन-यंत्रों के अलावा भी अन्य कई यंत्रों और अवयवों पर पड़ता है। प्राणायाम करने से आमाशय, लिवर, किडनी और आँतों पर भी प्रभाव पड़ता है। उन अंगों के भी तीव्र संचालन होने से रक्त परिभ्रमण की गति तेज हो कर आक्सीडेशन की क्रिया जल्दी-जल्दी होने लगती है। शरीर की गन्दगी को बाहर निकालने में प्राणायाम मदद पहुँचाता है। प्राणायाम जठराग्नि और आँतों की सक्रियता बढ़ाता है। इससे कब्जियत में भी फायदा पहुँचता है। इसलिए प्राणायाम के अभ्यास न केवल श्वसन-यंत्रों और उसके रोगों में ही लाभ पहुँचाते हैं, वरन् सम्पूर्ण शरीर के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं।

साधारणत: जब हम श्वास बाहर निकालते हैं, उस समय 30 घन इंच वायु तो बाहर निकलती है, किन्तु 200 घन इंच वायु फेफड़ों में ही रह जाती है। श्वास अन्दर लेने में भी प्रतिवार 30 घन इंच वायु ही और हम अन्दर लेते हैं। इससे होता यह है कि बहुत अधिक वायु बराबर हमारे फेफड़ों के अन्दर ही रह जाती है, जिसको बाहर निकालकर बदले में शुद्ध हवा नहीं भरी जा पाती। लेकिन प्राणायाम की क्रियाएँ कुछ ऐसी हैं, जिनसे अत्यधिक वायु बाहर निकाली और भरी जाती है, और इस तरह भीतर रहने वाली वायु शुद्ध हो जाती है। भस्त्रिका और कपालभाति के द्वारा इस कार्य को किया जाता है।

एक और बात है। जो वायु हम अन्दर लेते हैं, उसमें 21% ऑक्सीजन और जिसे बाहर निकालते हैं उसमें 16% ऑक्सीजन की मात्रा रहती है, अर्थात् प्रतिश्वास हम केवल 5% ऑक्सीजन ही शरीर में खर्च कर पाते हैं, जो कम है। प्राणायाम की क्रियाओं से हम जल्दी-जल्दी और अधिक मात्रा में शरीर को आक्सीजन की सप्लाई दे सकते हैं।

प्राणायाम से मस्तिष्क के रक्त की आपूर्ति अधिक होती है। प्राणायाम करते समय मस्तिष्क थोड़ी देर निश्चल हो जाता है। इससे मस्तिष्क को विश्राम और अवकाश मिलता है। 'मस्तिष्क का कुम्भक' करने से relaxation होता है। अन्य किसी भी उपाय से मस्तिष्क को विश्राम नहीं मिलता, क्योंकि मस्तिष्क में विचार निरन्तर आते रहते हैं। प्राणायाम करते समय मन निश्चल हो जाता है और विचार एकदम थम जाते हैं। इसीलिए प्राणायाम को चित्त की एकाग्रता का साधन माना गया है।

प्राणायाम से nervous control भी प्राप्त होता है। स्नायु-मण्डल के नियन्त्रित होते ही स्नायुओं के तनाव व दोष दूर होते हैं। असीम स्नायविक बल भी प्राप्त होता है। Nervous system को tone up करने के लिए इससे बढ़कर और कोई सुन्दर उपाय नहीं है। प्राणायाम से नाड़ियों की शुद्धि होती है, जो योग, ध्यान व समाधि के अभ्यासी के लिए आवश्यक है। प्राणायाम ही मल-शुद्धि का साधन है। योग में इसे नाड़ीशोधन क्रिया कहते हैं।

प्राणायाम का मन से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि प्राण को regulate किया जाए तो मन अपने आप वश में आ जाता है। प्राण नियन्त्रित करने से मन की चंचलता रुक जाती है। प्राणों पर जय होने से मन पर भी जय हो जाती है।

प्राणायाम एक प्रकार से श्वसन-क्रियाओं का व्यायाम है। इसलिए प्राणायाम प्रात:काल स्वच्छ वायु में करना चाहिए। आजकल के यन्त्रमय

औद्योगिक जगत् में प्राय: लोगों को शुद्ध वायु नहीं मिल पाती है। लोगों का जीवन व्यस्त और कृत्रिम हो गया है। इसलिए अधिकतर मनुष्य हमेशा जल्दी में और घबराहट में रहा करते हैं। इसका हृदय और फेफड़ों पर नकारात्मक परिणाम पड़ता है। हम कभी गहरी और पूरी श्वास नहीं लेते। श्वास प्राय: अधूरी और जल्दी-जल्दी चलती रहती है। किसी को ऑफिस जाने की जल्दी, किसी को बस पकड़ने की जल्दी, किसी को स्कूल जाने की जल्दी। एक प्रकार से सभी भय, घबराहट तथा मानसिक तनाव की अवस्था में रहते हैं।

प्राय: मनुष्यों को ऐसे भी बहुत-से कार्य करने पड़ते हैं, जिनमें कई-कई घण्टे झुके रहना पड़ता है। हाथ और आँखों का कार्य साथ-साथ करने से प्राय: आगे झुकना ही पड़ता है, जिससे फेफड़ों पर दबाव पड़ता है। वे पूरी तरह फैल और सिकुड़ नहीं पाते। दीर्घकाल तक ऐसा ही कार्य करते रह जाने से फेफड़ों में कमजोरी आने लगती है। साथ-साथ पाचन शक्ति भी क्षीण होने लगती है। इसका स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

इसलिए आप देखें कि प्राणायाम करना सभी के लिए लाभदायक ही नहीं, आवश्यक भी है। अब प्राणायाम कितने होते हैं, उनके करने की विधि क्या है, किस प्राणायाम को किस रोग में करना चाहिए, इत्यादि विभिन्न बातों को एक-एक कर सविस्तार समझाऊँगी।

प्राणायाम के लिए कुछ बातें जाननी आवश्यक हैं। प्राणायाम करने का स्थान, समय, आसन, मुद्रा और विधि। प्राणायाम करने के लिए आपको एक कम्बल भर की और जरूरत पड़ेगी।

स्थान के विषय में बस यही कहना है कि जहाँ तक हो सके शुद्ध वायु में करें। मन्दी दूषित वायु जैसे धुएँ के स्थान, गन्दगी और बदबू की जगह पर न करें। साथ ही बहुत तेज वायु में भी प्राणायाम नहीं करना चाहिए। गर्मियों में खुले स्थान में और जाड़ों में कमरे के अन्दर ही करना उचित है। प्राणायाम जमीन पर या चौकी पर कम्बल का आसन बिछाकर करना चाहिए। बिस्तर में प्राणायाम न करें। खाट या पलंग पर बैठकर भी न करें।

किस देश में, किस स्थान पर, कैसे मठ में, योग और उसकी क्रियाओं का अभ्यास करना चाहिए यह 'हठयोग-प्रदीपिका' में लिखा है। किन्तु आज समय और परिस्थिति के अनुसार उनमें यथासाध्य हेर-फेर करना आवश्यक है। एक बात और याद रखें कि एकान्त स्थान में प्राणायाम का अभ्यास करने से अधिक फायदा पहुँचता है।

प्राणायाम करने का उत्तम समय सूर्योदय से पूर्व ब्रह्ममुहूर्त है। शौच व स्नान से निवृत्त होकर पहले जो आसन करते हैं, वे आसन कर लें। आसन करने के पश्चात् प्राणायाम करें। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि प्राणायाम खाली पेट रहने पर किया जाता है। भोजन के कम-से-कम चार घण्टे के उपरान्त प्राणायाम करना चाहिए। योग का 'विशेष-अभ्यास' करने वाला दिन में चार बार, ब्रह्ममुहूर्त, मध्याह्न, सन्ध्या व अर्ध रात्रि में भी अभ्यास कर सकता है। योगाभ्यास के इच्छुक को हठयोग-प्रदीपिका में बताए हुए सम्पूर्ण नियमों के साथ प्राणायाम करना चाहिए। साधारण लोगों के लिए कोई विशेष नियम नहीं है।

प्राणायाम का अभ्यास गर्मियों में कम और जाड़ों में कुछ बढ़ा देना चाहिए।

आसन और मुद्रा – आसन का यहाँ मतलब है बैठने की भंगिमा। किस प्रकार से बैठकर प्राणायाम करना चाहिए। प्राणायाम के लिए पद्मासन और सिद्धासन उत्तम आसन माने जाते हैं। जिनसे पद्मासन लग सके वे पद्मासन लगा कर करें। जो पद्मासन न कर सकते हों, वे सिद्धासन में करें। जिन्हें दोनों में से एक भी न मालूम हो, उन्हें किसी प्रकार से भी शान्त-चित्त होकर बैठकर प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। केवल एक बात का ध्यान रखना चाहिए कि बैठते समय रीढ़ की हड्डी बिल्कुल सीधी रहे। सिर भी सीध में हो। आसन जो भी हो, आरामदायक हो। बीच में शरीर की स्थिति बदलने की जरूरत न पड़े।

प्राणायाम करते समय आँखें बिल्कुल बन्द रहेंगी। दाहिना हाथ तो नाक पकड़ने के लिए स्वतन्त्र रखा जाता है, किन्तु बायाँ हाथ सीधा करके घुटने के पास या ऊपर रखें। अथवा बाएँ हाथ को गोद में ऐसे रखें, जिससे हथेली का भाग ऊपर की ओर रहे।

प्राणायाम में आपको नाक के छिद्रों को भी बन्द करने की जरूरत पड़ेगी। यह काम दाहिने हाथ से किया जाता है तथा नाक को विशेष तरीके से पकड़ा जाता है। वैसे आप किसी प्रकार से नाक पकड़ या बन्द कर सकते हैं। पर उसकी सही विधि इस प्रकार है।

नासिका के बाएँ छिद्र को जब बन्द करना हो तो दाहिने हाथ की अनामिका उंगली से दबाकर बन्द करें। जब दाहिने छिद्र को बन्द करना हो तो दाहिने हाथ के अंगूठे से दबा कर बन्द करें। यदि दोनों छिद्र बन्द करने हों तो अनामिका और अंगूठे के सहयोग से बन्द करें। तर्जनी और मध्यमा भ्रूमध्य पर टिकी रहेंगी और कनिष्ठा उंगली खुली हुई रहेगी।

जिस प्राणायाम में नाक को पकड़ने की जरूरत न पड़े, उसमें दोनों हाथ आराम के साथ जाँघों या घुटनों पर रखें।

श्वसन-क्रिया एक ऐसी क्रिया है, जिसे सभी करते हैं। श्वास सभी लेते रहते हैं। इसलिए प्राणायाम की कुछ सरल क्रियाओं का अभ्यास गँभीर रोगी भी कर सकता है। चुपचाप बिस्तर पर लेटे-लेटे अशक्त व्यक्ति भी कुछ अभ्यास कर सकते हैं। खूब धीरे-धीरे वायु को फेफड़ों में भरना और फिर धीरे-धीरे फेफड़ों को खाली कर देना। इसे सभी कर सकते हैं। वास्तव में जाने-अनजाने और बिना ध्यान दिए ही इस क्रिया को हम लोग बराबर करते ही रहते हैं। सिर्फ यह है कि उसे सही ढंग से करना प्राणायाम सिखलाता है।

प्राणायाम के प्रकार और उनके करने की विधि अब आप सीखिए। सबसे पहले यह जानना आवश्यक है कि प्राणायाम मुख्य रूप में तीन होते हैं – पूरक, रेचक और कुम्भक।

पूरक, रेचक और कुम्भक क्या है? जब हम श्वास अन्दर लेते हैं तो उस क्रिया का नाम पूरक है। जब श्वास बाहर निकालते हैं तो उसे रेचक कहते हैं। और जब श्वास को रोक लिया जाता है याने जिस अवस्था में न रेचक होता है न पूरक, उसे कुम्भक कहते हैं।

कुम्भक दो तरह का होता है। एक तो श्वास को अन्दर लेकर अन्दर ही वायु को रोक रखना। इसे अन्तर्कुम्भक कहा जाता है। दूसरा, श्वास छोड़ देने के पश्चात् ही श्वसन-क्रिया को कुछ देर बन्द कर देना या बाहर ही श्वास को रोककर रखना। इसे कहते हैं बहिर्कुम्भक। आगे से प्राणायाम की इन तीन क्रियाओं के लिए मैं पूरक, रेचक और कुम्भक शब्दों का प्रयोग करूँगी। अब यथाविधि प्राणायाम के सब प्रकार, उनके नाम और करने की विधि सुनें।

मुख्य प्राणायाम हैं – 1 सुखपूर्वक, 2 समवेत, 3 सहित, 4 अतिरिक्त, 5 नाड़ी-शोधन, 6 चन्द्रांग, 7 सूर्यांग, 8 भ्रामरी 9 उज्जायी, 10 शीतली, 11 शीतकारी, 12 भस्त्रिका, 13 कपालभाति, 14 मूर्च्छा, 15 सूर्यभेद, 16 केवली, 17 प्लाविनी, 18 चतुर्थ, 19 केवल कुम्भक, 20 अन्त:प्राणायाम।

पहला – सरल या सुखपूर्वक

पद्मासन अथवा सिद्धासन में शान्तिपूर्वक बैठ जाइए। मन को भी अच्छी तरह शान्त कर लीजिए। चित्त को एकाग्र कर लीजिए। प्रसन्नचित्त होकर प्राणायाम का अभ्यास कीजिए। आपको आशातीत लाभ होगा। आधे मन, लापरवाही

योगनिद्रा और प्राणायाम विज्ञान

माँ योगशक्ति

स्वामी सत्यानन्द जी की शिक्षाओं से

अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल, राजनाँदगाँव द्वारा प्रकाशन – 1962

बिहार योग विद्यालय द्वारा प्रकाशन – 2013



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

योगनिद्रा और प्राणायाम विज्ञान

यह पुस्तक बम्बई में सन् 1961 में आयोजित 'अध्यात्म शिक्षण शिविर' में माँ योगशक्ति द्वारा दिये गये प्रवचनों का संकलन है। इन प्रवचनों में प्राणायाम की सरल, स्वास्थ्यप्रद विधियों के साथ-साथ स्वामी सत्यानन्द जी द्वारा आविष्कृत योगनिद्रा की तकनीक पर चर्चा की गई है।

–*सम्पादक*

तथा जल्दीबाजी की अवस्था में प्राणायाम का अभ्यास वर्जित है। एक मिनट शान्त बैठ कर मन की पूरी तैयारी कर लीजिए।

नाक पकड़ने के लिए पहले बताए हुए तरीके से हाथ को तैयार रखें। पहले नासिका के दाहिने छिद्र को बन्द कर बाएँ से खूब धीरे-धीरे जितनी श्वास आप अन्दर ले सकते हैं, लें। पूरी हवा जब फेफड़ों में भर जाए तब बायाँ छिद्र बन्द कर लें और दाहिने छिद्र को खोल दें और दाहिने से श्वास को धीरे-धीरे बाहर निकाल दें। जैसे ही पूरी श्वास बाहर निकल जाए, वैसे ही उसी छिद्र याने दाहिने से पुन: धीरे-धीरे श्वास अन्दर लें। फिर दाहिना बन्दकर बाएँ छिद्र से श्वास बाहर निकालें। पुन: बाएँ नाक से श्वास अन्दर लें और दाहिने से बाहर निकालें। इसी प्रकार पन्द्रह से बीस बार तक यह क्रिया दुहराते रहें। इसमें याद रखने की बात यह है कि जिससे रेचक किया जाए, उसी से पूरक करें। रेचक और पूरक एक नाक से हो सकता है, किन्तु पूरक और रेचक दोनों एक समय एक नासिका-छिद्र से नहीं होना चाहिए। यदि एक से पूरक करें तो दूसरे से रेचक। लेकिन जिससे रेचक करें, उसी से पूरक होना चाहिए।

इस अभ्यास के करने से सुषुम्ना नाड़ी चलने लग जाती है। दोनों नाकों से वायु का प्रवाह समान हो जाता है। प्राणायाम के सब लाभ इससे होते हैं। जिन लोगों की नाक सोते समय बन्द हो जाया करती है इस अभ्यास से खुल जाती है। सर्दी-खाँसी की प्रकृति वालों को जरूर नित्य पाँच-सात मिनट इसका अभ्यास करना चाहिए। सर्वप्रथम इसी प्राणायाम को करना चाहिये।

दूसरा – समवेत प्राणायाम

प्रथम प्राणायाम के पश्चात् इसे करें। सब नियम पूर्ववत्। अब आप नाक के दोनों छिद्रों से एक-साथ धीरे-धीरे पूरक करें। जितनी वायु फेफड़ों में भरी जा सके, भर लें। एक सेकेण्ड श्वास रोक कर दोनों नाकों से फिर धीरे-धीरे रेचक कीजिए। पुन: पहले की तरह कीजिए। फिर रेचक कीजिए। इसी प्रकार दस-पन्द्रह बार तक इस क्रिया को दुहराइए।

तीसरा – सहित प्राणायाम

ऊपर बताए गए तरीके से पहले पूरक कीजिए। फिर दोनों छिद्र बन्द कर श्वास को रोक लीजिए। जितनी देर आराम के साथ आप वायु को फेफड़ों के अन्दर रोक सकें, रोक लीजिए। याद रहे कि आपको जबरदस्ती नहीं करनी

है। जितनी देर आराम के साथ, बिना कष्ट का अनुभव किये, रोक सकें, रोके रहिए। रोकना कोई ताज्जुब की बात नहीं। कुछ देर तक श्वास सभी रोक सकते हैं। हाँ, जितना ही अभ्यास बढ़ता जायेगा, आपके फेफड़ों का लचीलापन भी बढ़ता जायेगा और उनकी वायु को धारण करने की शक्ति भी उतनी ही बढ़ेगी। फिर धीरे-धीरे दोनों छिद्रों से रेचक कीजिए। यह एक राउण्ड हुआ। इसी प्रकार 10-12 बार तक आप कर सकते हैं।

इस प्राणायाम में पूरक और रेचक क्रिया के साथ कुम्भक भी जोड़ा गया है, इसीलिए यह सहित-प्राणायाम कहलाता है।

चौथा – सहित-प्राणायाम अतिरिक्त

पहले दोनों नासिकाओं से पूरक करें। फिर ऊपर की विधि से अन्तर्कुम्भक करें। फिर रेचक करें और रेचक के पश्चात् तुरन्त पूरक न कर श्वास को बाहर ही रोकें, जितनी देर तक रोक सकें। फिर पूरक करें, उसके बाद अन्तर्कुम्भक, फिर रेचक और अन्त में फिर बहिर्कुम्भक लगाएँ। यही क्रिया जितने राउण्ड करना चाहें, करें। आरम्भ में पाँच बार काफी है।

अभ्यास बढ़ाना चाहें तो प्रत्येक का समय बढ़ाने का प्रयत्न करें। यह हमेशा याद रखें कि जितना आराम के साथ किया जा सके, उतना ही करना चाहिए। प्राणायाम में कभी भी जबरदस्ती नहीं करनी चाहिए।

योगी ऐसा कहते हैं कि जिस प्रकार सिंह इत्यादि जंगली पशुओं को धीरे-धीरे वश में किया जाता है, उसी प्रकार प्राणवायु को भी धीरे-धीरे वश में किया जाता है। जल्दी करने से वह जंगली पशु की तरह आपको नष्ट कर देगी। कहने का तात्पर्य बस इतना ही समझिए कि सभी प्राणायामों का अभ्यास आराम के साथ ही करना चाहिए।

इस प्राणायाम के अभ्यास से शरीर में ऑक्सीडेशन की क्रिया अधिक होती है, फेफड़ों की दीवारें मजबूत होती हैं तथा फेफड़ों को अधिक मात्रा में और देर तक आक्सीजन प्राप्त करने का मौका मिलता है।

प्राणवायु के चलने से मन चलायमान रहता है। कुम्भक से मन की गति शान्त होती है और समाधि में सरलता होती है। कुम्भक से शरीर की शक्ति और तेज हो जाती है। एक उदाहरण से यह स्पष्ट हो जायेगा। जब कोई भी मेहनत का और महत्त्वपूर्ण कार्य किया जाता है तो श्वास स्वतः कुछ क्षणों के लिए रुक जाती है। इस बात पर यदि आप गौर करें तो आपको कुम्भक का

महत्त्व मालूम हो जायेगा। मेहनत के कार्य के समय श्वास क्यों रुक जाती है? बहुत ध्यान देने के समय कुछ क्षणों के लिए हमारे अनजाने में श्वसन-क्रिया क्यों थम जाती है? इसका मतलब यही है कि उस कार्य को सम्पन्न करने के लिए हमें जिस अतिरिक्त शक्ति की जरूरत होती है, वह कुम्भक से प्राप्त होती है। खुशी का समाचार पाकर भी कुछ-एक क्षण श्वास-क्रिया थम जाती है। खुशी को सहन करने की शक्ति कुम्भक देता है। जिस तरह बहुत अधिक दु:ख मनुष्य सहन नहीं कर पाता, उसी प्रकार बहुत अधिक और अप्रत्याशित सुख भी मनुष्य बर्दाश्त नहीं कर पाता। दु:ख की घटना सुनने से भी मनुष्य की श्वास कुछ क्षण रुकती है। 'हृदय धक् से हो गया,' आप जो यह बात सुनते हैं, वह यही है। वास्तव में कुम्भक लगाने या लगने से मनुष्य को शक्ति या बल मिलता है। कूदते समय, लम्बी छलांग लेने के समय, भारी वजन उठाते समय, किसी वस्तु को शक्ति के साथ दूर फेंकने के समय, इन सब कार्यों को करने के ठीक पूर्व कुछ क्षण प्रत्येक की श्वास रुकती है, जिसे हम हिम्मत बटोरना भी कहा करते हैं।

इससे यह सिद्ध होता है कि श्वास को रोकने से शक्ति बढ़ जाती है। कुम्भक का अभ्यास करने से निस्सन्देह हमारे शरीर में अधिक बल आता है।

पाँचवाँ – नाड़ी-शोधन प्राणायाम

प्राणायाम करने से नाड़ियों की शुद्धि होती है। योग में नाड़ी-शुद्धि के दो उपाय बताए गए हैं। एक है प्राणायाम का तरीका, दूसरा है धौति-कर्म का तरीका। धौति-कर्म षट्कर्मों के अन्तर्गत आते हैं। इन दोनों को योग में समनु और निर्मनु क्रियाएँ कहते हैं।

प्राणायाम समनु क्रिया में आता है। समनु में भी दो भेद हैं। सगर्भ प्राणायाम और निगर्भ प्राणायाम। पहले नाड़ी-शोधन प्राणायाम की क्रिया सीख लीजिए तो सगर्भ और निगर्भ का भेद बतला सकूँगी।

आसन लगा कर बैठ जाइए। मन में 16 मात्रा तक की गिनती गिनते हुए बाँयीं नासिका से पूरक कीजिए। मन में ही 64 तक की गिनती गिनने में जितना समय लगे, उतनी देर तक कुम्भ्क कीजिए। पुन: दाहिनी नासिका से 32 तक की मात्रा गिनते हुए रेचक कीजिए।

पुन: यही क्रिया दाहिनी नासिका से पूरक करते हुए कीजिए। यह प्राणायाम 'सहित प्राणायाम' की भाँति है। अन्तर यही है कि गिनती के द्वारा आपको

पूरक, रेचक और कुम्भक का समय निश्चित कर लेना है। अनुपात का क्रम इस प्रकार है – पूरक 16, कुम्भक 64, रेचक 32।

नाड़ी-शोधन प्राणायाम भी तीन श्रेणी का माना जाता है। पहले को उत्तम कहते हैं, दूसरे को मध्यम और तीसरे को कनिष्ठ या अधम। तीनों में केवल पूरक, कुम्भक और रेचक का अन्तर कर दिया जाता है।

पूरक 12, कुम्भक 48, रेचक 24 को योगीजन कनिष्ठ प्राणायाम कहते हैं।

पूरक 16, कुम्भक 64, रेचक 32 को मध्यम कहते हैं।

पूरक 20, कुम्भक 80, रेचक 40 को उत्तम कहते हैं।

इस प्राणायाम के अभ्यास से नाड़ी का मल शुद्ध होता है, शरीर में लघुता आती है तथा दीर्घकाल तक योग-शास्त्रानुसार अभ्यास करने से समाधि प्राप्त होती है।

इस प्राणायाम की पूर्ण-सिद्धि से मनुष्य पृथ्वी से ऊपर उठता है, भूमित्याग होता है और मनुष्य को अपने शरीर पर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त होता है।

छठा – चन्द्रांग प्राणायाम

इस प्राणायाम के करने की विधि पूर्ववत् नाड़ी-शोधन प्राणायाम की तरह है। अन्तर केवल मात्रा के अनुपात का है। इसे पहले बायीं नासिका से आरम्भ कर पूरक 12, कुम्भक 16 और रेचक 10 की मात्रा में किया जाता है।

दूसरी विशेषता यह कि कुम्भक के समय पूर्ण चन्द्रमण्डल का प्रकाश के साथ ध्यान किया जाता है। बायीं नासिका में चन्द्र नाड़ी बहती है, इसलिए इसका नाम चन्द्रांग प्राणायाम है।

सातवाँ – सूर्यांग प्राणायाम

सूर्यांग में पूरक क्रिया सूर्य नाड़ी अर्थात् दाहिनी नासिका से होगी और पूरक 12, कुम्भक 16 और रेचक 10 की मात्रा में रहेंगे। कुम्भक काल में सूर्यमण्डल के तेज का ध्यान करना चाहिए।

आठवाँ – भ्रामरी प्राणायाम

यह प्राणायाम करने में बहुत सरल है। कोई भी व्यक्ति प्रथम दिन से ही इसका अभ्यास कर सकता है। इस प्राणायाम के अभ्यास से गले के रोगों का समूल

नाश होता है, स्वर मधुर तथा स्वर-यन्त्र सबल बनते हैं। चित्त को एकाग्र करने की भी यह सरल, सुन्दर व चित्ताकर्षक साधना है।

भ्रामरी का अभ्यास एकान्त तथा रात्रि या एकदम सुबह अच्छी तरह सधता है। करने की विधि यह है। आसन लगाकर शान्तचित्त होकर बैठ जाएँ। आँखें बन्द। दोनों तर्जनी उंगलियों से दोनों कानों के छेद बन्द कर लें।

खूब गहरी श्वास पहले धीरे-धीरे अन्दर लें। कुछ क्षण रोकें और फिर गले से गुंजन की आवाज करते हुए उस आवाज के साथ-साथ अत्यन्त धीरे-धीरे रेचन-क्रिया कीजिए। जब तक पूरी श्वास निकल न जाए, तब तक गले से गुंजन की आवाज करते जाइए। गुंजन करते समय मुँह बन्द रहेगा, क्योंकि रेचक-क्रिया नाक से ही करनी है। जबान निश्चल रहेगी। सारा ध्यान श्वास व गुंजन की आवाज पर केन्द्रित रहेगा। ध्वनि को कान से सुनते रहने की चेष्टा करनी चाहिए। गुंजन की आवाज एकतार होनी चाहिए, बीच में टूटनी नहीं चाहिए।

नवाँ – उज्जायी प्राणायाम

यह प्राणायाम उन लोगों को अत्यधिक फायदा पहुँचाता है, जिनके टॉन्सिल बड़े हुए हों, जो सर्दी-खाँसी से हमेशा पीड़ित रहते हों और जिन्हें साल भर जुकाम रहता हो। संगीत सीखने वालों को भी उज्जायी का अभ्यास फायदा पहुँचाता है। संगीत सीखने वाली लड़कियाँ इस प्राणायाम के अभ्यास से बहुत फायदा उठा सकती हैं। प्राय: देखा जाता है कि उनके गले अधिक गाने पर किसी और दोष से भारी हो जाते है। कभी-कभी ऐन मौके पर उनके गले उन्हें धोखा दे देते हैं। यदि वे उज्जायी प्राणायाम का नियमपूर्वक अभ्यास करें तो उनके गले हमेशा नीरोग और आवाज मधुर होगी।

टॉन्सिल का रोग भी आज लड़के-लड़कियों में बहुत प्रचलित है। डॉक्टर उनका इलाज ऑपरेशन बताते हैं। पर यह ठीक नहीं। प्रकृति ने हमारी रक्षा का स्वयं प्रबन्ध किया है। यदि प्रारम्भ में ही टॉन्सिल के रोगियों को प्राणायाम कराया जाए तो ये अच्छे हो जाते हैं। गले, नाक व कान के रोगों में भी यह लाभ पहुँचाता है। वास्तव में आज सभी बच्चों को ये सब चीजें सिखलायी जानी चाहिए, तभी राष्ट्रीय-स्वास्थ्य उत्तम हो सकता है।

उज्जायी प्राणायाम इस प्रकार कीजिए। आसन में बैठकर आँखें बन्द कर लें। अब गले से श्वास लेते समय खर्राटे की-सी आवाज कीजिए। श्वास

नाक से ही लेंगे। जिह्वा के मूल को तालू में सटाकर श्वास खींचने से यह आवाज पैदा होती है। नींद में कुछ लोगों की नाक जैसे बजती है, ठीक उसी प्रकार की आवाज आपको पूरक के समय गले में पैदा करनी है। आवाज के साथ पूरक कर कुछ क्षण कुम्भक करके फिर उसी प्रकार आवाज करते हुए रेचक करें। पूरक और रेचक, दोनों समय गले से खर्राटे की-सी आवाज करते जाएँ। इस प्राणायाम को दस-बारह बार नित्य करें।

इस प्राणायाम में कुम्भक कर हृदय और कण्ठ की वायु को मिलाकर एक करने से हृदय-चक्र जाग्रत होता है। पर यह गुरु से ही सीखना चाहिए।

दसवाँ – शीतली प्राणायाम

जिह्वा और गले के रोगों में शीतली प्राणायाम करना चाहिए। निनाव और टॉन्सिल में भी फायदा करता है। हकलाने के दोष में शीतली, शीतकारी, उज्जायी तथा नभोमुद्रा का अभ्यास करना चाहिए। मुँह में छाले हों, जबान खुश्क रहती हो या फटती हो तो शीतली का अभ्यास नित्य करना चाहिए।

शीतली इस तरह करिए। आसन में बैठकर जिह्वा को गोल नली के समान मोड़ कर मुँह के बाहर निकाल लीजिए। नली से श्वास अन्दर खींचिए। श्वास धीरे-धीरे और गम्भीरता से खींचिए जिससे फेफड़े पूरे भर जाएँ। फिर धीरे-धीरे नाक से रेचक कीजिए। रेचक के समय जिह्वा को मुँह के अन्दर कर लीजिए। पुन: जिह्वा निकाल कर मुँह से पूरक कीजिए। फिर नाक से पूर्ववत् रेचक कीजिए। इसी प्रकार आठ-दस बार अभ्यास कीजिए।

जो भी प्राणायाम आप करें, अपना ध्यान हमेशा प्राणायाम की क्रिया पर रखें, मन को इधर-उधर भटकने न दें। जितनी एकाग्रता और तन्मयता के साथ करेंगे, उतना ही लाभ होगा।

शीतली की सिद्धि से भूख और प्यास पर मनुष्य विजय प्राप्त करता है। कफ, पित्त और अजीर्ण दूर होते हैं। योगी के लिए शीतली को बहुत शुभ कहा जाता है।

ग्यारहवाँ – शीतकारी प्राणायाम

यह प्राणायाम मुँह, गले, नाक और जिह्वा के रोगों में फायदा पहुँचाने वाला है। जिह्वा को मुँह के अन्दर भीतर की ओर मोड़ कर, उसके अग्रभाग को तालु में सटा लीजिए। ऊपर के दाँतों की पंक्ति नीचे के दाँतों पर अच्छी तरह

बैठा लीजिए। सामने के दाँत एक-दूसरे के ऊपर रहेंगे। ओंठ खुले रहेंगे। इस प्रकार करने के पश्चात् मुँह से श्वास सिसकारी के साथ अन्दर खींचिए। दाँत और जिह्वा अपने स्थान से खिसकेंगे नहीं। जिह्वा के दोनों ओर के खुले स्थान से श्वास-वायु अन्दर जाएगी। पूरक के बाद मुँह बन्द कर लीजिए और नाक से रेचक कीजिए। इसी प्रकार आठ-दस बार कीजिए। इसमें पूरक मुँह से और रेचक नाक से किया जाता है। कुम्भक करने की जरूरत इसमें नहीं पड़ती।

शीतकारी प्राणायाम से शरीर में ठण्डक होती है, निद्रा कम होती है और अनेक रोग दूर होते हैं। शीतकारी और शीतली प्राणायाम, करने में सरल, पर गुण में अमित उपकारी हैं। दोनों का ही बराबर अभ्यास करना चाहिए।

बारहवाँ – भस्त्रिका प्राणायाम

भस्त्रिका बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्राणायाम है। पर जिनके हृदय और फेफड़े कमजोर हों या जो रोगी हों, उन्हें नहीं करना चाहिए। साधारणत: स्वस्थ व्यक्तियों को इसका अभ्यास जरूर करना चाहिए। साधक के लिए तो यह बहुत ही उपयोगी है।

यह प्राणायाम दमा और श्वास के रोगों को दूर करता है। जानकार व्यक्ति के निर्देशन में इसका अभ्यास करने से ये रोग दूर होते हैं और कमजोर फेफड़े धीरे-धीरे पुन: शक्ति प्राप्त करते हैं। रोगियों को किसी के निर्देशन में ही इस प्राणायाम का अभ्यास करना उचित है। साधारण स्वस्थ व्यक्ति किताब पढ़कर भी कर सकता है।

इस प्राणायाम से शरीर को अधिक आक्सीजन पहुँचाई जाती है तथा अधिक मात्रा में कार्बन भी बाहर निकाला जाता है। इससे रक्त-शुद्धि होती है, शरीर के विभिन्न अंगों में रक्त-संचार तेज और रक्त-आपूर्ति अधिक होती है। फेफड़ों के अन्दर रुकी रहने वाली वायु अधिक शुद्ध होती है। इस प्राणायाम के अनेक गुण हैं, लेकिन पहले इसके करने की विधि सीख लीजिए।

पहले नाक से धीरे-धीरे पूरी-पूरी श्वास लेते और निकालते हुए पूरक और रेचक शुरू कीजिए। चार-पाँच बार धीरे-धीरे करने के बाद पूरक और रेचक की गति को क्रमश: बढ़ाते जाइए। यहाँ तक कि दस-बारह बार के बाद आपकी श्वास बिल्कुल लुहार की धौंकनी की तरह चलने लग जाए। भस्त्रिका का अर्थ धौंकनी ही होता है, जिससे लुहार आग को तेज करता है।

बीस बार पूरक-रेचक तेजी के साथ और अविराम भाव से करने के पश्चात् एक गहरा पूरक खींच कर अन्तर्कुम्भक लगा लीजिए। यह अन्तर्कुम्भक जितनी देर आप लगा सकिए, लगाए रहिए। फिर धीरे-धीरे श्वास छोड़कर फेफड़ों को खाली कर दीजिए। कुछ देर सामान्य श्वास लेते हुए विश्राम कीजिए। फिर एक बार और इसी क्रिया को दुहराइए।

कुम्भक के समय आप मन में गिनती गिन सकते हैं। इससे आपको कुम्भक के समय का पता चलेगा और अभ्यास बढ़ाने में मदद मिलेगी।

भस्त्रिका प्राणायाम में ध्यान रखने की बात यह है कि इस क्रिया में पूरक और रेचक, दोनों पर श्वास का समान जोर पड़ना चाहिए। दूसरी बात, पूरक और रेचक करते समय नाक की दीवालों पर अनावश्यक जोर नहीं पड़ना चाहिए। नाक को फूलना या पचकना नहीं चाहिए। अर्थात् नाक की अवस्था एक समान रहनी चाहिए।

बीस बार जल्दी-जल्दी पूरक-रेचक, फिर गम्भीर पूरक, तब कुम्भक और अन्त में रेचक, इतना करने से भस्त्रिका प्राणायाम का एक राउण्ड हुआ। इसी प्रकार से पाँच राउण्ड तक का अभ्यास प्रतिदिन किया जा सकता है। प्रत्येक राउण्ड के पश्चात् कुछ देर विश्राम किया जा सकता है। प्रात: और सायं, दोनों समय आप इसका अभ्यास कर सकते हैं।

योग के साधकों को भस्त्रिका प्राणायाम से बहुत लाभ होते हैं। इससे प्राणों में स्थिरता आती है, मन वश में आता है और चित्त-लय की भूमिका तैयार होती है। योगाभ्यास से तत्त्वज्ञान उसी प्रकार होता है जिस प्रकार वर्णाक्षरों के अभ्यास से भाषा का ज्ञान।

तेरहवाँ – कपालभाति प्राणायाम

कपालभाति प्राणायाम भस्त्रिका का सहयोगी प्राणायाम है। दोनों की पद्धतियाँ कुछ-कुछ एक समान हैं।

कपालभाति में भी पूरक और रेचक क्रिया भस्त्रिका की भाँति जल्दी-जल्दी की जाती है। पूरक और रेचक दोनों quick succession में एक-के बाद-एक होते हैं। पूरक और रेचक लगातार। विशेष ध्यान यह देने का है कि कपालभाति में पूरा जोर केवल रेचक क्रिया पर दिया जाता है। पूरक क्रिया गौण होती है। रेचक के द्वारा श्वास को धक्के के साथ फेफड़ों से बाहर निकालने की क्रिया का ही नाम है कपालभाति। एक रेचक के बाद दूसरा रेचक करने के बीच स्वत:

थोड़ी वायु पूरक द्वारा फेफड़ों में प्रवेश कर जाती है। इस पूरक को रोकने की भी चेष्टा नहीं करनी है, किन्तु सारा बल रेचक-क्रिया पर लगाना है।

कपालभाति में भी बीच में विश्राम नहीं लिया जाता है। रेचक और पूरक लगातार चलते रहते हैं। रेचक पर ज्यादा जोर और ज्यादा समय लगता है। इस प्राणायाम से कफ के रोगों में लाभ मिलता है, फेफड़ों से कफ बाहर निकलने में मदद मिलती है, दमा का रोग दूर होता है। यह सब प्राणायामों में बड़ा महत्त्वपूर्ण और गुणकारी है।

चौदहवाँ – मूर्च्छा प्राणायाम

मूर्च्छा और सूर्यभेद प्राणायाम आज्ञा और विशुद्धि नामक यौगिक चक्रों को जगाते हैं। इन प्राणायामों का नित्य एक-दो बार का अभ्यास स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है, किन्तु महायोग के साधकों को इसका कठोर अभ्यास करना पड़ता है। इस प्राणायाम के अभ्यास से नेत्र की ज्योति बढ़ती और स्मरण-शक्ति तीव्र होती है। सिर-दर्द, अर्धकपारी, वातकम्प तथा स्नायु की दुर्बलता व दोष दूर होते हैं। यह प्राणायाम योगशक्ति को जगाता है और साधक को शरीर-चेतना से ऊपर उठाता है। इसको निम्न विधि से किया जाता है।

दोनों छिद्रों से श्वास अन्दर खींचिए। नाक बन्द कर लीजिए। सिर को इस प्रकार ऊपर उठाइए कि दृष्टि आकाश की ओर हो जाए। अन्तर्कुम्भक लगा लीजिए। आँखें खोलकर दृष्टि भ्रूमध्य में कीजिए। इसे भ्रूमध्य-दृष्टि या शाम्भवी मुद्रा भी कहते हैं। नभोमुद्रा भी लगाइए। जब श्वास और न रुक सके तो पहले सिर को पूवार्वस्था में लाइए और तब धीरे-धीरे रेचक कीजिए। पुनः बिना विश्राम लिए पूरक कीजिए। आकाश-दृष्टि, भ्रूमध्य दृष्टि, नभोमुद्रा और कुम्भक सब एक साथ कीजिए। फिर पहले की तरह आइए। पुनः इसी क्रिया को दुहराइए। पाँच-सात बार प्रतिदिन कीजिए।

शाम्भवी मुद्रा करने की विधि – आँखें खोलकर अपलक नेत्रों से दोनों भौहों के बीच का स्थान देखने को शाम्भवी मुद्रा या भ्रूमध्य-दृष्टि कहते हैं।

नभोमुद्रा की विधि – जिह्वा की मुँह के अन्दर उलट कर, मोड़ कर, उसके अग्रभाग को तालुका में सटा देने से नभोमुद्रा होती है। इसे ऊर्ध्वजिह्वा भी कहते हैं।

पन्द्रहवाँ – सूर्यभेद प्राणायाम

सूर्यभेद गले, जिह्वा और स्वर-यंत्र के रोगों में फायदा पहुँचाता है। योग के दृष्टिकोण से यह यौगिक चक्रों को जगाने वाला है। इसका प्रभाव विशुद्धि और आज्ञाचक्र पर पड़ता है।

आसन में बैठकर आँखें बन्द कर लीजिए। अब नाक का दाहिना छिद्र बन्द कर बाएँ से पूरक करें। दोनों बन्द कर अन्तर्कुम्भक और जालन्धर बन्ध लगाइए। जितनी देर श्वास रुक सके, उतनी देर रोकने के पश्चात् पहले जालन्धर बन्ध खोल लीजिए और तत्पश्चात् धीरे-धीरे रेचक कीजिए। पुनः तत्काल दाहिनी नाक से पूरक कीजिए, कुम्भक और जालन्धर बन्ध लगाइए। फिर जालन्धर खोलिए और रेचक कीजिए।

यह सरल प्राणायाम की तरह है। किन्तु इसमें अन्तर्कुम्भक और जालन्धर बन्ध साथ-साथ लगाने पड़ते हैं। इस अभ्यास को आठ-दस बार प्रतिदिन किया जा सकता है। जालन्धर बन्ध के साथ-साथ नभोमुद्रा भी इसमें लगाई जाती है।

जालन्धर बन्ध करने की विधि – इस बन्ध में प्रथम कण्ठ का संकोच करना पड़ता है। इसकी तकनीक कोशिश करने से स्वयं आपको आ जायेगी। कण्ठ-संकोच कर गर्दन को थोड़ा आगे झुकाकर ठुड्डी को छाती से सटा लीजिए। श्वास रोक लीजिए। यही जालन्धर बन्ध है। बन्ध खोलने के लिए पहले ठुड्डी उठाइए, गर्दन सीधा कीजिए, कण्ठ-संकोच छोड़ दीजिए और रेचक कीजिए। जालन्धर बन्ध में पीठ नहीं झुकनी चाहिए। रीढ़ की हड्डी बराबर सीधी रहेगी।

सोलहवाँ – केवली प्राणायाम

केवली प्राणायाम में केवल पूरक और रेचक की क्रिया है। उसे इस प्रकार करना होता है।

पूरक के साथ-साथ आप मन में 'सो' शब्द का मानसिक उच्चारण करें। रेचक के साथ-साथ 'हम्' शब्द का केवल मानस-उच्चारण करें। इस प्रकार श्वास-क्रिया के साथ 'सोऽहम्' का मानसिक जाप बराबर होते रहना चाहिए। इसे ही केवली प्राणायाम कहते हैं। इससे चित्त की एकाग्रता प्राप्त होती है और अजपा सिद्ध होता है।

सत्रहवाँ – प्लाविनी प्राणायाम

प्लाविनी प्राणायाम इस प्रकार करें – आसन में बैठकर मुँह से जैसे जल पीते हैं उसी प्रकार वायु को भी लगातार पीते जाएँ, जब तक आमाशय की थैली वायु से एकदम भर न जाए। पुनः इस तरह डकार लीजिए कि पी हुई सारी वायु तत्काल पेट के बाहर आ जाए।

यह एक प्रकार से वायु-धौति है। इसमें पेट की धुलाई जल या वस्त्र से न कर, वायु से की जाती है। वायु पीकर पेट की सारी दूषित वायु को बाहर निकाला जाता है। इससे पेट के रोग दूर होते हैं, कृमि का नाश होता है, जठराग्नि तीव्र होती है और हिस्टीरिया को हटाने में मदद मिलती है।

अठारहवाँ – चतुर्थ प्राणायाम

चतुर्थ प्राणायाम में पूरक और रेचक क्रिया की जाती है, पर दोनों सम-मात्रा में। इसमें पूरक और रेचक, दोनों की गति और समय एक समान रखे जाते हैं और मुख्य तीन प्राणायामों – पूरक, रेचक और कुम्भक में यह 'चतुर्थ प्राणायाम' के नाम से जोड़ा जाता है।

पूरक और रेचक, दोनों की गति और समय समान रखने के लिए गिनती या मंत्र-जप का सहारा लेना पड़ता है। एक समान गिनती मन में लेते हुए श्वास अन्दर लेना और गिनते हुए श्वास बाहर निकालना। मन में एक, दो, तीन, चार कहते हुए आप श्वास अन्दर लीजिए। फिर एक, दो, तीन, चार कहते हुए श्वास बाहर निकालिए। इसी प्रकार गिनती के साथ चार-चार मात्रा में श्वास अन्दर लीजिए और बाहर निकालिए। बाद में गिनती न कह कर मंत्र कहिए। जैसे मन में चार बार 'ॐ' कहते हुए श्वास अन्दर लें और चार बार ही 'ॐ' कहते हुए श्वास बाहर निकालें, इस तरह 10-15 मिनट रोज अभ्यास करें।

चतुर्थ प्राणायाम बड़ा ही महत्त्वपूर्ण प्राणायाम है। प्रायः लोग ध्यान और समाधि इसलिए नहीं लगा पाते, क्योंकि प्राणों के ऊपर उनका कन्ट्रोल नहीं रहता। जब ध्यान लगने की अवस्था आती है, उस समय प्राण रुकने लगते हैं। पूर्ण ध्यान में प्राण जहाँ-के-तहाँ एकदम रुक जाते हैं। और जिसने तीन-तीन घण्टे श्वास रोकने का अभ्यास न किया हो, उसके प्राण रुकते ही ध्यान टूट जाता है। साधक खट् से ध्यान के कमरे से बाहर आ जाता है। अन्तर्मुख चेतना श्वास रुकने से बाहर आ जाती है। इसीलिए समाधि प्राप्त करना बड़ा कठिन है।

किन्तु, एक अन्य सरल मार्ग है। इसमें प्राणों को ऐसी ट्रेनिंग दी जाती है, जिसमें वे हर समय और हर अवस्था में अपनी स्वाभाविक गति से बराबर चलते रहें। उनका चलना कभी बन्द न हो। ध्यान लगने की अवस्था भी आए, पर उस समय भी प्राण बिना रुके चलते रहें और साधक हमेशा अन्तर्मुख ही रहे। ध्यान टूटे नहीं और चेतना भीतर ही रहे, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार निद्रा के समय मनुष्य की श्वास बराबर चलती रहती है। वह सोया भी रहता है, स्वप्न भी देखता रहता है। लेकिन निद्रा नहीं टूटती और श्वास चलती रहती है। उसी प्रकार समाधि की अवस्था में भी श्वास चलती रहे, इसका अभ्यास किया जा सकता है। यह अभ्यास चतुर्थ प्राणायाम के निरन्तर अभ्यास से सिद्ध होता है। इसीलिए चतुर्थ प्राणायाम का महत्त्व बहुत अधिक है।

उन्नीसवाँ – केवल कुम्भक

यह भी प्राणायाम का एक प्रकार है। इसमें भी श्वास रुक जाती है, पर इस कुम्भक को लगाने या करने की जरूरत नहीं पड़ती। यह अपने आप हो जाता है। श्वास किसी भी समय कहीं पर भी रुक जाय तो उसे केवल कुम्भक कहेंगे। यह खट् करके किसी भी समय गम्भीर ध्यान में लग सकती है। पूरक या रेचक के दरमियान कभी भी केवल कुम्भक लग सकता है। अन्तर्कुम्भक और बहिर्कुम्भक की तरह इसमें यह निश्चित नहीं कि यह पूरक या रेचक, किसके बाद लगे।

चित्त जिस क्षण एकाग्र होने लगता है, उस समय प्राण कभी भी रुक सकते हैं। कभी तो पूरक करते-करते बीच में ही रुक जाते हैं और कभी रेचक के बीच में। यही केवल कुम्भक है।

बीसवाँ – अन्त:प्राणायाम

अन्त:प्राणायाम कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत करता है। कुण्डलिनी योग एक अलग विषय है। यहाँ केवल अन्त:प्राणायाम का तरीका बतलाऊँगी।

आसन लगा कर बैठें। नेत्र बन्द कर लें। श्वास को मूलाधार से खींच कर सहस्त्रार तक ले जाएँ। फिर सहस्त्रार से मूलाधार तक श्वास को उतारते हुए रेचक करें। इसमें श्वास रोकना नहीं है।

इस प्राणायाम में पूरा ध्यान सुषुम्ना के खम्भे पर रखा जाता है। प्राणों को ऊपर-नीचे सुषुम्ना नाड़ी के अन्दर परिभ्रमण कराया जाता है।

प्राणायाम के अनेक प्रकार मैंने आपके सामने बतलाए हैं। सबका अभ्यास प्रतिदिन करने की आवश्यकता नहीं। धीरे-धीरे ही सबका अभ्यास बढ़ाना चाहिए। स्वास्थ्य के लिए प्रतिदिन 10 मिनट तक का अभ्यास काफी है। कौन-कौन से प्राणायाम आप कितनी बार करेंगे, यह अपनी बुद्धि से और अपनी आवश्यकता देखकर स्वयं छाँट लें।

प्राणायाम से निकले हुए पसीने को बदन में मल देना चाहिए। प्राणायाम के महत्त्व को मैं सविस्तार बतला चुकी हूँ। प्राणायाम के विषय में आपके अन्दर यदि भय के संस्कार हों तो उन्हें निकाल कर आप दो-चार प्राणायामों का नियमपूर्वक अभ्यास कीजिए। आपको फायदा स्वयं मालूम पड़ेगा।

प्राणायाम करने से शारीरिक स्फूर्ति का अनुभव होता है, चित्त हमेशा शान्त रहता है, शक्ति बढ़ी हुई मालूम पड़ती है, शरीर की कान्ति बढ़ जाती है और आलस्य दूर हो जाता है।



योगनिद्रा

प्राणायाम तो आपके लाभ के लिए मैंने बतलाये, किन्तु एक और अत्यन्त सरल व उपयोगी क्रिया है, जिसे योगी जानते हैं। यदि उस क्रिया को थोड़ा बदल कर सर्वसाधारण को बतलाया जाए तो सभी मनुष्यों को बहुत लाभ होगा। वह है सोने की क्रिया।

प्राय: लोग चिन्ता करते-करते, सोचते हुए या पढ़ते हुए सो जाया करते हैं। सोचते-सोचते कब उन्हें नींद आ जाती है, इसका उन्हें पता नहीं रहता। उलझे हुए दिमाग से सो जाना स्वास्थ्य और मन के लिए हितकर नहीं। विक्षिप्त मन, उद्विग्न भाव और अनेक विचारों में उलझ कर सो जाना अच्छा नहीं होता। इससे थकावट पूर्णत: दूर नहीं होती, दु:स्वप्न आते हैं, पाचन ठीक नहीं रहता और सुबह मनुष्य स्फूर्ति और आनन्द का अनुभव नहीं करता। इस प्रकार सोना अस्वास्थ्यकर और अवैज्ञानिक है।

आपके मन में प्रथम यह शंका उठी होगी कि सोने की क्रिया में कौन-सी विशेषता और सीखने व पढ़ने की बात है। नींद तो सबको आती है। शरीर का यह स्वाभाविक कर्म है। इसमें जानने लायक नवीन बात कुछ नहीं। फिर भी आप देखेंगे और जानेंगे कि सोना भी हमारे जीवन में बहुत महत्त्व रखता है! सोने का प्रभाव हमारे मन, काम, स्वभाव, चरित्र और बुद्धि पर पड़ता है।

एक साधारण उदाहरण ले लीजिए। सुबह चार बजे उठने का नियम यदि आप जीवन में अपना लें तो उसी से आपका सारा जीवन बदल जायेगा। कितनी बातों और कार्यों पर उसका प्रभाव पड़ेगा यह गिनाया नहीं जा सकता। सर्वप्रथम आप नित्य-स्फूर्ति, शक्ति और ताजगी का अनुभव करेंगे। पहले जो आप फुरसत न मिलने की शिकायत करते रहे होंगे तो अब ऐसा मालूम होगा कि बहुत लम्बा दिन है और उतना ज्यादा आपके पास काम नहीं है। यह नियम एक ही दिन के लिए नहीं, वरन् जीवनभर के लिए बनाएँगे, तभी ऐसा अनुभव होगा। आपका स्वास्थ्य बराबर अच्छा रहेगा। किसी भी काम में आपको कठिनाई और थकावट का अनुभव नहीं होगा। नींद न आने की

शिकायत कभी नहीं होगी। मन हमेशा शान्त और प्रफुल्ल रहेगा। जीवन में जो भी कार्य आप हाथ में लेंगे, उसमें आपको सफलता मिलेगी। पर शर्त्त यही कि इस नियम का कड़ाई के साथ आप पालन करें। फिर देखें आप, यह एक ही नियम आपकी तमाम सुप्त प्रतिभाओं को जगा सकेगा और असीम will-power के आप स्वामी बनेंगे।

निद्रा-विज्ञान का यह एक छोटा-सा नियम मैंने आपको बतलाया।

सोने की क्रिया को आप कितना ही स्वाभाविक, सहज और महत्त्वहीन समझें, पर मैं यही कहूँगी कि वैज्ञानिक ढंग से सोना कोई भी संसारी नहीं जानता। कैसे सोना चाहिए, यह गृहस्थ को नहीं मालूम। गृहस्थों को काम बहुत करना पड़ता है, इसलिए योगनिद्रा की विधि सीखने से उन्हें ही अधिक लाभ होगा। कम-से-कम घण्टे सोकर भी वे अपनी नींद पूरी कर सकेंगे।

अधिकांश व्यक्ति सोकर उठने पर शरीर में थकान और सिर में भारीपन का अनुभव करते हैं। कुछ लोग जग जाने पर भी आलस्य का अनुभव करते हैं। उनसे उठा नहीं जाता और वे दो घण्टे बिस्तर में अर्धनिद्रित अवस्था में लेटे रहते हैं। कुछ लोग हैं जो आठ घण्टे से भी अधिक सोते हैं। आठ घण्टे सोने से भी उनकी नींद पूरी नहीं होती। कितनों को बिना ब्रोमाइड या tranquilizer लिए नींद ही नहीं आती। इस तरह कोई अतिनिद्रा से परेशान रहता है तो कोई अनिद्रा से।

कितने ही लोगों को बिना पढ़े नींद नहीं आती। यह भी बुरा है, क्योंकि लेटकर पढ़ने से दृष्टि-नाड़ी पर गलत दबाव पड़ता है। फलत: वह अत्यधिक परिश्रम से थककर शिथिल हो जाती है। पलकें झपने लगती हैं और मनुष्य को नींद आ जाती है। नींद लाने का यह तरीका गलत है।

कुछ लोगों को बिना पैर दबवाए नींद नहीं आती। यह आदत बुरी ही नहीं, वरन् वात-प्रधान प्रकृति के लिए खतरनाक भी है। यदि घर से बाहर या घर में ही कभी ऐसी सुविधा न रही तो आपको नींद नहीं आएगी। नींद स्वाभाविक और उचित ढंग से आनी चाहिए। ये सब निद्रा के दोष हैं। इन्हें निद्रा-सम्बन्धी बीमारी ही समझना चाहिए।

एक और समस्या है। ऐसे लोग भी कम नहीं हैं जो बहुत अधिक व्यस्त रहा करते हैं। आज के औद्योगिक-भौतिकवादी जगत् में मनुष्य किसी-न-किसी महत्त्वाकांक्षा के पीछे भागता फिर रहा है। बड़े-बड़े शहरों में लोगों की व्यस्तता का पता आपको अधिक चलेगा। एम.पी., एम.एल.ए. और मिनिस्टर दिन-

रात इतने व्यस्त रहते हैं कि उन्हें ठीक से सोने का भी समय नहीं मिलता और न पर्याप्त विश्राम का मौका ही। उनकी समस्या कैसे दूर हो? व्यवसाय, व्यापारी, डॉक्टर, सामाजिक कार्यकर्त्ता, पुलिस अफसर – सबका यही हाल है। ऐसे सभी लोगों के लिए मैं ऐसा उपाय बतला सकती हूँ जिससे वे कम-से-कम घण्टों में अपने को पुन: ताजा कर लें और तीन ही घण्टे सोकर 21 घंटों के परिश्रम की थकान मिटा सकें।

कम सोने वालों में नेपोलियन का नाम लिया जाता है। कहते हैं, वह हमेशा घोड़े पर ही रहता था और घोड़े पर ही अपनी नींद पूरी कर लिया करता था। गाँधी जी के बारे में भी कहा जाता है कि वे बहुत कम सोते थे। कितना परिश्रम उन्हें करना पड़ता था, यह आप सब जानते ही हैं। इन लोगों की सफलता का रहस्य क्या था? वे योगी थे। उनका चित्त सदैव एकाग्र होकर अपने लक्ष्य की ओर लगा रहता था। एकाग्रता में बड़ी शक्ति है। योगी के विषय में कहा जाता है कि वह कभी सोता नहीं। सूर्यमुखी की तरह उसका ध्यान सर्वदा अपने लक्ष्य की ओर लगा रहता है। योगी अपनी नींद को भी समाधि में बदल देता है।

जिस प्रकार सोते समय शरीर विश्राम करता है, उसी प्रकार मस्तिष्क या मन को भी विश्राम मिलना चाहिए। रात्रि में भी हमारे मन की भाग-दौड़ समाप्त नहीं होती। हम अनेक विचार करते-करते जब सोते हैं तब वही सब बातें तथा दिनभर के काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद, मात्सर्य, इत्यादि के विचार दूसरे-दूसरे रूप धारण कर संकेत-रूप में प्रकट होते हैं। मन जब इन चीजों में भटकता है तो नींद अच्छी नहीं आती, भयानक सपने आते हैं, मन अशान्त रहता है और मनुष्य को थकावट दूर होने का अनुभव नहीं होता। मनुष्य के दूषित विचार रात्रि को भी अनेक कल्पित घटनाओं का आश्रय लेकर निद्रा के समय जीवात्मा को भ्रमित और थकित करते हैं। मनुष्य के इन अमान्य विचारों को दिशान्तरित करने की जरूरत है। मन को उन सब चीजों से हटाकर किसी एक दिशा में लगाने से मनुष्य को शान्ति व सुख की प्राप्ति हो सकेगी। यह किस प्रकार होगा, मैं आगे बतलाऊँगी।

निद्रा समाधि की ही निम्नावस्था है। निद्रा में मनुष्य इस लोक की सारी चिन्ताओं, थकावटों, उद्वेगों और पीड़ाओं को भूलकर दूसरे लोक में चला जाता है। इस लोक का उसे कुछ भी ज्ञान नहीं रहता। सोए हुए मनुष्य को कोई कितनी भी गाली दे, उसे दु:ख नहीं होता, गुस्सा नहीं आता। इसी प्रकार

समाधि में भी मनुष्य को इस लोक का ज्ञान नहीं रहता और इन्द्रियों से कुछ ज्ञान प्राप्त नहीं होता। अन्तर दोनों में यह है कि नींद में मनुष्य को न अपना ज्ञान रहता है और न अपने पर नियंत्रण की शक्ति। लेकिन समाधि में यद्यपि उसे इन्द्रियों द्वारा इस लोक का ज्ञान नहीं होता, किन्तु वह अपनी आत्मा में स्थित हुआ पूर्ण ज्ञान में रहता है। पर वह बड़ी ऊँची अवस्था रहती है। आत्मा परमानन्द और परम ज्ञान की अवस्था में रहती है, जिसके कारण यह भूलोक अन्धकारवत् दिखता है।

सोने की क्रिया सहज-स्वाभाविक होने पर भी सबको इसकी सही तकनीक नहीं मालूम। साधारणत: अतिनिद्रा नहीं तो अल्पनिद्रा या अनिद्रा की बीमारी सबको रहती है। यदि विचार कर शुद्ध मन से हम देखें तो जीवन के कितने अमूल्य घण्टे हम सोने में व्यर्थ खो देते हैं। इतने घण्टे यदि हम किसी महान् कार्य की सिद्धि में लगाते तो क्या से क्या कर डालते।

मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि आवश्यक घण्टे सोकर बाकी समय को हम अपने और दूसरों के जीवन के निर्माण में लगाकर बहुत ऊँचा उठ सकते हैं। इस समय को धनोपार्जन और विद्यार्जन में लगा सकते हैं अथवा सेवा कार्य में लगा सकते हैं, अथवा ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति की साधना में लगा सकते हैं। जब थोड़ी ही निद्रा से काम चल सकता है तो अधिक सोने की क्या जरूरत? सोने के विषय में इसलिए सबको कुछ बातें जाननी आवश्यक हैं। निद्रा की क्वालिटी कैसी हो? कितनी देर सोया जाए? किस प्रकार सोया जाए? शारीरिक थकावट कैसे जल्दी दूर हो? मानसिक तनावों को दिशान्तरित कैसे किया जाए? यात्रा के समय या अति व्यस्तता के समय कम-से-कम समय में कैसे शारीरिक और मानसिक थकावट दूर की जाए? किस प्रकार की नींद से हम स्फूर्तिमय और ताजे बनें? इन सबके उत्तर में मैं व्यावहारिक क्रियाएँ आगे बतलाऊँगी और सोने के कुछ आवश्यक नियमों का भी उल्लेख करूँगी।

अधिक सोना तमोगुण की अधिकता का लक्षण है और निद्रा का न आना मानसिक तनावों का परिणाम। दोनों ही मनुष्यों के लिए अवांछनीय हैं।

सबसे पहले तो आप असावधानी में सोना, जैसे-तैसे विचारों को सोचते हुए सो जाना बिल्कुल छोड़ दें। जिस तरह आप अन्य दैनिक कार्यों को महत्त्व देते रहे हैं, उसी प्रकार सोने को भी महत्त्वपूर्ण समझने की ट्रेनिंग अपने मन को दें। निद्रा दिनभर काम करने वाली मशीन को, जो काम करते-करते

गरम हो जाया करती है, ठण्ढा करने की क्रिया है। निद्रा हमारे शरीर की बैटरी को, जो दैनिक कार्यों में डिस्चार्ज हो जाती है, फिर से चार्ज करती है। दिनभर में हमारी जो शक्ति खर्च हो जाती है, उसे निद्रा द्वारा ही हम पुन: प्राप्त करते हैं।

लेटने के पूर्व बिस्तर में कुछ देर शान्त होकर बैठ जाइए। दो मिनट, चार मिनट जितना भी आपसे बन पड़े, उतनी देर। दिनभर के सारे कार्यों और विचारों, घटनाओं या बातचीत को मन में न लाइए। ऐसा करने का सरल उपाय यह है कि आप इष्ट-मन्त्र का मानसिक जप करने लग जायें। विचार अपने आप हट जाएँगे। फिर अपने इष्ट का स्मरण कीजिए और उनकी याद करते-करते ही बिस्तर में लेटिए।

चित् लेटकर दोनों पैरों को एक-दूसरे से थोड़ा फासले पर रखिए। दोनों हाथ बगल में और हथेलियों का मुख ऊपर की ओर रहे। सिर तकिए पर रहे, पर तकिया बहुत ऊँचा न हो। अब सारे अंगों को एक-एक कर शिथिल करते जायें। पैरों को पहले, फिर हाथों को, फिर सिर को। शिथिल करते समय उस अंग-विशेष पर आप अपना मन ले जाएँ और वहाँ पर शिथिलता व आराम का अनुभव करने की कोशिश करें। आप चाहें तो पैर के हरेक अंग को भी शिथिल कर सकते हैं। जैसे, पहले पैर का अंगूठा और एक-एक कर चारों अंगुलियाँ। उसके बाद क्रमश: तलुआ, टखना, घुटने के नीचे की पेशी और जाँघ। इन चक्रों पर अपने मन को फिराते हुए वहाँ पर आराम, हल्कापन, शान्ति और शिथिलता का अनुभव कीजिए। ऐसा करने से आपके अंग-प्रत्यंग हल्के होते जाएँगे और उनका तनाव कम होता जाएगा।

इस प्रकार दोनों पैरों को शिथिल करने के पश्चात् दोनों हाथों को भी इसी प्रकार हल्का करते जाइए। इसमें भी दोनों का शिथिलीकरण आप एक साथ कर सकते हैं, अथवा पहले दाहिने फिर बाएँ का। पूरे हाथ को एक साथ भी शिथिल कर सकते हैं और अंग-प्रत्यंग के साथ भी। अंग-प्रत्यंग वाली क्रिया नि:सन्देह उत्तम है। पहले एक-एक कर पाँचों अंगुलियों को शिथिल कीजिए। फिर हथेली, कलाई, हाथ और बाजू को। ऐसी ही क्रिया दूसरे हाथ में कीजिए।

हाथों के पश्चात् अब धड़ में आइए। पहले पेड़ू का शिथिलीकरण कीजिए। फिर पेट, उसके बाद कमर, फिर छाती, पीठ और अन्त में कन्धों पर आइए। इसके बाद गर्दन को ढीला कीजिए। और फिर चेहरे पर आ जाइए। चेहरे में भी

शिथिलीकरण एक-एक अंग का होगा। क्रम इस प्रकार रखिए। ठुड्डी, गाल, निचला ओंठ, ऊपर का ओंठ, नासिका, पलकें, कान, भौहें और माथा।

अंग-प्रत्यंग का शिथिलीकरण करने के पश्चात् पूरे-पूरे अंगों का एक साथ शिथिलीकरण कीजिए। पहले कमर से लेकर नीचे तक का पूरा भाग एक साथ शिथिल कीजिए। फिर धड़ से लेकर पैरों तक पूरे शरीर को हाथों सहित शिथिल कीजिए।

अन्त में सिर से लेकर पैर तक अपने आपको एकदम शिथिल कर दीजिए। ऐसा अनुभव कीजिए, जैसे आपका शरीर बिल्कुल निर्जीव है और आप उसे देख भर रहे हैं। मुझे विश्वास है कि आप इस क्रिया को रात्रि में कभी भी पूरा नहीं कर पाएँगे। चौथाई नहीं तो आधी क्रिया करते-करते आप जरूर सो जाएँगे। पूरा करके सोएँ तब तो बहुत ही उत्तम है। अन्तिम क्रिया करते-करते सोना ठीक है। उसी अवस्था में नींद आ जानी चाहिए। लेकिन आप जितना भी करें, चाहे चौथाई ही करते-करते सो जाएँ, तो भी आपको फायदा होगा।

इस क्रिया को आप दो प्रकार से कर सकते हैं –

1. एक-एक अंग को शिथिल करते हुए।
2. अंग-प्रत्यंग को शिथिल करते हुए।

पहले में आपको इस क्रम से शिथिलीकरण करना होगा—एक पैर, दूसरा पैर, एक हाथ, दूसरा हाथ, पेड़ू, कमर, पेट, छाती, पीठ, दोनों कंधे एक-साथ, गर्दन और चेहरा।

दूसरी क्रिया को करने के लिए सबसे उत्तम तरीका है कि पहले दाहिनी ओर के अंगों से शुरू किया जाए। सम्पूर्ण दाहिने शरीर के अंग-प्रत्यंग का, दाहिने पैर के अंगूठे से शुरू कर ऊपर दाहिने मत्थे तक शिथिलीकरण करते जाइए। फिर बायीं ओर ऊपर मस्तक से उसी प्रकार एक-एक अंग-प्रत्यंग को शिथिल करते हुए नीचे पैर के अंगूठे तक आ जाइए। कोई भी छोटा या बड़ा अंग छूटना नहीं चाहिए। साथ ही सबका शिथिलीकरण भी क्रमवार ही होना चाहिए। ऐसा न हो कि आप हाथ तक पहुँच चुके हों और फिर याद आए कि टखना छूट गया, तो लौट कर टखने पर चले आएँ। प्रारम्भ में कुछ छूट भी जाए तो परवाह नहीं करनी चाहिए। अभ्यास करते जाने पर आपको सब याद हो जायेगा और आप स्वाभाविक ढंग से इस क्रिया को करने लग जाएँगे।

इसी क्रिया को आप दिन में भी कर सकते हैं। काम के बीच यदि 10-15 मिनट भी विश्राम का मौका मिल जाए, तो इसी क्रिया के द्वारा विश्राम लें। समय के साथ इसकी सब क्रियाओं को आप अपनी सुविधानुसार adjust भी कर सकते हैं। कम समय हो तो थोड़ी देर कीजिए। अधिक समय हो तो प्रत्येक अंग पर अधिक समय दीजिए। दिन में विश्राम के विचार से जब किया जाए तब यह ध्यान रखें कि नींद न आ जाए, क्योंकि इसमें नींद बहुत जल्दी आती है। एक और विशेषता इस क्रिया में है। जितनी अवधि के बारे में सोचकर यह क्रिया करते-करते आप सोएँगे, ठीक उतनी ही देर में खट् से आपकी नींद खुल जाएगी। ये बातें किसी मैगजीन की गप नहीं, योग की क्रियाएँ हैं ये।

कुछ और भी जान लीजिए। बहुत व्यस्त रहने वाले, जिन्हें दिन के कार्यों के बीच 10-15 मिनट भी विश्राम का समय न मिलता हो, फाइलों के बीच, कुर्सी पर बैठे-बैठे भी इस क्रिया को कर सकते हैं।

इस क्रिया को आप अपने ऑफिस की कुर्सी पर बैठे-बैठे दो से पाँच मिनट के अन्दर ही कर लीजिए। आपकी थकान दूर हो जाएगी। आपके शारीरिक और मानसिक तनाव दूर हो जायेंगे। आपके शरीर की शक्ति के ह्रास की आपूर्ति हो जायेगी। बहुत अधिक दिमागी काम करने वालों को दिन में दो-तीन बार दो-दो मिनट इस क्रिया को कर लेना चाहिए।

कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं हमारे समाज में जिन्हें ड्यूटी के वक्त बैठने का भी समय नहीं मिलता। जैसे इंजिन के ड्रावर, सर्जन, लेक्चरर, इत्यादि। उनको मैं यह बता सकती हूँ कि शिथिलीकरण की यह क्रिया खड़े होकर भी की जाती है। उन्हें चाहिए कि दोनों पैर थोड़े फासले पर कर आराम के साथ पैर जमाकर खड़े हो जाएँ। हाथों को पीछे एक दूसरे से पकड़ लें या छाती पर बाँध कर रख लें। इस प्रकार अचल भाव से खड़े होकर और आँखें बन्द कर शिथिलीकरण की संक्षिप्त क्रिया करें। अति संक्षिप्त क्रिया में उन्हें अंगों में मानस-संचरण करने की भी आवश्यकता नहीं। सिर्फ एक या दो मिनट निर्विचार की अवस्था लाएँ। यदि दीवार का सहारा लेकर खड़े हो जाएँ तो और अच्छा। इस क्रिया को करने के और भी कई तरीके हैं। कोई एक तरीका अपने लिए चुन लेना चाहिए।

बिस्तर पर लेट जाइए। पूरे शरीर का एक साथ शिथिलीकरण कीजिए। अनुभव कीजिए कि आपका शरीर लेटा हुआ है और आप उससे अलग हैं।

आप अपने शरीर को सोता हुआ अनुभव कीजिए। भावना द्वारा अंग-प्रत्यंग एकदम शिथिल कर लीजिए। इस प्रकार पाँच मिनट तक अपने पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिए। इसके बाद अपने मन में एक, दो, तीन, चार, पाँच, छः, सात ... गिनती गिनना प्रारम्भ कीजिए।

यह गिनती जहाँ तक चल सके, चलाते जाइए। सौ, दो सौ, तीन सौ, चार सौ, पाँच सौ, जहाँ तक गिन सकिये, गिनते जाइये। यदि आपका स्वास्थ्य अच्छा है तो सौ-डेढ़ सौ के आगे आप नहीं गिन सकेंगे। इस प्रकार शिथिलीकरण करके गिनती-गिनते सो जाना बहुत अच्छा है।

शिथिलीकरण का एक और तरीका सुनिए। पाँच मिनट तक किसी भी मनपसन्द तरीके से पूरे शरीर का शिथिलीकरण कीजिए। उसके उपरान्त गिनती के बदले अपने मन को भ्रूमध्य में एकाग्र करके 'ॐ' या 'सोऽहम्' का जप मन में करना शुरू कीजिए। जब तक जगे रहें, तब तक ऐसा करते जाइए।

इस प्रकार मानसिक जप करते हुए तथा भ्रूमध्य में मन को एकाग्र करने से निद्रा अच्छी आती है और वे सब लाभ मिलते हैं, जिनका उल्लेख मैं पहले कर चुकी हूँ। आवश्यकता अब यही है कि आप इनमें से किसी एक का कुछ दिन लगातार अभ्यास कर स्वयमेव सत्य का अनुभव करें।

सोने का एक और उत्तम उपाय। कुछ मिनट शिथिलीकरण करने के बाद अपने मन को श्वास पर लाइए। श्वास लेते समय मन में 'ॐ' या 'सोऽहम्' जपिए। फिर श्वास को बाहर निकालते समय भी उसी मंत्र को जपिए। प्रत्येक श्वास-प्रश्वास के साथ 'ॐ ॐ' या 'सोऽहम् सोऽहम्' का जप करते रहिए।

जप चार मात्रा या चतुर्थ प्राणायाम के साथ भी किया जा सकता है। श्वास लेते समय चार बार मंत्र का मानसिक जप कीजिए और श्वास निकालते समय भी चार बार मंत्र का मानसिक जप कीजिए। इस तरह जप करने से मन एकाग्र हो जाता है और शीघ्र ही निद्रा आ जाती है।

अब इनमें से किसी एक तरीके को आप चुन लें और नित्य अभ्यास करें। इन्हीं क्रियाओं से साधक सूक्ष्म लोकों में भी प्रवेश पा सकते हैं। इन्हीं में कुछ रूपान्तर करने से विज्ञानमय और आनन्दमय कोष की साधनाएँ भी की जाती हैं। इन साधनाओं के विषय में आपको गुरुदेव की ही वाणी से ज्ञान प्राप्त करने का सौभाग्य मिले, इसलिए मैं अब प्रवचन समाप्त करूँगी।

गुरुदेव के पत्रों द्वारा मुझे दिए उपदेश व सिखलाई हुई गुप्त साधनायें अपने मूल-रूप में शीघ्र प्रकाशित होंगी। सब कुछ कहने के पश्चात् मैं यह

कहूँगी कि यह सब ज्ञान मेरा उपार्जित नहीं, सब गुरुदेव का अनुग्रह है। बिना गुरु की कृपा के योग की सूक्ष्म क्रियाएँ कभी भी शिष्य की समझ में नहीं आतीं। अभ्यास और साधना करना तो दूर की बात है। ये सब साधनाएँ गुरुदेव ने मुझे सिखलाईं और उनके ही आशीर्वाद से मुझमें इस प्रवचन में प्रकट करने का सामर्थ्य आया है। वास्तव में वक्ता तो वे हैं। मैं वाणीमात्र हूँ।

ॐ श्रीसद्‌गुरवे नमः!



1. योग साधना

आज विज्ञान का युग है। व्यक्ति विशेष के लिये आज विज्ञान ने भोग के तरह-तरह के साधन जुटा दिये हैं। कम-से-कम परिश्रम में अधिक-से-अधिक उपार्जन करना आज मनुष्य का ध्येय हो गया है। पर इतने कम परिश्रम पर भी क्या मनुष्य का जीवन शान्त और आनन्दमय है? निश्चय ही नहीं। ऐसा लगता है कि विज्ञान की उन्नति के कारण हमारी भौतिक समस्यायें तो सुलझ रही हैं पर मानसिक उलझनें बढ़ती जा रही हैं। मनुष्य निकम्मा, पंगु और गुलाम होता जा रहा है। आज भारत ही क्या, विश्व के असंख्य लोग त्रुटिपूर्ण और दुःखदायी जीवन व्यतीत कर रहे हैं। यही कारण है कि मानसिक असन्तुलन और अन्य रोगों के कारण वे परलोक सिधारते जा रहे हैं। हर परिवार में पति-पत्नी, भाई-भाई और बाप-बेटे के बीच कलह, कटुता एवं विद्वेष फैला दिखता है, जिसके परिणामस्वरूप मानसिक और शारीरिक अशान्ति दिन-रात बढ़ती जा रही है।

संसार में हर व्यक्ति जीना चाहता है, पर जीने का सही तरीका नहीं जानता। हर व्यक्ति सुख और शान्ति चाहता है पर उसके लिये प्रयत्न नहीं करता। आज मनुष्य अपनी शारीरिक और मानसिक समस्याओं का निराकरण नहीं पा रहा है। लेकिन देखा जाय तो इन सबके अतिरिक्त भी संसार में एक ऐसी चीज है जो मानव को शान्ति दे सकती है और उन्हें इन दुःखों से छुटकारा दिला सकती है। यह वस्तु है योग का अभ्यास।

योगाभ्यास आधुनिक दृष्टिकोण से भी अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हो चुका है। इसके अभ्यासों को जीवन में उतारकर हर वर्ग का व्यक्ति, चाहे वह दुकानदार हो, वैज्ञानिक हो, डॉक्टर हो या विद्यार्थी, मानसिक शान्ति और शारीरिक सुख प्राप्त कर सकता है। वास्तव में यदि देखा जाय तो स्वास्थ्य, प्रसन्नता, स्फूर्ति और आनन्द प्राप्त करने की कला का नाम ही योग है। योग मानव को एक भव्य और दिव्य जीवन का दिशा निर्देश करता है। जीवन की वास्तविकता को नहीं समझने के कारण ही आज मनुष्य पीड़ित तथा अशान्त

है। अत: जीवन की वास्तविकता को समझने के लिये योग का अभ्यास बहुत ही आवश्यक है। योगाभ्यासियों के अनुभव यह बताते हैं कि निश्चित रूप से प्रतिदिन यदि सुबह चार बजे उठकर दस मिनट आसन, पाँच मिनट प्राणायाम और दस मिनट 'ॐ नम: शिवाय' का जप किया जाय तो मनुष्य मानसिक शान्ति, स्वास्थ्य, चित्त की एकाग्रता, मन की दृढ़ता तथा अधिक कार्य करने की क्षमता अपने में पायेगा।

योग के विषय में लोगों में बड़ी भ्रान्तियाँ हैं। लोग समझते हैं कि यह बहुत कठिन, दु:साध्य और साधु-महात्माओं की चीज है। पर आज यह साधु-महात्माओं की ही वस्तु नहीं रही। योग का ज्ञान सर्वसाधारण के लिये ग्राह्य हो रहा है। बच्चे, जवान और बूढ़े, सभी इसकी क्रियाओं को कर सकते हैं और कर रहे हैं। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण मुंगेर का 'बिहार योग विद्यालय' है जो योग की शिक्षा देने का पहला और एकमात्र विद्यालय है। यहाँ बच्चे, जवान, बूढ़े तथा भिन्न-भिन्न जाति के लोग दूर-दूर से आकर योग की दीक्षा प्राप्त करते देखे जा रहे हैं।

यह सत्य है कि यदि अपने जीवन के अमूल्य क्षणों को बर्बाद न कर शान्त और योगमय जीवन की छाया में रहकर सेवा, प्रेम, त्याग, आत्मविश्वास तथा अनुशासन की शिक्षा ग्रहण की जाय तो निश्चय ही समाज, राष्ट्र और सम्पूर्ण मानवता की सेवा के लिये व्यक्ति तैयार हो सकते हैं।



2. प्राणशक्ति

प्राण एक ऐसा शब्द है जिससे हम उस सर्वव्यापक तत्त्व का बोध करते हैं जो सब प्रकार की गति और बल-शक्ति का द्योतक है, चाहे वह आकर्षण शक्ति के रूप में हो या बिजली के रूप में या ग्रहों की चाल के रूप में या जीवों की जीवनीशक्ति के रूप में। यह बल और शक्ति के सब रूपान्तरों का सारांश है। यह वह तत्त्व है जो एक विशेष रीति से कार्य करके ऐसी क्रिया उत्पन्न करता है जो जीवन के साथ रहती है। हम प्राण का उसी प्रकार संचय कर सकते हैं जैसे बिजली संचय करनेवाली बैटरी उसे संचय करती है।

यह शक्ति मानसिक रोग-मोचन की अधिकांश क्रियाओं में पाई जाती है और मानव जाति में प्रवृत्तिजनित और नैसर्गिक कही जा सकती है। जिस बच्चे को चोट लगती है या जिसे पीड़ा जान पड़ती है वह दौड़ा हुआ अपनी माता के पास पहुँचता है। माता चोट के स्थान को चूम लेती है या पीड़ास्थल पर हाथ फेर देती है। कुछ क्षणों में बच्चा चुप हो जाता है। जब हम लोग किसी पीड़ित मनुष्य के पास पहुँचते हैं तो हमलोगों में यह स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि उसके ललाट पर अपना हाथ फेरें या उसके शरीर का स्पर्श करें। हाथ का यह प्रवृत्तिजनित फेरना रोगी को प्राणशक्ति देना है। इससे रोगी की तबियत कुछ हल्की हो जाती है। बच्चे को माता की छाती से लगाकर रखना इसी अभिप्राय की दूसरी प्रवृत्तिजनित प्रक्रिया है। माता की प्राणशक्ति उसके प्रेम भाव से प्रेरित होकर बच्चे में पहुँचती है और बच्चे की पीड़ा शान्त हो जाती है।

जब हम कोई उँगली उठाना चाहते हैं तब इच्छा या प्रयत्न लगाते हैं। प्राणशक्ति की एक मात्रा उस उँगली की गति पर अधिकार रखने वाली मांसपेशियों में भेजी जाती है। मांसपेशियाँ संकुचित होती हैं और उँगली उठ जाती है। यही दशा शरीर की प्रत्येक गति की है, चाहे प्रयत्न की सचेतन भूमिका हो या अचेतन। जैसे केन्द्रवर्ती कार्यालय से तार-समाचार भूमि के प्रत्येक भाग पर भेज दिया जाता है वैसे ही प्राणशक्ति सब नाड़ियों में भेज दी जाती है।

प्राणशक्ति की परिभाषा मनुष्य के साधारण जीवन के अनुसार हुआ करती है और यह जीवन शरीरस्थ प्राण की मात्रा द्वारा निर्धारित होता है। प्राणशक्ति के परिवर्तन के विषय में भौतिक विज्ञानी और योगी में बहुत मतभेद है। भौतिक विज्ञानी कहता है कि यद्यपि प्राण बल है और शरीर के भीतर उन सब बातों को करता है जिनका वर्णन योगी करते हैं, परन्तु वह नाड़ी जाल की ही सीमा के अन्तर्गत परिमित है, उस सीमा को पार नहीं कर सकता। इसके विपरीत योगी अपने अनुभव द्वारा जानता है कि यह प्राण नाड़ी जाल की सीमा पार कर सकता है।

जब कोई विचार बलपूर्वक प्रकट किया जाता है तो वह प्राय: अपने साथ प्राण की अधिक मात्रा वहन करता है जिससे उसे अधिक शक्ति मिलती है और कभी-कभी आश्चर्यजनक फल उत्पन्न होने लगता है। यह प्राण विचार में जीवन डाल देता है और उसे प्राय: जीवित शक्ति बना देता है। प्रत्येक विचार चाहे भला हो या बुरा, इस प्राण से थोड़ा बहुत अवश्य आपूरित रहता है। जब मनुष्य प्रबल भावना में हो तो उस समय का प्रेरित विचार और अधिक प्राण से संयुक्त होता है। कुछ सभावक्ता लोग इस गुण को प्राप्त किये रहते हैं और अपने शब्दों को इस शक्ति के साथ संचालित करते हैं कि श्रोताओं पर वह विचार बिना टकराए नहीं रहता। एक प्रबल सोचने वाला मनुष्य, जिसके विचार प्राणों से भरपूर रहते हैं, कभी-कभी अपने विचारों में इतना जीवन डाल देता है कि वे विचार कुछ काल तक मूर्तिमान होकर जीवित रहते हैं।

कुछ लम्बी सांसें लेते हुए इसकी परीक्षा कीजिये। मन में यह कल्पना कीजिये कि प्रत्येक श्वास के साथ बहुत-सा प्राण भीतर खींच रहे हैं। तब आपको नई शक्ति का प्रवाह प्रतीत होने लगेगा। पर बुरे विचारों को इस प्रकार प्रेरित मत कीजिये। प्राण ही वह साधन है जिससे रोग-मोचन होता है। योगशास्त्र बतलाता है कि परमेश्वर प्रत्येक व्यक्ति को उसकी आवश्यकता के अनुकूल भौतिक शरीर देता है और उसके लिये ऐसे साधन भी उपस्थित कर देता है जिनसे शरीर दुरुस्त बना रहे। यदि मनुष्य के प्रमाद से वह शरीर अयोग्य हो जाय तो उसके सुधारने के लिये भी परमेश्वर ने साधन दिए हैं। योगी इस शरीर को महद्बुद्धि की ही कारीगरी समझते हैं। यह शरीर महद्बुद्धि के ही कारण है और जब तक मनुष्य दैवी नियमों के अनुसार क्रिया करता है तब तक उसका स्वास्थ्य और बल बना रहता है। जब मनुष्य उस दैवी

नियम के प्रतिकूल चलता है तो वह अस्वस्थ और बलहीन हो जाता है। इस महद्बुद्धि को ही प्रकट रूप में हम प्रकृति या जीवन-तत्त्व कहते हैं। जितना ही हम स्वयं को उस महत् जीवन तत्त्व के प्रवाह के लिये खुला रखेंगे उतना ही लाभ उठावेंगे। रोग-मोचन शक्ति प्रत्येक व्यक्ति में वर्तमान है और चेतन अथवा अचेतन रूप से कार्य में लाई जा सकती है। इसी आन्तरिक शक्ति को केवल संचालित करने से और शरीर को अपनी अन्तस्थ सुधारक शक्तियों के लिये खोल देने से रोग-मोचन होता है। सारा रोग-मोचन उसी के द्वारा होता है जिसे हम व्यक्ति में जीवन बल कहते हैं। इस जीवन बल का क्रियात्मक तत्त्व विश्वव्यापी बल का वह रूप है जो प्राण कहा जाता है।



3. शिथिलीकरण

शरीर को शिथिल करने का विज्ञान हठयोग शास्त्र का एक मुख्य अंग है। इसे समझने के लिए पहले आकुंचन पर विचार करें। जब हम किसी मांसपेशी को आकुंचन करना चाहते हैं जिससे कि उससे कुछ काम लें तो हम मस्तिष्क से वहाँ प्रेरणा भेजते हैं। इससे वहाँ कुछ अधिक प्राण भेजा जाता है और मांसपेशी आकुंचित हो जाती है। प्राण संचालिनी नाड़ी से होकर जाता है, मांसपेशी तक पहुँचता और उसे अपने छोरों को बटोरने की प्रेरणा देता है। इस तरह जिस अवयव या भाग को हम हिलाना चाहते हैं, उस पर जोर लगता है और वह अवयव काम करता है। यही बात प्रत्येक क्रिया में होती है चाहे हम उसे जानें या न जानें।

चेतनासहित क्रियाओं में चेतनाशक्ति प्रवृत्ति-मानस को सूचना देती है जो तत्काल आज्ञा पालन करता है और अभीष्ट स्थान पर प्राण की धारा भेज देता है। प्राण के व्यय और मांसपेशी के छीजने का एक और मार्ग भी है जो हमलोगों को मालूम नहीं। जब हम कोई काम करना चाहते हैं तो हमारी पहली प्रेरणा मांसपेशी की उस गति की ओर होती है जो विचार से उत्पन्न कार्य करने में आवश्यक होती है। परन्तु विचार के कारण हम पहली गति को करने से रुक सकते हैं, यदि इस दूसरे विचार से रोकना ही अभीष्ट जँचे। हम क्रोध के आवेश में किसी को मारने के लिये उतारू हो सकते हैं। ज्योंही यह भाव उत्पन्न होता है, मारने की क्रिया की प्रारम्भिक गति शुरू हो जाती है। परन्तु मांसपेशियों की गति के स्पष्ट प्रकट होने के पहले ही दूसरा अच्छा विचार पहली मारने वाली क्रिया को रोकने के लिये उत्पन्न हो जाता है। अन्य मांसपेशियों ने पहली मांसपेशियों की गति को रोक लिया। आज्ञा देने और रोकने की दोहरी क्रिया इतनी शीघ्रता से हो गई कि मन को इन सब गतियों का ज्ञान न हो सका। जिस क्षण मांसपेशी मारने की इच्छा से काँपने लगी थी, ठीक उसी क्षण रोकने की प्रेरणा ने उसका विरोध किया और गति को रोक लिया।

यही मूल सिद्धांत अधिक सूक्ष्म रूप में, अन-अवरुद्ध विचारों के अनुसरण में प्राण की धारा को मांसपेशियों में भेजता है और उन्हें आकुंचित करता है, जिससे प्राण का व्यर्थ व्यय और मांसपेशियों की व्यर्थ छीजन हुआ करती है। बहुत-से मनुष्य गरम और चिड़चिड़े स्वभाव के हुआ करते हैं। वे सदा अपनी मांसपेशियों को ताने हुए रहते हैं, क्योंकि उनकी मानसिक दशा अन-अवरुद्ध और अनधिकृत रहती है। शिथिल किए हुए अंग में प्राण की धारा का प्रवाह नहीं होता। शिथिल होने से मांसपेशियाँ और नाड़ियाँ विश्राम की दशा में रहती हैं और प्राण व्यर्थ बर्बाद होने के स्थान पर संचित हुआ करता है।

शिथिलीकरण विचार क्रिया में प्रकट होते हैं और क्रियाओं का प्रभाव मानस पर पड़ता है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि शरीर की स्थिति और विकृति का प्रभाव मन और मानसिक दशाओं पर भी पड़ता है। व्यर्थ प्राण के व्यय और नाड़ियों की छीजन रोकने के लिए पहला यत्न यह है कि शान्ति और विश्राम की मानसिक स्थिति पैदा की जाय। 'ढील दो' यही शिथिलीकरण का मूलमंत्र है।

चित् लेट जाओ। प्रत्येक अवयव को पूरी तरह से शिथिल करो। इसी प्रकार ढीले रहने पर अपने मन को सिर से पैर की उँगलियों तक सारे शरीर में घूमने दो। ऐसा करने से आपको मालूम होगा कि कहीं-कहीं कुछ मांसपेशियाँ अब भी तनी हुई हैं। उन्हें भी ढीला छोड़ो। शिथिलीकरण का अभ्यास करने से शरीर को अधिकार में लाने और विश्राम करने का अनुभव होता है। अन्त में आपके शरीर की सब मांसपेशियाँ पूरी शिथिल हो जायेंगी और नाड़ियों को विश्राम मिलेगा। अब कुछ गहरी श्वासें लो और निम्न क्रियाएँ क्रमवार करो।

1. हाथ में से सब प्राण खींच लो, मांसपेशियों को ढीला छोड़ दो जिससे हाथ ढीले पड़कर निर्जीव की भाँति कलाई से झूलने लगें। तब दूसरे हाथ पर इसी तरह प्रयोग करो। फिर दोनों हाथों पर एक ही साथ प्रयोग करो।
2. उँगलियों को शिथिल और ढीला करो। पहले एक हाथ की उँगलियों को एक-एक कर ढीला करो, फिर दूसरे हाथ की, और फिर दोनों हाथों की।
3. भुजाओं में से सब प्राण खींच लो और उन्हें ढीला लटकने दो। तब शरीर को एक तरफ से दूसरी तरफ झुलाओ जिससे भुजाऐं भी अंगरखे की खाली बाँहों की तरह केवल शरीर की गति के कारण झूलें, भुजाओं में तनिक भी बल न हो। पहले एक भुजा, तब दूसरी, फिर दोनों।

4. कलाई को ढीला करो और उसे केहुनी से ढीला लटकाओ। लेकिन कलाई की मांसपेशी के आकुंचन को रोको। कलाई को ढीला करके झुलाओ। पहले एक को, तब दूसरी, फिर दोनों।
5. पैर को पूरी तरह ढीला करके घुटनों से झुलाओ। पहले एक पैर, तब दूसरा, फिर दोनों।
6. टांग के सब प्राण खींचकर उसे ढीला करो और उसे घुटनों से लटकने दो। तब उसे झुलाओ और हिलाओ। पहले एक टांग, तब दूसरी।
7. भुजाओं को सीधा सिर के ऊपर उठाओ, फिर उनसे सब प्राण खींचकर उन्हें अपने ही भार से बगलों में गिर जाने दो।
8. घुटनों को अपने आगे, जहाँ तक टांगें ऊँची उठा सकते हो, उठाओ और तब उसके कुछ प्राण खींचकर उसे अपने ही भार से गिर जाने दो।
9. सिर को ढीला करो और आगे गिर जाने दो, तब शरीर में गति देकर उसे झुलाओ। फिर एक कुर्सी पर पीछे लटक कर बैठो, सिर को ढीला करो और उसे पीछे लटक जाने दो। ज्योंही उसके प्राण खींच लोगे, त्योंही वह किसी ओर लटक जाएगा।
10. कंधों और छाती की मांसपेशियों को ढीला कर दो, जिससे छाती का ऊपरी भाग ढीला होकर आगे की ओर गिर जाय।
11. कुर्सी पर बैठकर कमर की मांसपेशियाँ ढीली कर दो, जिससे शरीर का ऊपरी भाग आगे की ओर गिर जाय, जैसे उस लड़के का गिर जाता है, जो कुर्सी पर बैठे-बैठे सो गया हो।

शिथिलीकरण शरीर की उस जकड़न को छुड़ाने का उपाय है जो एक ही समुदाय की मांसपेशियों को अपनी जीविका के लिए काम में लाते रहने से पैदा हो जाती है और इच्छानुसार विश्राम करने के द्वारा थोड़े ही समय में थकावट दूर करने का सरल उपाय है।

मन को शिथिल करने के उपाय

चुपचाप शरीर को ढीला करके सुखासन में बैठ जाओ। अपने मन को बाहरी चीजों से हटा लो, क्योंकि इसमें भी मानसिक बल का व्यय होता है। ऐसा सोचो कि तुम शरीर से बिल्कुल परे हो और इसे बिना अपना व्यक्तित्व क्षीण किए हुए छोड़ सकते हो। ध्यान को पार्थिव शरीर से हटाकर ऊँचे अहम् में, जो तुम वास्तव में हो, उस रूप को जगाओ। अपने चारों ओर जो विस्तृत

सृष्टि है उसका ध्यान करो। देश और काल के विस्तार की ओर मन की भावना फैलाओ। जीवन को इस सारी दुनिया में फैला हुआ देखो और तब इस पृथ्वी और अपनी स्थिति पर विचार करो कि यह कैसा धूलिकण के ऊपर एक कीट की भाँति है। तब अपने विचार ही में उठो, और ऊपर उठो। समझो कि यद्यपि तुम उस महत् का एक कणमात्र हो, तो भी तुम उस जीवन का एक अंग हो और उस आत्मा की एक किरण हो जो सब में व्याप रही है। सोचो कि तुम अमर, नित्य और अविनाशी हो, उस सम्पूर्ण का एक आवश्यक अंग हो और एक ऐसा अंग हो, जिसके बिना सम्पूर्ण रह भी नहीं सकता। अब जागकर अपने पार्थिव जीवन में आओ, तुम्हें मालूम होगा कि तुम्हारा शरीर ताजा हो गया है। तुम्हारा मन शान्त और बलवान हो गया है।

हठयोग और राजयोग वस्तुत: एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। हृदय को संयत करने के पहले अंगों को संयत करना आवश्यक है। बिना हठयोग के राजयोग नहीं हो सकता। अतएव, हठयोग राजयोग की पहली सीढ़ी है। हठयोग और राजयोग दोनों मिलकर एक विशिष्ट योग की पूर्ति करते हैं। कबीर ने हठयोग को ईश्वर प्राप्ति का एकमात्र साधन माना है।



4. हठयोग

हठयोग योगशास्त्र का वह भाग है जो पार्थिव शरीर की रक्षा और भलाई करता है तथा उसे स्वस्थ एवं प्राकृतिक दशा में रखता है। आधुनिक सभ्यता में पले हुए मनुष्य इस चीज को भूल गये हैं कि प्रकृति क्या है। अब लोग प्राकृतिक पथ के अनुयायी नहीं हैं। आधुनिक सभ्यता की चकाचौंध में पड़कर मनुष्य ने प्रकृति को भुला दिया है।

हठयोग का सारभूत तत्त्व तो ईश्वर से मिलना है। योग का शाब्दिक अर्थ होता है जोड़ना। योग के अभ्यास में शारीरिक और मानसिक परिश्रम की आवश्यकता विशेष रूप से पड़ती है। हठयोग के दो पटल हैं—बाह्य और आभ्यन्तरिक। बाह्य के अन्तर्गत भोजन से उचित पोषण ग्रहण करना, उचित श्वास से लाभ उठाना, देह की सिंचाई और मल की सफाई, आसन करना आदि आते हैं। यहाँ पर मैं हठयोग के आभ्यन्तरिक पटल का उल्लेख करूँगी।

प्राणशक्ति– प्राण एक ऐसा नाम है, जिससे हम उस सर्वव्यापक तत्त्व का बोध करते हैं जो सब की गति, बल-शक्ति और आकर्षण शक्ति के रूप में, बिजली, ग्रहों की चाल और उच्च-नीच सभी जीवों के जीवन में प्रकट है। यह वह तत्त्व है जो एक विशेष रीति से कार्य करके ऐसी क्रिया उत्पन्न करता है जो जीवन के साथ रहती है। यह प्रधान तत्त्व प्रत्येक द्रव्य में है पर स्वयं द्रव्य नहीं है। यह हवा में है पर न तो यह हवा है और न उसका अवयव ही। यह उस भोजन में है जिसे हम खाते हैं, परन्तु यह मात्र भोजन का पोषणकारी पदार्थ नहीं है। यह सूर्य के प्रकाश में है पर न तो यह ताप है, न किरण। प्राण वायुमंडल की हवा में और अन्यत्र भी है।

प्राण ऐसी जगहों में भी प्रवेश करता है, जहाँ हवा की पहुँच नहीं हो सकती। हम प्राण को उसी प्रकार संचय कर सकते हैं जैसे बिजली संचय करने वाली बैटरी उसे संचय करती है। योगियों में जो अनेक शक्तियाँ कही जाती हैं वे इसी प्राण विषयक ज्ञान और प्राण के संचित भंडार को विचारपूर्वक काम में लाने से होती हैं।

मनुष्य का नाड़ी मंडल दो विभागों में विभक्त है– (1) मस्तिष्क और मेरुदण्ड विभाग, (2) सहानुभवी विभाग।

मेरुदण्ड विभाग देखने, सुनने, स्वाद लेने आदि की क्रियाएँ करता है। इस विभाग की उपमा टेलीफोन के तारों से दी जा सकती है। सहानुभवी विभाग में दो प्रधान शृंखलाएँ नाड़ी गुच्छों की हैं जो मेरुदण्ड के दोनों बगलों में अवस्थित हैं। इनके अतिरिक्त सिर, गर्दन, छाती और पेट के नाड़ी-गुच्छे भी इन्हीं में नत्थी हैं। सहानुभवी विभाग अनिच्छापूर्वक प्रतिक्रियाओं पर शासन करता है।

प्राण का अभ्यास– सभी वस्तुएँ स्फुरण अर्थात् कंपन में हैं। छोटे-से-छोटे परमाणु से लेकर बड़े-से-बड़े सूर्य तक सभी स्फुरण की दशा में हैं। मानव शरीर के परमाणु अनवरत स्फुरण में हैं। इससे अनन्त परिवर्तन हुआ करते हैं। सब स्फुरणों में एक ताल पाया जाता है। हमारा शरीर ताल के नियमों का वैसा ही वशवर्त्ती है जैसा ग्रहों का सूर्य के चारों ओर घूमना। हमारा शरीर उस छोटी खाड़ी की भाँति है जो समुद्र से पृथ्वी में घुस गई हो। जीवन का महासमुद्र उठता और बैठता है और हम लोग उसी के कंप और ताल के अनुगामी होते हैं। परन्तु कभी-कभी खाड़ी के मुहाने पर बही हुई मिट्टी आकर मुँह बन्द कर देती है और हम महासागर की प्रेरणा नहीं प्राप्त कर सकते तथा हमारे भीतर गड़बड़ पैदा हो जाती है।

तालयुक्त श्वास का हमारे शरीर पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। सारा शरीर कंपन को ग्रहण कर लेता है और आकांक्षा के सुर में मिल जाता है, जिससे फेफड़ों में तालयुक्त गति होने लगती है। जब वह इस प्रकार सुर में मिल जाता है, तब आकांक्षा की आज्ञाओं का तुरन्त पालन करने लगता है। इसी प्रकार योगी तालयुक्त श्वास द्वारा कंप को मानो ग्रहण कर लेता है और अधिक परिभ्रमण के प्राण पर अधिकार करके उसे ग्रहण कर लेता है। तब वह प्राण उसकी इच्छा के अधीन हो जाता है। वह उसे साधन बना लेता है। प्राण के द्वारा वह दूसरों के पास विचार भेज सकता और जिनके विचार उसी कंप में बह रहे हों, उन्हें आकर्षित कर सकता है। दूर से ही रोग दूर करना, विचार भेजना और विचार ग्रहण करना इत्यादि काम किये जाते हैं।

तालयुक्त श्वास क्रिया में असल बात ताल की भावना प्राप्त करना है। योगी अपने ताल के समय को उस मात्रा के आश्रित रखता है जो उसके दिल की धड़कन के अनुसार होती है। दिल की धड़कन भिन्न-भिन्न मनुष्यों में भिन्न-

भिन्न काल का अन्तर देकर हुआ करती है। नाड़ी पर हाथ रखकर अपने हृदय की स्वाभाविक धड़कन की मात्रा को निश्चित करो और गिनो, 1, 2, 3, 4, 5, 6 – 1, 2, 3, 4, 5, 6 जब तक ताल की भावना दृढ़ होकर तुम्हारे मन में अंकित न हो जाए।

तालयुक्त श्वास लेने में योगी का यह नियम है कि श्वास और प्रश्वास, दोनों में मात्राएँ समान रहें। तालयुक्त श्वास के कुछ अभ्यास जो मैंने स्वामी सत्यानन्द जी से सीखे हैं वे यहाँ लिखे जा रहे हैं। स्वामीजी प्राण साधना में औथोरिटी प्राप्त कर चुके हैं।

1. सुखासन में बैठो। छाती, गर्दन एक सीध में हों, कंधे थोड़े पीछे दबे और हाथ आसानी से जाँघों पर पड़े हों। यदि छाती भीतर दबी और पेट निकला रहेगा तो तालयुक्त श्वास का पूरा फायदा नहीं मिलेगा।
2. धीरे-धीरे पूरी श्वास भीतर खींचो और छाती की धड़कन के समान छः मात्रा तक गिनते जाओ।
3. श्वास छोड़ देने के पश्चात् तीन मात्रा तक श्वास को बाहर ही रोके रखो।
4. कई बार इसी तरह से श्वास लो पर आरम्भ ही में अपने को थका मत डालो।
5. जब यह क्रिया समाप्त करना चाहो तो सफाई वाली श्वास क्रिया कर डालो जो फेफड़ों को साफ कर डालेगी और तुम्हें विश्राम देगी।

मस्तिष्क को उत्तेजित करना– यह क्रिया मस्तिष्क और नाड़ी जाल को साफ करने में आश्चर्यजनक प्रभाव रखती है। साथ ही सोचने-विचारने का काम स्पष्टता के साथ हुआ करता है। सीधे बैठो, रीढ़ की हड्डी सीधी रखो, आँखों को ठीक सामने रखो, हाथ टाँगों के ऊपरी भाग पर पड़े रहें। तालयुक्त श्वास लो। परन्तु दोनों नथुनों द्वारा श्वास लेने के स्थान पर दायें नथुने को अंगूठे से बन्द कर लो और केवल बायें नथुने से श्वास लो। फिर उसे उँगलियों से बन्द करो और तब दायें नथुने से प्रश्वास बाहर निकाल दो। फिर दायें नथुने से श्वास खींचो और बायें से प्रश्वास छोड़ो। इसी तरह ऊपर लिखी हुई रीति से नथुनों को बदलते जाओ। अप्रयुक्त नथुने को अंगूठे या उँगली से बन्द किए रहो।

यह महती मानसिक श्वसन क्रिया है। इस क्रिया में शरीर यंत्र प्राण से भर जाएगा और अभ्यास समाप्त होने पर प्रत्येक हड्डी, मांसपेशी, नाड़ी, देहाणु, रेशा, अवयव और भाग शक्तिसम्पन्न और प्राण एवं श्वास के ताल में लयमग्न होकर निकलेगा।

5. स्त्रियाँ और योग

योग के सम्बन्ध में लोगों के बीच बहुत भ्रान्तियाँ फैली हुई हैं विशेषकर स्त्रियों में। अधिकांश स्त्रियाँ यही समझती हैं कि योग केवल पुरुष ही कर सकते हैं। लेकिन यह धारणा सही नहीं है। योग न तो केवल पुरुषों के लिए है और न केवल साधु-संन्यासियों की ही अधिकृत भूमि है। यह तो जनसाधारण के लिए सुलभ है। आज का युग बहुत ही बदला हुआ है। पहले की तरह स्त्रियाँ अनपढ़, गँवार और पर्दे में रहने वाली नहीं हैं। आज अधिकांश स्त्रियाँ शिक्षित और सभी सोसाइटियों में जाने वाली हैं। किसी भी चीज को अच्छी तरह समझकर उसे अपने जीवन में व्यवहार करने की शक्ति उनमें है। पुरुषों की तरह स्त्रियों को अब स्वतन्त्रता और अधिकार मिले हुए हैं।

स्त्रियों के जीवन में बहुत तरह की समस्यायें आती हैं। उन्हें अपने जीवन में बहुत तरह की भूमिकाएँ अदा करनी होती हैं। एक अच्छी पत्नी, अच्छी माँ और अच्छी गृहिणी बनना होता है। एक परिवार से दूसरे परिवार में जाकर अपने आपको adjust करना होता है। जब वातावरण अनुकूल नहीं मिलता और वे अपनी समस्याओं का समाधान नहीं कर पातीं तो निराश और दु:खी हो जाती हैं। उनका जीवन अशान्त और दु:खमय हो जाता है, मानसिक संताप से दिन-रात जलती रहती हैं। फलस्वरूप उन्हें नाना प्रकार के रोग हो जाते हैं। जीवन की इन जटिल समस्याओं के समाधान का आखिर क्या उपाय हो सकता है?

योग ही स्त्रियों की समस्याओं का एकमात्र उपाय है। योग ही ऐसी चीज है जो मनुष्य को भटके हुए मार्ग से सही मार्ग पर ला सकता है; जीवन में सुख, शान्ति और आनन्द की सरिता बहा सकता है; पार्थिव और आध्यात्मिक जीवन में समन्वय ला सकता है। साधारणत: लोग योगी उसी को कहते हैं जो आग पर चलता हो, भाले पर या काँटों पर सोता हो। लेकिन सच्चे योग से इसका कोई सम्बन्ध नहीं। योग 'युज्' धातु से बना है और इसका अर्थ जोड़ना होता है। योग का तात्पर्य अच्छे काम से है। अच्छा काम करने वाला ही योगी कहलाता है। योग एक सर्वव्यापक और सार्वभौमिक विज्ञान है।

आजकल बहुत सारी स्त्रियाँ हैं जो घर में केवल रोटी-दाल-सब्जी बनाती हैं और बाकी समय लोगों से मिलती-जुलती हैं। यदि किसी का पति काफी पैसा कमाता हो, ऊँचे पोस्ट पर हो तो उसकी पत्नी केवल चक्करबाजी में रहती है। स्वादिष्ट भोजन करना, कीमती कपड़े पहनना, मोटर पर बैठकर घर-घर पार्टी attend करना और लोगों से खूब गप्प लगाना, बस यहीं तक उनका जीवन सीमित है। इसी में वे अपने को सुखी और सम्पन्न समझती हैं। ऐसी स्त्रियों की लोग बहुत तारीफ करते और कहते हैं, बड़ी सोशल और कल्चर्ड लेडी है। जीवन क्या है, किसलिए है, इसका क्या महत्त्व है, यह सब वे नहीं समझतीं।

स्त्रियों के ऊपर देश का भविष्य निर्भर करता है। लेकिन अधिकतर स्त्रियाँ बेकार की चीजों में अपने समय को नष्ट करती हैं, जिनसे उनका जीवन असंतुलित हो जाता है। योग ही एक ऐसी चीज है जो स्त्रियों की समस्याओं को, शारीरिक एवं मानसिक रोगों को तथा उनके सम्पूर्ण जीवन को संतुलित कर सकता है।

स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन रहता है। बिना स्वस्थ शरीर के मनुष्य जीवन में कुछ नहीं कर सकता। स्त्रियों के स्वास्थ्य के लिए योगासनों का अभ्यास सर्वोत्तम और उपयुक्त है। स्त्री-शरीर को पेशियों के लचीलेपन की विशेष आवश्यकता होती है। पेशियाँ जितनी अधिक लचीली होंगी, स्त्रियों का शिशु-प्रसव उतना ही कम कष्टकर और सरल होगा। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के लिए योगासन अधिक जरूरी है, क्योंकि स्त्री-शरीर को पुरुषों की अपेक्षा अधिक टैक्स देना होता है। इसलिए स्वास्थ्य की इतनी पूँजी होनी चाहिए कि इस टैक्स को अदा कर सके। गर्भधारण करना, बच्चे पैदा करना, दूध पिलाना, ये ऐसे टैक्स हैं कि अगर स्त्री के पास काफी पूँजी नहीं है तो इन टैक्सों को अदा करने में उसके स्वास्थ्य का दिवाला निकल जाता है।

बहुत-सी स्त्रियाँ यह कहती हैं कि सुबह से शाम तक चक्की, चूल्हे, रोटी, घर, गृहस्थी के कार्य करने में हम काफी शारीरिक मेहनत कर लेती हैं, भला फिर हमें योगासन की क्या जरूरत रह जाती है। लेकिन घर का काम शरीर के किसी भी अंग या संस्थान को बल पहुँचाने या विकास करने की दृष्टि से नहीं बनाया गया है। घरेलू काम-धन्धे तो शरीर को थका देने वाले होते हैं, जबकि योगासन शरीर में इस श्रम को सहन करने की शक्ति पैदा करते हैं। इसके अतिरिक्त योगासन करने से मन को भी स्वास्थ्य प्राप्त होता है। इससे स्नायु नियंत्रण में होते हैं। सहनशक्ति बढ़ती है।

योगासन करते समय मानसिक जप (*ॐ नम: शिवाय*) और मन को एकाग्र करना आवश्यक है। आसन तो बहुत होते हैं, लेकिन उनमें से कुछ आसनों को अपने लिए चुन लेना चाहिए जैसे सूर्य नमस्कार, भुजंगासन, शलभासन, पश्चिमोत्तानासन, सर्वांगासन आदि।

आसनों के साथ प्राणायाम भी करना चाहिए। श्वास को अन्दर लेना, श्वास को बाहर निकालना और श्वास को रोकना—इन तीन क्रियाओं का सामूहिक नाम ही प्राणायाम है। प्राणायाम का अभ्यास करने से फेफड़े मजबूत होते हैं, उनका लचीलापन बढ़ता है। शरीर में अधिक गर्मी पैदा होती है, जिससे नेत्र द्वारा आँसू प्रवाहित होने लगते हैं। इससे हृदय शुद्ध होता है और शान्ति मिलती है। लेकिन याद रखें कि कीर्त्तन-भजन जब भी करें उसमें आपके हृदय के भाव भरे हों। भजन-कीर्त्तन से हृदय में जितनी तन्मयता आती है, उतनी किसी भी चीज से नहीं आ सकती।

प्रतिदिन प्रत्येक स्त्री को कुछ देर जप भी करना चाहिए। *ॐ नम: शिवाय* का जप नित्य एक सौ आठ बार कम-से-कम करना चाहिये। रात में बिछावन पर जाने के बाद जप करके सोना चाहिए। मानसिक जप तो निरन्तर करते रहना चाहिए। चलते-फिरते, उठते-बैठते, काम करते, मन-ही-मन जप करते जाना चाहिए। इससे मन की चंचलता शीघ्र ही दूर हो जाती है और मन एक ओर केन्द्रित हो जाता है। मन इतना शान्त हो जाता है कि क्रोध कभी आता ही नहीं।

जो स्त्रियाँ यह कहा करती हैं कि घर के काम-काजों से छुट्टी ही नहीं मिलती तो योगाभ्यास क्या करें, उनसे मैं कहूँगी कि वे चाहें तो अपना कुछ-न-कुछ समय निकाल कर अवश्य कर सकती हैं। योग के कुछ अंशों को, जिनकी चर्चा मैं ऊपर कर चुकी हूँ, नित्य अपने दैनिक जीवन में करना चाहिए। उन्हें चार बजे सुबह टहलने का अभ्यास करना चाहिए ताकि छ: बजे तक इन सब चीजों से निवृत्त हो जाएँ। घर के सभी लोगों के उठने के पहले अपनी साधना समाप्त कर देनी चाहिए, इससे सुविधा रहेगी। जो स्त्रियाँ योग का अभ्यास करेंगी वे देखेंगी कि उनके जीवन में कितना महान् परिवर्तन आया है। मन में स्वास्थ्य, प्रफुल्लता और शान्ति मिलेगी। मानसिक सन्तुलन को प्राप्त कर, वे स्फूर्ति, साहस और धैर्य का अनुभव करेंगी जो उनके पारिवारिक जीवन को सुखमय बनाने के लिये भी बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

6. विचार और आदतें

हम चाहे जिस दृष्टिकोण से देखें, हमारा आये दिन का जीवन विचारजन्य आदतों के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। मनुष्य को उसकी विचारजन्य आदतें ही जिस किसी भी अवस्था में डाल देती हैं। हमारा जीवन और हमारी परिस्थिति जैसी भी है, वह हमारी आदतों का ही परिणाम है। हम सब लोगों को सदैव यह भय रहता है कि कहीं हम अपनी आदतों के दास न बन जायें। कुछ लोग अपनी आदतों के वश में इस प्रकार हो जाते हैं कि उनका मस्तिष्क अपने आप काम करने वाली मशीन के समान हो जाता है। कालान्तर में वे अपने मस्तिष्क पर से नियंत्रण खो बैठते हैं। वे प्रात: उठ बैठते हैं, क्योंकि घड़ी उनको एक निश्चित समय की सूचना दे रही है। वे मशीन की भाँति ही अपने पुराने वस्त्रों को धारण करते हैं, क्योंकि उनके लिए जीवन में कोई नवीनता नहीं है। उनके लिए इस बात में कोई आनन्द नहीं है कि नवीन दिवस अपने साथ नई संभावनाएँ, नई आशाएँ और नई महत्त्वाकांक्षाएँ लेकर आया है। इसका कारण उनकी बेकार की आदतें ही हैं।

प्रत्येक कर्त्तव्य ने एक बेकार आदत का रूप धारण कर लिया है। उनके पास कार्यों को करने के लिए कोई नूतन साधन नहीं हैं और न इन कार्यों को करने में उन्हें कोई आनन्द ही प्राप्त होता है। जिस रूप में उनका जीवन प्रारम्भ हुआ, उसी रूप में अब है और सदैव उसी रूप में रहेगा। बेकार आदतों ने अपने मजबूत पंजों में उन्हें अच्छी तरह जकड़ लिया है। आदत के विषाक्त वातावरण में प्रेम का सारा सौन्दर्य, आकर्षण, कुतूहल और आनन्द नष्ट हो जाता है। जीवन-मृत्यु आदि के विषय में हमारे विश्वास क्या हैं? क्या ये हमारी जाति के निष्प्राण आदतों के बन्धन नहीं हैं? इन बेकार की आदतों ने लोगों की शक्ति और प्रतिभा का अन्त कर दिया है। वह दैवी शक्ति, जो जीवन में सुख-साम्राज्य की स्थापना करती, उनका भी समूल नाश इन्हीं आदतों के द्वारा हुआ।

आप कहते हैं, 'मैं अपने कर्त्तव्य का पालन करता हूँ।' मैं यह जानने के लिये आपकी ओर देखती हूँ कि आपके जीवन में इस शब्द का क्या अर्थ है। मैं

क्या देखती हूँ? उदासी, निर्जीवता, लाचारी। आनन्द की किरण और उत्साह की चिन्गारी का तो दर्शन तक नहीं होता। मैं सैकड़ों ऐसे लोगों को जानती हूँ जिन्हें ऐसा कार्य करना पड़ रहा है जिसको करने का विचार तक उन्होंने कभी नहीं किया था। अपनी दासता की बेड़ियों को तोड़ डालिये। देश-भ्रमण कीजिए और आत्मज्ञान पाने का प्रयास कीजिए। जो कोई भी कार्य कीजिए, तनिक शीघ्रता से कीजिए। कहीं ऐसा न हो कि इच्छा की अन्तिम चिन्गारी भी सदा के लिए बुझ जाय।

जब मैं अपने चारों ओर देखती हूँ तो ऐसे अनेक लोगों को पाती हूँ जिनके चेहरे पर निराशा की छाप है, जो दु:खी और संतप्त हैं। उनके जीवन में आशा और उत्साह की लौ प्रज्वलित नहीं हुई है। जीवन का प्याला जो हम लोगों के अधरों से लगाया गया है, वह दु:ख से लबालब भरा है। इसका कारण स्वयं दु:ख नहीं हो सकता। दु:ख तो आत्मा को गम्भीर बना देता है और दया, प्रेम तथा सहानुभूति के साथ ही आनन्द को भी हृदय में स्थान देता है। इसका एकमात्र कारण अपने को बेकार की आदतों में जकड़ देना है। अपने मन में दृढ़ निश्चय कर लीजिए कि आप सदैव किसी नवीन वस्तु में दिलचस्पी रखेंगे। अनमने, यांत्रिक भाव से किसी कार्य को नहीं कीजिए। प्रत्येक कार्य को प्रेम भाव से सम्पन्न कीजिए। खुले वातावरण में टहलने के लिये निकल पड़िये। खूब अच्छी तरह सांस लेकर प्रकृति के जीवन-अमृत को ग्रहण कीजिए। आपकी खोई हुई युवावस्था तथा कपोलों का गुलाबी रंग पुन: लौट आवेगा। जब टहलने जाइए तो फूलों को चुनकर अपने साथ अपने कमरों को सुन्दर और मधुर बनाने के लिए ले लीजिए। आपके अपने हाथों से चुने हुए फूल आपके जीवन को अधिक सुन्दर और आनन्दमय बनावेंगे।

लोगों में सबसे बड़ी कमी यह आ गई है कि वे अपनी बाल्यावस्था से दूर हट गये हैं। बाल्यावस्था की स्फूर्ति, आनन्द, सुख आदि से दूर बेकार जीवन की बेकार आदतों के चक्कर में जा पड़े हैं। बेकार की आदतों से छुटकारा पाने का यह सर्वोत्तम उपाय है, क्योंकि बाल्यावस्था ही सजीव कर्म है। जंगली फूलों को चुनिए। यदि आप दौड़ना चाहें तो दौड़िए भी। 'दौड़ूँ? मैं इस उम्र में दौड़ते समय कैसी लगूँगी?' ऐसा मत सोचिए, अपनी आयु को भूल जाइए। आपका मन ही आपकी आयु निर्धारित करता है। मन में आशा उत्पन्न करना बेकार आदतों से मुक्त होने का दूसरा उपाय है। सदैव आशा करनी चाहिए कि कोई सुन्दर बात होने वाली हैं। इस प्रकार की आशा में इतना सुख और आनन्द मिलेगा कि जिन

सुन्दर बातों के होने की आप आशा कर रहे हैं, वे न भी हों तो भी इस आशा को आप नहीं छोड़ सकते। लेकिन आप देखेंगे कि वे होती अवश्य हैं। प्रत्येक व्यक्ति के प्रति सद्भावना रखें। अपने पड़ोसियों के सद्गुणों की खोज करें।

यह जीवन एक लम्बी सड़क है, पर यह सीधी नहीं। यह अत्यन्त घुमावदार है। इस सड़क पर अनेक मोड़ हैं और सदा लोग यह जानने के लिए उत्सुक रहते हैं कि इस मोड़ के परे क्या है? एक मोड़ पार करने के बाद दूसरा मोड़, फिर तीसरा, फिर चौथा आता है। हर मोड़ पर सदा सुख और आनन्द ही नहीं मिलता। कभी-कभी निराशा, दु:ख और आँसू भी मिलते हैं। लेकिन आँसुओं को सुखाकर सड़क के अगले मोड़ की ओर बढ़ जाना चाहिए। जीवन मिला है जीने के लिए। एक-एक क्षण जीने के लिए है। आप चाहें तो अपने जीवन को अवश्य जीने योग्य बना सकते हैं।

मनुष्य अपने स्वभाव का दास है। मनुष्य ने न तो जीवन बनाया और न ही जीवन के नियम। जीवन और नियम तो अनादि हैं, नित्य हैं। मनुष्य उन नियमों के अन्दर है। वह उन्हें समझ सकता है और उन्हें मान सकता है। मनुष्य केवल इतनी शक्ति रखता है कि अपनी इच्छा, स्थिति व शक्ति के अनुसार उन नियमों में से अपने लिए अनुकूल नियमों को पसन्द कर ले। मनुष्य आदतों का कीड़ा है। वह इस नियम का उल्लंघन तो नहीं कर सकता, पर अपनी आदतों को बदल सकता है। मनुष्य अपनी आदत के कारण कुछ-न-कुछ अवश्य करेगा, चाहे वह अच्छा कर्म करे या बुरा।

एक ही कार्य को बार-बार करने का नाम आदत है। मनुष्य कुछ विचारों, कर्मों और अनुभवों को बार-बार दुहराता है। वह अपनी बुरी आदतों को तब तक नहीं छोड़ता, जब तक उनसे उसे सुख का अनुभव होता रहता है। जब उन्हीं आदतों द्वारा उसे दु:ख होने लगता है तो उनसे बचने का मार्ग ढूँढने लगता है और अन्त में उन्हें छोड़कर अच्छी आदतों को ग्रहण कर लेता है। मनुष्य तब तक दु:खों को भोगता है जब तक वह यह समझता है कि मैं इन दु:खों और भूलों से छुटकारा नहीं पा सकता अथवा इन पर विजय प्राप्त करने में असमर्थ हूँ।

मनुष्य के मार्ग में सबसे बड़ा रोड़ा उसकी अपनी निराशा है। यह निराशा मनुष्य की कमजोरी का द्योतक है। 'मैं अवश्य विजय प्राप्त करूँगा' के संकल्प से इसे बलपूर्वक हटा देना चाहिये। जब तक प्रत्येक मनुष्य यह नहीं समझेगा कि वह ही स्वयं अपना सुधारक है, तब तक न तो वह स्वतंत्र हो सकता है और न संभल ही सकता है।

7. ध्यान की एक क्रिया

पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी सत्यानन्द जी के मुंगेर के चातुर्मास-प्रवास में नित्य प्रात: और सायं 'आनन्द भवन' में ध्यान की कक्षा लगती थी। इस कक्षा में वे ध्यान की एक क्रिया सिखलाते थे जिसने बड़ी लोकप्रियता प्राप्त की है। यह क्रिया सभी मानसिक विकारों को दूर कर मनुष्य की सुप्त शक्तियों को जाग्रत करने वाली है। इस ध्यान की क्रिया की सम्पूर्ण विधि सबके लाभार्थ यहाँ लिख रही हूँ। इस ध्यान की क्रिया का नाम है 'चिदाकाश धारणा'।

सबसे पहले पद्मासन या सिद्धासन लगाकर बैठ जाइए। तन और मन दोनों स्थिर कर लीजिए, आँखें हमेशा बन्द रखिए। अब चिदाकाश की कल्पना कीजिए। भ्रूमध्य के ऊपर का भाग जिसे ललाट कहते हैं उसे ही चिदाकाश कहा जाता है। आँखें बन्द करने पर जो अंधकार दिखता है उस पर अपना ध्यान लगाइए। उस घोर अंधकार का अनुभव तैलधारा की तरह निरंतर करते जाइए। मन को पकड़िए और अंधकार की पकड़ भी ठीक-ठीक होनी चाहिए। इसी अंधकार में कभी-कभी प्रकाश दिखेगा, कभी बिजली चमकेगी और कभी तारे टिमटिमाते नजर आएँगे। अब तालयुक्त सांस लेते हुए प्राणों की धारा को निम्नलिखित मर्मस्थानों में बारी-बारी से भेजिए।

चिदाकाश का ध्यान करते समय जिस आसन में आप बैठे थे उसी आसन में बैठे रहिये। आँखें सदा बन्द रहेंगी। मन और तन स्थिर रहेंगे। अब नासिका के अग्र भाग पर ध्यान कीजिये और वहाँ की संवेदनाओं का अनुभव करिए।

नासिका के बाद अब भ्रूमध्य, याने दोनों भौंहों के बीच में जहाँ टीका लगाया जाता है, वहाँ पर ध्यान कीजिए। भ्रूमध्य के बाद ललाट (चिदाकाश) पर ध्यान करिये। इसके बाद सहस्रार पर आइए। यह सिर के ऊपर का भाग है। यहाँ की भी संवेदनाओं का अनुभव करें। इसके बाद सिर के पीछे की ओर के भाग जिसे बिन्दु विसर्ग कहा जाता है, उस पर ध्यान करें। अब भ्रूमध्य के ठीक पीछे वाले भाग, जिसे आज्ञाचक्र कहते हैं, उस पर ध्यान

करिए और वहाँ की संवेदनाओं को अच्छी तरह अनुभव करिए। यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है, जिसके दोनों ओर इड़ा और पिंगला हैं। इसके पश्चात् गर्दन के जोड़ पर आइए जिसे विशुद्धि चक्र कहते हैं। विशुद्धि चक्र के बाद अनाहत चक्र पर आइए जो हृदय के पीछे है। इसके पश्चात् मणिपुर चक्र पर आइये जो नाभी के ठीक पीछे है। मणिपुर के बाद अब स्वाधिष्ठान चक्र पर आएँ। रीढ़ की हड्डी जहाँ पर समाप्त होती है ठीक उससे चार उंगली ऊपर है यह चक्र।

अंत में मूलाधार चक्र पर आइए जहाँ पर रीढ़ की हड्डी समाप्त होती है। इसे ही कुण्डलिनी का स्थान कहते हैं। पुनः इसी तरह नीचे से ऊपर जाइए अर्थात् मूलाधार से नासिका तक। अब श्वास मूलाधार से खींचिए और स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्त्रार, ललाट, भ्रूमध्य, नासिका तक लाइए। फिर नासिका से मूलाधार तक श्वास लाकर छोड़ें। इस श्वास-प्रश्वास की क्रिया में निरंतरता रहनी चाहिए, अर्थात् बीच में श्वास टूटने न पाए। इस प्रकार प्राण का प्रवाह ऊपर से नीचे तक कई बार बहाकर अभ्यास समाप्त कर दीजिये।

यह याद रखिए कि प्राण का प्रवाह उपर्युक्त मर्मस्थानों से होकर आना और जाना चाहिए। इस क्रिया में चिदाकाश धारणा और चक्रभेदन दोनों सम्मिलित हैं।



8. इच्छा और स्वप्न

किसी वस्तु को पाने के लिए मन में जो विचार किया जाता है उसी से इच्छा या महत्त्वाकांक्षा पैदा होती है। जिस वस्तु को पाने की हम इच्छा करते हैं उस पर विचार करके हमें उसके प्रयत्न में लग जाना चाहिए। हम सोचते हैं कि अमुक वस्तु हमें मिल जाय, किन्तु जाँच करने पर मालूम होता है कि वस्तु पाने की हमारी इच्छा प्रबल नहीं होती। हम कहते हैं कि यदि वह आदर्श हमें प्राप्त हो जाय तो अच्छा है, नहीं तो उसकी कोई परवाह नहीं है। इस ढीलेपन से कोई सफलता नहीं मिलती। इसे हम अच्छा नहीं कह सकते। यह तो एक सनक है।

जो संसार में कोई महान् काम करना चाहते हैं, उन्हें अपने मन रूपी दरवाजे में चंचल इच्छाओं और कुत्सित विचारों को बिल्कुल नहीं घुसने देना चाहिए। जो लोग शंकित हृदय से किसी बात की इच्छा एक सप्ताह, एक मास या एक वर्ष तक करते हैं और फिर उसे अधूरा छोड़कर दूसरी बात की इच्छा करने लगते हैं, उनकी मानसिक शक्ति अति क्षीण हो जाती है। अन्त में उनका जीवन असफल हो जाता है। अव्यवस्थित लोगों के मन आज एक बात की इच्छा करते हैं और कल किसी दूसरी बात की। उनकी हालत उस जहाज की तरह है जिसमें न तो पतवार है, न कुतुबनुमा।

एक प्रकार की और इच्छा देखने में आती है जिसे पूरा करने के लिए लोग सच्चाई के साथ प्रयत्न तो करते हैं, किन्तु सदा यही सोचा करते हैं कि इसमें हमें निराश होना पड़ेगा। ऐसी इच्छाओं से कोई लाभ नहीं होता, जिनपर अविश्वास का भूत सवार है। इच्छा ऐसी बात की करनी चाहिए जिससे हम किसी ऊँचे उद्देश्य की पूर्ति कर सकें। जब ऐसी इच्छा आप करेंगे तो एक क्षण भी आप चुप नहीं बैठ सकेंगे। आप उस उद्देश्य को सामने रखकर अपनी सारी बुद्धि लगाते हुए आगे बढ़ते चले जाएँगे और अन्त में आपको इसका पुरस्कार मिलेगा।

अतएव इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि हम काफी सावधानी से अच्छी इच्छा उत्पन्न करने का प्रयत्न करें। महात्मा ईसा के इस कथन के

अनुसार चलिए कि ईश्वर के राज्य और उनकी नेकी की खोज करने से दुनिया की सभी वस्तुएँ अपने आप मिल जाती हैं। जब उसके राज्य में किसी ऐसी वस्तु की इच्छा करेंगे जिससे हम अच्छे नागरिक बनें, दूसरों को लाभ पहुँचा सकें और हमारा खुद का जीवन सुखी हो, तो वह वस्तु मिलेगी ही।

जितने भी ऊँचे स्वप्न देखने वाले हुए हैं, जिनके ऊँचे मन्तव्य रहे हैं, वे संसार के मुक्तिदाता हुए हैं। जिनके हृदय में सुन्दर स्वप्न हैं, जिनके आदर्श महान् हैं, वे उन्हें अवश्य प्राप्त कर लेंगे। कोलम्बस ने एक नई दुनिया का स्वप्न देखा था और उसे वह पा गया। भगवान बुद्ध ने एक आध्यात्मिक संसार की कल्पना की थी जहाँ पूर्ण शान्ति है, जो स्वच्छ व सुन्दर है, तो उस कल्पना के सहारे वे स्वयं वहाँ प्रवेश कर गए। उस मधुर संगीत को उठने दीजिए जिसकी झंकार हृदय में उठती है। उस रूप की सुन्दरता की कल्पना दृढ़ होने दीजिए जिससे आपके पवित्र विचार शोभित होते हैं। इन्हीं से सब सुखदायक स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं और एक स्वर्गीय वातावरण की रचना होती है।

किसी बात की इच्छा करना ही उसे ग्रहण करना है। आकांक्षा की पूर्ति अवश्य होती है। क्या यह कभी हो सकता है कि हमारी कुत्सित इच्छाओं की पूर्ति तो अच्छी तरह हो और शुद्ध अभिलाषायें बिना पूर्ण हुए ही मिट जायें? सृष्टि में ऐसा नियम नहीं है। ऐसी स्थिति कदापि नहीं हो सकती। नियम तो यही है कि जो माँगो वही मिलेगा। स्वप्न ऊँचे देखने चाहिये। ध्येय उच्च हो। जैसा ध्येय होगा वैसे ही तुम बन जाओगे। तुम्हारा ध्येय ही इस बात की आशा दिलाता है कि तुम एक दिन क्या होने वाले हो। विशाल वृक्ष एक छोटे-से बीज के अन्दर होता है। चिड़िया का जन्म अण्डे से होता है। आत्मा का जो सबसे ऊँचा स्वप्न होता है, उसी में देवदूत विचरते हैं। यदि तुम कोई आदर्श निश्चित कर लोगे और वहाँ तक पहुँचने का प्रयत्न करोगे, तो तुम्हारी परिस्थितियाँ प्रतिकूल होने पर भी बहुत दिनों तक वैसी नहीं रहेंगी। ऐसा नहीं हो सकता कि अन्दर तो गति हो और बाहर स्थिरता।

एक नवयुवक दरिद्रता और घोर परिश्रम से पीसा जाता है। न तो उसे शिक्षा मिली और न सभ्यता। कारखाने में उसे अधिक समय तक काम करना पड़ता है पर उसके स्वप्न ऊँचे हैं। वह अपने मस्तिष्क में एक आदर्श जीवन की कल्पना करता है। वह अपने शेष समय और साधनों को अपनी गुप्त शक्तियों के उत्थान में लगा देता है। थोड़े ही समय में उसका मस्तिष्क इतना

बदल जाता है कि वह उसे अनावश्यक कपड़े की तरह उतार कर फेंक देता है। कुछ वर्षों के बाद आप उस नवयुवक को अपने में पूर्ण रूप में पायेंगे।

जो विचारहीन हैं, अज्ञानी हैं, मूढ़ हैं, वे केवल वस्तुओं का बाहरी प्रभाव देखते हैं। इसलिए वे भाग्य, संयोग और प्रारब्ध की बातें करते हैं। धनी आदमी को देखकर कहते हैं कि वह कितना भाग्यवान् है। किसी बुद्धिमान को देखते हैं तो कहते हैं उस पर ईश्वर की विशेष कृपा है। वे यह नहीं जानते कि उन्होंने धन या बुद्धि अर्जित करने के लिए कितना तप और त्याग किया है। कितने घोर परिश्रम और लगन के साथ वे अड़चनों पर विजय पाकर अपने आदर्श को प्राप्त कर सके हैं। वे कष्टों और यातनाओं को नहीं देखते, बल्कि उनकी सफलता और सुख को ही देखते हैं और कहते हैं कि यह भाग्य है।

मनुष्य के लिए हर हालत में प्रयत्न और उसका परिणाम साथ-साथ रहता है। उसके परिणाम से ही उसके पराक्रम का नाप मिलता है। संयोग से कुछ नहीं होता। दैवी शक्ति, धन, सम्पत्ति, मानसिक और आध्यात्मिक अधिकार यत्न से ही मिलते हैं; हमारे विचारों की पूर्ति से, उद्देश्य तक पहुँचने से, स्वप्नों के पूर्ण होने से ही प्राप्त होते हैं।



9. कुण्डलिनी योग की भूमिका

कुण्डलिनी योग में शरीर के भीतर की नाड़ियों और शारीरिक शक्तियों द्वारा साधन किया जाता है। साधक उनके ऊपर अधिकार प्राप्त करके अपने आपको ऐसा बना लेता है कि वह अच्छे-बुरे किसी भी काम को करे पर उसका मन चलायमान नहीं होता। कुण्डलिनी योग का सम्बन्ध नाड़ी-संस्थान से है, जिनमें प्राणबल रहता है। मनुष्य का बल या तो शरीर की पेशियों पर या नाड़ी संस्थान पर निर्भर करता है। नाड़ी-संस्थान का बल ही प्राणों का बल है। जब नाड़ियों का बल कम हो जाता है तो दिल, जिगर, आँख, नाक, कान, मस्तिष्क सभी की शक्तियाँ कम हो जाती हैं। हाथ-पैर भी कमजोर हो जाते हैं।

कुण्डलिनी योग के साधक इस नाड़ी-संस्थान का बल बढ़ाते हैं। इस संस्थान की रूपरेखा अच्छी प्रकार जान लेना आवश्यक है, जो इस भाँति है। मनुष्य के शरीर में मेरुदण्ड सबसे अधिक महत्त्व का अंग है। उसके भीतर एक नाड़ी रहती है, जिसे सुषुम्ना कहते हैं। यह नाड़ी गुदा के पास मूलाधार-चक्र से मस्तिष्क तक जाती है। इसके इधर-उधर दो नाड़ियाँ होती हैं जिन्हें इड़ा और पिंगला कहते हैं। इड़ा को चन्द्र नाड़ी और पिंगला को सूर्य नाड़ी भी कहते हैं। मेरुदण्ड के सबसे नीचे के भाग में त्रिकोण के आकार का एक अंग होता है। उसके तीनों कोणों से ये तीनों नाड़ियाँ निकलती हैं। ये तीनों नाड़ियाँ आज्ञाचक्र पर जाकर मिल जाती हैं। इसे युक्त-त्रिवेणी कहते हैं। इन तीनों नाड़ियों का सम्बन्ध हृदय से है, जहाँ से एक सौ नाड़ियाँ निकलती हैं और उनमें ये तीनों नाड़ियाँ भी शामिल हैं। इन प्रारम्भिक सौ नाड़ियों में से चौदह नाड़ियाँ मुख्य हैं। इन चौदह में से दो दोनों पैरों में, दो दोनों हाथों में, दो दोनों कानों में, दो आँखों में, दो नथुनों में, एक जिह्वा में, एक गुदा में, एक मूत्रनली और एक वीर्य की नली में जाती है। मेरुदण्ड के भीतर जो स्थूल नली जाती है, वह छोटी अंगुली के बराबर मोटी है। इन सौ नाड़ियों का सम्बन्ध मेरुदण्ड की मोटी नली से होता है।

उस मोटी नली में छ: केन्द्र-स्थान होते हैं, जिन्हें चक्र कहते हैं। इन चक्रों के नाम हैं–मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञा। इन्हें कमल भी कहते हैं। प्रत्येक कमल में दलों की संख्या अलग-अलग होती है। मूलाधार में चार, स्वाधिष्ठान में छ:, मणिपुर में दस, अनाहत में बारह, विशुद्धि में सोलह और आज्ञा-चक्र में दो दल होते हैं।

आधुनिक शारीरिक-विज्ञान में मेरुदण्ड के दोनों ओर से इकत्तीस-इकत्तीस नाड़ियाँ निकलती हैं। इन केन्द्रों को वे plexus कहते हैं। डॉक्टरी-विज्ञान और कुण्डलिनी योग के विचार से इन केन्द्रों के स्थानों में कुछ भेद है। डॉक्टरी-विज्ञान में उनका स्थूल रूप लिया गया है, जबकि कुण्डलिनी योग में उनका सूक्ष्म रूप, जिसके अनुसार मूलाधार चक्र गुदा से दो अंगुल ऊपर और मूत्र स्थान से दो अंगुल नीचे माना गया है। इसी प्रकार स्वाधिष्ठान चक्र मूत्र-स्थान के पास, मणिपुर नाभि के पास, अनाहत चक्र हृदय के पास, विशुद्धि-चक्र कण्ठ के पास, और आज्ञा-चक्र दोनों भृकुटियों के बीच मस्तिष्क में होता है। इन सब के ऊपर सहस्त्रार चक्र है।

मूलाधार-चक्र के ऊपर एक स्थान होता है, जो कुण्डलिनी का स्थान कहलाता है। वहाँ एक शक्ति सर्प की भाँति साढ़े तीन लपेटों में लिपटी हुई रहती है। इसी को कुण्डलिनी कहते हैं। यह सोयी हुई अवस्था में रहती है और इसका मुँह सुषुम्ना नाड़ी के नीचे की ओर छिद्र में लगा रहता है। अत: शरीर में प्राणों का संचार केवल इड़ा और पिंगला नाड़ियों द्वारा हुआ करता है। इन दो नाड़ियों का क्षेत्र प्रकृति का क्षेत्र है, जबकि आत्म-तत्त्व के क्षेत्र का सम्बन्ध सुषुम्ना से रहता है। सुषुम्ना के द्वारा ही आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रगति होती है। योगियों के अतिरिक्त प्राय: सभी मनुष्यों की सुषुम्ना नाड़ी बन्द ही रहती है।

जब कुण्डलिनी सोई हुई रहती है तब सुषुम्ना का मुँह उससे बंद रहता है। इसलिए कुण्डलिनी को जगाया जाता है। कुण्डलिनी नाड़ी आलस्य की नाड़ी कहलाती है, जिसे अंग्रेजी में inertia कहते हैं। जब तक इसमें आलस्य रहेगा, तब तक वह सुषुम्ना के मुँह को नहीं खोलेगी। इस आलस्य के कारणों में विशेष कारण अधिक खाना है। उदर और मस्तिष्क अधिक खाने से भारी रहते हैं। अत: कुण्डलिनी को जाग्रत करने के लिए नियमित, तपोमय और सात्त्विक जीवन अत्यन्त आवश्यक है।

जप, ध्यान और प्राणायाम से भी कुण्डलिनी को जाग्रत करते हैं। इसके लिए अनेक प्रकार के आसनों, मुद्राओं और प्राणायामों के विधान हैं।

कुण्डलिनी योग को षट्-चक्र भेदन भी कहते हैं। जब सुषुम्ना नाड़ी खुल जाती है तो साधक उसके द्वारा सीधे सहस्त्रार चक्र में पहुँचकर ब्रह्म का साक्षात्कार कर लेता है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा है–

The rousing of the Kundalini is the one and the only way to attain divine wisdom, superconscious perception and realization of spirit. The rousing may come in various ways–through love of God, through the mercy of perfected sages or through the power of the analytic will of the philosopher. Whenever there was any manifestation what was ordinarily called supernatural power or wisdom, then a little current of Kundalini must have found its way into the Sushumna.

अर्थात् आत्मज्ञान, ब्रह्मज्ञान और दिव्य ज्ञान प्राप्त करने का एकमात्र साधन कुण्डलिनी का जागरण है, जिसकी अनेक तरीके हैं। ईश्वर-भक्ति द्वारा, संतों और महात्माओं की कृपा द्वारा अथवा गवेषणापूर्ण आत्मिक संकल्प द्वारा कुण्डलिनी जाग्रत की जा सकती है। जहाँ कहीं भी किसी मनुष्य में किसी अलौकिक शक्ति का चमत्कार दिखाई पड़े अथवा दिव्य ज्ञान के लक्षण अनुभव में आएँ तो समझ लेना चाहिये कि उसके भीतर कुण्डलिनी किसी-न-किसी अंश में जाग्रत हो गई है और प्राण का संचार सुषुम्ना नाड़ी द्वारा होने लगा है।

कुण्डलिनी योग के अनेक साधन हैं, जो हठ योग के अन्तर्गत भी आते हैं। इनके द्वारा स्वयं नाड़ी-संस्थान को वश में किया जाता है। यहाँ पर केवल कुण्डलिनी योग का एक साधन, जिसे साधारणत: साधक किया करते हैं, बतलाया जा रहा है।

सिद्धासन लगाकर बैठिए; गुदा और लिंग को ऊपर खींचिये जिसे मूलबंध कहते हैं। मूलबंध के साथ-साथ ही पेट को भीतर ले जाइए। यहाँ तक कि वह रीढ़ की हड्डी से लग जावे और आगे पेट खाली होकर एक खाली बर्त्तन की भाँति दिखने लगे। इसे उड्डियान बंध कहते हैं। अब श्वास भीतर खींचिये अर्थात् पूरक कीजिए और सीने को श्वास द्वारा वायु से भरकर कुम्भक कीजिये। सिर को नीचे झुकाकर ठोड़ी को गले के गड्ढे अर्थात् कण्ठ-कूप में लगा लीजिए। ठोड़ी को कण्ठकूप में लगाने की क्रिया को 'जालन्धर बंध' कहते हैं। इस प्रकार मूलबंध, जालन्धर बंध, उड्डियान बंध और कुम्भक

योग पर तेरह निबन्ध

श्रीमती अमर संगीत, बी.ए. (आनर्स), संगीत प्रभाकर

स्वामी सत्यानन्द जी की शिक्षाओं से

बिहार योग विद्यालय द्वारा प्रकाशन – 1965, 2013



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

योग पर तेरह निबन्ध

सन् 1965 में प्रकाशित इस पुस्तक में श्रीमती अमर संगीत ने स्वामी सत्यानन्द जी से प्राप्त शिक्षाओं को बड़े सहज, सुबोध और प्रेरक ढंग से जनमानस के समक्ष रखा है। योग के प्रयोजन, इसके विभिन्न अंगों, शरीर की संरचना तथा महिलाओं के लिए उपयोगी योगाभ्यासों जैसे विषयों को सरल भाषा में निबन्ध रूप में प्रस्तुत करना सचमुच प्रशंसनीय योगदान है।

–*सम्पादक*

एक साथ होते रहें। रेचक करते समय तथा उसके पश्चात् भी मूलबंध और उड्डियान लगे रहने चाहिए। यदि उड्डियान खुल जावे तो फिर लगा लिया जावे, परन्तु मूलबंध लगातार जमा रहना चाहिये। पहले यह अभ्यास प्रतिदिन बीस मिनट करना चाहिए। फिर उसे धीरे-धीरे अधिक बढ़ाना चाहिए, गुरु के कहने पर कई घण्टे तक।

साधकों के लिए कुछ आवश्यक बातें निम्न हैं–

1. एक बार कुण्डलिनी जागृत हो जाने पर यह नहीं समझना चाहिए कि वह सर्वदा जाग्रत रहेगी। अत: मन और शरीर की स्वस्थता, निर्मलता तथा विचारों की सूक्ष्मता एवं वैराग्य का बना रहना अत्यन्त आवश्यक है।
2. मांस, मादक पदार्थ, खटाई, मिर्च और कोष्ठबद्धकारी भोजन नहीं करने चाहिए।
3. कुसंग, क्रोध, शोर, भय आदि उत्पन्न करने वाले तथा अधिक शारीरिक परिश्रम वाले कार्यों से बचे रहना चाहिए।
4. आहार में सूक्ष्म, सात्त्विक, स्निग्ध पदार्थों जैसे मूँग-दाल, सब्जी, लौकी, पपीता, दूध और फलों का सेवन करना चाहिए। नमक वर्जित है।

कुण्डलिनी योग में यही शास्त्रोक्त उत्तम साधन है। अन्य साधन भी हैं। स्वामी सत्यानन्द जी दो उपाय और बतलाते हैं। एक अजपा, दूसरा क्रियायोग। अजपा सर्व-सरल उपाय है, किन्तु बिना मार्गदर्शन के नहीं हो सकता।



10. राजयोग की रूपरेखा

परिभाषा

राजयोग का अर्थ है चित्तवृत्ति का निरोध। इसका उद्देश्य है आत्मा को अपने यथार्थ स्वरूप का ज्ञान कराना, जिससे वह अपने को मानसिक विकारों से पृथक् समझ सके। परन्तु यह तभी हो सकता है जब चित्त की वृत्तियों का निरोध हो जाय। अतएव राजयोग का काम है चित्त की सभी वृत्तियों का निरोध करना।

चित्तभूमिका

चित्तभूमिका के पाँच रूप हैं—क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध। क्षिप्त अवस्था में चित्त एक विषय से दूसरे विषय पर दौड़ता रहता है। चित्त में स्थिरता नहीं रहती। मूढ़ अवस्था में तम की प्रधानता रहती है और इससे निद्रा, आलस्य, प्रमाद आदि का प्रादुर्भाव होता है। विक्षिप्तावस्था में मन थोड़ी देर के लिए एक विषय में लगता है, पर तुरन्त ही अन्य विषय की ओर ध्यान चला जाता है और पहला विषय छूट जाता है। यह चित्त की आंशिक स्थिरता की अवस्था है।

ये सब अवस्थायें राजयोग की नहीं हैं। एकाग्र अवस्था वह है जिसमें चित्त देर तक एक विषय पर लगा रहता है। यह किसी वस्तु पर मानसिक केन्द्रीकरण या ध्यान की अवस्था है। यह राजयोग की पहली सीढ़ी है।

अन्तिम अवस्था निरुद्धावस्था में चित्त की सभी वृत्तियों का लोप हो जाता है और चित्त अपनी स्वाभाविक, स्थिर और शान्त अवस्था में आ जाता है। यह अवस्था राजयोग के अनुकूल है।

आठ अंग

चित्त की शुद्धि और पवित्रता के लिये राजयोग आठ प्रकार के साधन बतलाता है—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। ये सभी योगांग कहलाते हैं।

यम—योग का प्रथम अंग यम है और इसके अन्तर्गत अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह आते हैं। राजयोगी के लिये इनकी साधना बहुत ही आवश्यक है, क्योंकि मन को सबल बनाने के लिये शरीर को भी सबल बनाना आवश्यक है। काम, क्रोध, लोभ आदि विकारों पर विजय प्राप्त किये बिना उसका मन या शरीर सबल नहीं रह सकता।

नियम—राजयोग का दूसरा अंग है नियम, याने सदाचार साधन के हेतु व्रत का पालन। इसके अंग शौच, सन्तोष, तप (सर्दी, गर्मी आदि सहने का अभ्यास), स्वाध्याय (नियमपूर्वक धर्म-ग्रंथों का अध्ययन करना) और ईश्वरप्रणिधान (ईश्वर का ध्यान और उन पर अपने को छोड़ देना) हैं।

आसन—राजयोग का तीसरा अंग है आसन। आसन शरीरशुद्धि का साधन है। इसका अर्थ है शरीर को ऐसी स्थिति में रखना, जिससे वह निश्चल होकर सुख के साथ देर तक ध्यान में स्थिर रह सके। चित्त की एकाग्रता के लिये शरीर का अनुशासन भी उतना ही आवश्यक है जितना मन का। यदि शरीर रोगादि बाधाओं से पूर्णत: मुक्त नहीं रहे तो समाधि लगाना बड़ा ही कठिन है। शरीर को निरोग तथा सबल बनाये रखने के लिये योगासन उत्तम साधन है।

प्राणायाम—राजयोग का चौथा अंग है प्राणायाम। प्राणायाम का अर्थ है श्वास का नियंत्रण या प्राणों को अपने वशीभूत करना। प्राणायाम के तीन अंग हैं—पूरक (श्वास भीतर खींचना), रेचक (श्वास बाहर फेंकना) और कुम्भक (श्वास को भीतर या बाहर रोकना)। प्राणों की चंचलता से मन चंचल हो जाता है और मन की चंचलता से शरीर। प्राणायाम के द्वारा चित्त में एकाग्रता और मन में दृढ़ता आती है। जब तक श्वास की क्रिया चलती रहती है, तब तक चित्त भी उसके साथ चंचल रहता है। जब श्वास वायु की गति स्थिर या स्थगित हो जाती है तब मन भी नि:स्पन्द या स्थिर हो जाता है।

प्रत्याहार—प्रत्याहार राजयोग का पाँचवाँ अंग है। इसके द्वारा इन्द्रियों को अपने विषयों में जाने से रोका जाता है, जिससे मन स्थिर हो जाता है। मन और इन्द्रियों का घनिष्ठ सम्बन्ध है। इन्द्रियों को अन्तर्मुख करने से मन वश में हो जाता है और मन को वश में करने से इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं। जब इन्द्रियाँ पूर्णत: वश में आ जाती हैं, तब वे अपने स्वाभाविक विषयों से हट कर मन की ओर लग जाती हैं। इस अवस्था में इन्द्रियों के सामने सांसारिक विषय रहते हुए भी हम उनका अनुभव नहीं कर सकते। रूप, रस, गंध, शब्द या स्पर्श, किसी का प्रभाव मन पर नहीं पड़ता।

धारणा— धारणा राजयोग का छठा अंग है। धारणा का अर्थ है चित्त को अभीष्ट विषय पर जमाना। वह विषय बाह्य पदार्थ भी हो सकता है (जैसे सूर्य या किसी देवता की प्रतिमा) या अपना शरीर भी (जैसे अपनी नाभि या भौंहों का मध्य भाग)। किसी विषय पर दृढ़तापूर्वक चित्त को एकाग्र करने की शक्ति ही राजयोग की असल कुंजी है।

ध्यान— ध्यान इसके बाद की अगली सीढ़ी है। ध्यान का अर्थ है ध्येय-विषय का निरन्तर मनन। इसके द्वारा विषय का सुस्पष्ट ज्ञान हो जाता है। पहले भिन्न-भिन्न अंशों या स्वरूपों का बोध होता है। तदनन्तर अविराम ध्यान के द्वारा सम्पूर्ण चित्र आ जाता है और उस वस्तु के असली रूप का दर्शन हो जाता है।

समाधि— समाधि राजयोग साधना की अन्तिम सीढ़ी है। इस अवस्था में मन ध्येय विषय में इतना लीन हो जाता है कि वह उसमें तन्मय हो जाता है और उसे अपना कुछ ज्ञान नहीं रहता। ध्यान की अवस्था में ध्येय विषय और ध्यान की क्रिया, ये दोनों पृथक् प्रतीत होते हैं। परन्तु समाधि की अवस्था में ध्यान की क्रिया का पृथक् अनुभव नहीं होता। वह ध्येय विषय में डूबकर अपने को खो बैठती है।



11. योग और उसका उद्‌देश्य

सत्य के अनुकूल जीवन बिताना ही हमारी साधना है। उस सत्य को ठीक-ठीक सचेत होकर जानना और अपने जीवन में उसे सिद्ध करना ही योग कहलाता है। हमें अपने शरीर, प्राण और मन को इस तरह बदल देना और नये साँचे में ढाल देना है, जिससे वे नमनीय हो जाएँ। परन्तु शरीर को यह विश्वास ही नहीं होता कि जिन नियमों को वह जानता है और जिनका वह अनुसरण करता आ रहा है वे कभी बदले या हटाये भी जा सकते हैं। यही बात प्राण और मन के विषय में भी कही जा सकती है। सबसे आवश्यक बात यह है कि हमारी सत्ता के प्रत्येक भाग में अपनी दिव्य संभावनाओं के प्रति दृढ़ विश्वास उत्पन्न हो। यह विश्वास जमकर बैठ जाय कि हमारी समूची प्रकृति पूर्ण रूप से परिवर्तित और रूपान्तरित हो सकती है। इसे होना ही होगा। इसके बाद अपने अन्दर से 'असंभव' सम्बन्धी सभी प्रकार के संस्कारों को दूर भगाने के बाद, हमें अपनी सत्ता के सभी अंगों को प्रभु की ओर खोले रखने का प्रयत्न करना चाहिए।

योग का अर्थ केवल प्रभु का चिंतन ही नहीं है और न उनके चरणों में सिर टेकना ही है। अवश्य ही ये चीजें बहुत सहायता करती हैं और इन्हीं के द्वारा हम अपनी साधना आरम्भ करते हैं। परन्तु केवल यही चीजें हमें बहुत दूर तक नहीं ले जा सकती हैं। हमें अपनी सारी सत्ता को उसकी जीवित, जागृत उपस्थिति से भर देना चाहिए। हमें उसके साथ निरंतर सक्रिय और सर्वांगीण एकत्व बनाये रखते हुए उसी में निवास करना चाहिये और यही योग शब्द का वास्तविक अर्थ है। उसके बाद हमें यह जानने का प्रयास करना चाहिए कि इस संसार में उसकी क्या इच्छा है और उसमें सदा उसकी ही प्रेरणा तथा पथ-प्रदर्शन प्राप्त करने की चेष्टा करते हुए हमें केवल उसी विशुद्ध आनन्द में डूबे रहना चाहिए, जो उसके प्रति सच्ची प्रीति और भक्ति रखने से उत्पन्न होता है।

इस तरह भक्त के साथ भगवान के, अहं के साथ ईश्वर के, जीव के साथ शिव के, आत्मा के साथ परमात्मा के, यहाँ तक कि बौद्धमत का अनुसरण कर

संस्कार के साथ शून्य के संयोग को हम योग कह सकते हैं। मनुष्य के अन्दर जो भक्ति मनुष्य को पशुभाव और मनुष्य भाव से ऊपर उठाकर देवभाव में स्थापित करना चाहती है, उसी का नाम योगशक्ति है और इस उद्देश्य-सिद्धि के लिए जिस मार्ग पर चलना होता है, जिस प्रकार से जीवन को गढ़ना और चलाना होता है, उसी का नाम योग साधना है।

हमारा जीवन जैसा कि यह आज संगठित है, ढेर सारी समस्याओं और आवश्यकताओं से लदा हुआ है और हम प्राय: प्रतिक्षण अपने को दौड़-धूप में त्रस्त पाते हैं। प्रसिद्ध अँग्रेजी कवि विलियम वड्र्सवर्थ क्या अपनी इस शिकायत में सच्चा नहीं है कि Getting and spending we lay waste our powers. ऐसे संसार में शान्ति की बड़ी भारी आवश्यकता स्वाभाविक ही है। जो व्यक्ति केवल सोने-पीने और 'साधारण सुखी जीवन' से सन्तुष्ट नहीं होते उन्हें तो सदा ही उसकी अनिवार्य आवश्यकता अनुभव होती है। वे अधिक विस्तृत, सुखी और वस्तुत: पूर्ण जीवन की याचना करते हैं। इसी आवश्यकता से योग का उदय हुआ और इसे ही वे पूरा करना चाहते हैं।

योग का जिज्ञासु वह है जिसने अपने वर्त्तमान जीवन की अपूर्णताओं का तीव्र अनुभव किया है तथा जीवन के सच्चे अर्थ को खोजने तथा इसकी बृहत्तर संभावनाओं को सिद्ध करने के लिये एकनिष्ठ है। आजकल बहुत से लोग, विशेषत: शिक्षित वर्गों के, अपने जीवन की अपूर्णता महसूस करते हैं और थोड़े-से चिंतन से वे अपनी इस कमी को भलीभाँति पहचान भी जायेंगे। व्यक्ति उस अपूर्णता के लिये क्या प्रयत्न करे? आधुनिक शिक्षा से उसने नयी आदतें और विचार-प्रणालियाँ सीखी हैं। परिणामत: प्राचीन आदरणीय सुसंस्कृत वस्तुएँ उसके लिये केवल इस कारण निरर्थक हो जाती हैं, क्योंकि वह उन्हें समझ नहीं पाता। अतएव वर्त्तमान भारतीय विद्वान् का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह प्राचीन विद्या को आधुनिक बुद्धि के लिये सुलभ बनाये।

योग साधना के दो लक्ष्य हमारे सामने हैं—कैवल्य मुक्ति और जीवन मुक्ति। मायावादियों की तरह यदि हम जगत् को केवल मरीचिका या दु:स्वप्न मात्र मानें अथवा बौद्धों की तरह यदि मनुष्य और सृष्टि को क्षणिक वेदनाओं की समष्टि के रूप में स्वीकार करें तो फिर हम जगत् में रहने की इच्छा ही क्यों करेंगे? किसी प्रकार इस दु:स्वप्न को भंग कर डालने में ही हमारा नि:श्रेयस् है। दीपशिखा की भाँति किसी प्रकार बुझ जाने में ही परम पुरुषार्थ है। जीवन

को मिटा कर जगत् से सर्वथा संपर्कशून्य कर उससे परे 'किसी कुछ' अथवा 'कुछ नहीं' के अन्दर जाकर घुलमिल जाना ही कैवल्यमुक्ति है। यही यदि हमारी साधना का लक्ष्य हो तो फिर इन सब भिन्न-भिन्न साधन मार्गों की परस्पर तुलना करने या उनके गुण-दोषों का विचार करने या उनका समन्वय करने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं रह जाती। ऐसी अवस्था में चाहे किसी भी मार्ग को क्यों न पसन्द करें, बस एक बार पसन्द करके फिर सोचे हुए उसी मार्ग पर बराबर चलते रहने से ही अभीष्ट सिद्धि हो जायेगी।

परन्तु जगत् का अर्थ हमारे लिये कुछ और हो, जगत् मोह या दु:स्वप्न नहीं बल्कि आनन्दमय हो, जगत् को ही यदि हम नि:श्रेयस् का आधार मानते हों, जीवन को अस्वीकार नहीं वरन् उसका आलिंगन करके ही यदि हम मुक्त व सिद्ध होना चाहते हों तो फिर योग साधना की एक पूर्ण रूप से नवीन मूर्ति हमारे नेत्रों के सामने प्रस्फुरित हो उठेगी। मनुष्य रूपी मन्दिर के देवता केवल मन्दिर के शिखर पर ही अधिष्ठित हों ऐसी बात नहीं है। शरीर केवल शरीर के परे जाने के लिये ही नहीं है; मन केवल मन के परे जाने के लिये ही नहीं है; ज्ञान, प्रेम और कर्म केवल ज्ञान, प्रेम और कर्म के परे जाने के लिये ही नहीं है, व्यक्तित्व केवल व्यक्ति को विनष्ट करने के लिये नहीं है। देह, मन और अध्यात्मवृत्ति भगवान को पाने के केवल मार्ग या उपाय मात्र ही नहीं हैं। जब हम यह समझ सकेंगे कि केवल शरीर के पीछे ही भगवान नहीं है, मन भी भगवान है, केवल अध्यात्मसत्ता के परे ही भगवान नहीं है, अध्यात्मसत्ता भी भगवान है, तभी हम एक साथ सब प्रकार के साधन मार्गों की आवश्यकता को हृदयंगम कर सकेंगे। शरीर, मन और आत्मा तीनों ही लहरों में हम प्रतिष्ठित रहेंगे। मनुष्य की समग्र सत्ता के अन्दर हम भगवान को जगावेंगे। अपने किसी एक अंग मात्र से ही नहीं, बल्कि हमारे जितने अंग हैं उन सबके द्वारा हम भगवान का आलिंगन करेंगे।

यही हमारे योग का लक्ष्य हो तो कोई एक विशिष्ट मार्ग ही हमारे लिये पर्याप्त न होगा। तब हम चाहेंगे अखण्ड पूर्ण योग, जिसके द्वारा हमारी सभी जीवन धाराओं में भगवान लबालब भर जाएँ, हमारे सम्पूर्ण क्षेत्र को फल-फूलों और पेड़-पौधों से समृद्ध कर दें। इतना ही नहीं हम केवल व्यक्तिगत सिद्धि नहीं चाहते, हम चाहते हैं विश्व मानव की सिद्धि। योग का वास्तविक लक्ष्य है जीवन की पूर्ण समस्वरता या संतुलन। स्वत: आन्तरिक वासना का नितान्त रूपान्तर ही योग का ध्येय है। कुछ एक भावनाओं और बहुत-से

अर्धदमित आवेगों के संघर्षमय पथप्रदर्शन के अधीन काम करने वाले साधारण सामाजिक मनुष्य के विषम विभक्त जीवन के बजाय योग उस अखण्ड और सर्वांगीण जीवन को अपना लक्ष्य बनाता है, जो सत्य के प्रति प्रेम की अथवा ईश्वर-साक्षात्कार या आत्म-साक्षात्कार या पूर्ण जीवन के प्रति प्रेम की एक प्रधान भावना से परिचालित हो और उसमें अपने अन्दर की किसी असंतुष्ट वासना की बुड़बुड़ाहट तक न हो।

इस प्रकार अपनी दृढ़ता प्रकट करनेवाली और स्वार्थतत्पर अंधप्रेरणाओं को एक प्रधान सर्वनियामिका भावना की सर्वांगीण भक्ति में रूपान्तरित करना योग की वास्तविक समस्या और क्रिया है। परन्तु क्या योग का यह महान् ध्येय प्राप्य भी है? मनुष्य पशुवत् जीवन शुरू करता है तो क्या उसके लिये अंत तक वैसा ही रहना आवश्यक है? पशु अपने जीवन से सन्तुष्ट है। अन्धप्रेरणा उसके जीवन का सर्वोपरि नियम है और उससे उसके सब काम पूरी तरह से चल जाते हैं। परन्तु मनुष्य का ही यह भाग्य या विशेषाधिकार है कि वह आगे और पीछे देखे, और पश्चात्तापों, आन्तरिक संघर्षों और निग्रहों का कष्ट झेले। यदि वह उनसे ऊँचा उठ सके तो वह निश्चित ही अतिमानव हो जाता है। परन्तु क्या अतिमानव अवस्था मनुष्य के लिये सम्भव है? कम-से-कम योग का उत्तर तो है 'हाँ' और यह साहसी, वीर आत्माओं को चुनौती देने के लिये काफी है कि वे साधारण लाभ के लिये अपने जीवन के साथ परीक्षण करें।















12. सफल जीवन की आवश्यक शर्तें

सत्य का सदा अनुगमन, अनेक यातनाओं और कष्टों के पश्चात् विवेक और आनन्द ग्रहण करना, अन्त में पराजित और बहिष्कृत न होना, बल्कि प्रत्येक आन्तरिक शत्रु पर विजय प्राप्त करना—यही मनुष्य का दिव्य लक्ष्य है।

जीवन के सन्ताप गहन और असीम हैं, परन्तु उन्हें सीमित किया जा सकता है। मानव प्रकृति की वासनाएँ और मनोवेग अनियंत्रित दशा में हैं, किन्तु उन्हें विवेक के द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। जीवन की कठिनाइयाँ बीहड़ हैं और मानव का मनोवांछित लक्ष्य अनिश्चित। प्रत्येक व्यक्ति अतिश्रम से परिक्लान्त हो रहा है। सफल और दिव्य जीवन प्राप्त करने के लिए सर्वनियंता ईश्वर पर विश्वास रखना सबसे बड़ी शर्त है।

विश्वास

इसी छोटे-से शब्द पर विश्व टिका है और मनुष्य का सारा कार्य-कलाप चल रहा है। सर्वप्रथम, मनुष्य में विश्वास अवश्य होना चाहिए और पूर्ण सिद्धि तथा ज्ञान प्राप्त होने तक विश्वास पर अटल रहना चाहिए। विश्वास वह मंजुल-ऊषा है जो पूर्ण और प्रस्फुटित ज्ञान के पूर्व उदित होती है। इसके बिना मनुष्य न अपने में शक्ति ला सकता है और न हृदय में दृढ़ता ही। विश्वास-परायण व्यक्ति अनेक आपदाओं के सामने भी उद्विग्न नहीं होता। उसका मार्ग कितना ही दुरूह क्यों न हो, वह चलता ही रहता है। संसार में अधिकांश व्यक्ति ऐसे हैं, जो जीवन में सफल नहीं हो पाते और अविवेकपूर्वक उन अन्यायों की चर्चा करते हैं जो दूसरों के द्वारा उन पर किए गए रहते हैं। उनका यही विश्वास रहता है कि वे भी सफल एवं समृद्धिशाली हो सकते थे यदि अन्य व्यक्तियों ने उनके साथ विश्वासघात और दुष्टता नहीं की होती। अनेक व्यक्ति यही कहते हैं कि लोगों ने मुझे धोखा दिया, छल किया और ऐसे व्यक्ति केवल अपने में ही विश्वासपात्रता, ईमानदारी और सरलता पाते हैं। इन व्यक्तियों की असफलता का सबसे बड़ा कारण

यह होता है कि वे आत्मप्रशंसा में लीन होकर अपने गुणों और दोषों को परख नहीं पाते।

जो व्यक्ति आध्यात्मिक और सफल जीवन व्यतीत करना चाहते हैं उन्हें सबसे पहले अपने मस्तिष्क के उन भावों को हटा देना चाहिए, जो विशुद्ध बातों का निषेध करने तथा पाप एवं मलिनता को प्रधानता देते हैं। निर्मल और विवेकपूर्ण मस्तिष्क से यदि आप जीवन पर दृष्टि डालें तो जीवन की समदर्शिता को आप देख व समझ सकेंगे। जिस व्यक्ति ने पुण्य के प्रभुत्व पर विश्वास जमा लिया है उसे कोई दुर्घटना या यातना सता नहीं सकती। वह सभी कठिनाइयों को अपूर्व साहस के साथ पार कर सकता है। किन्तु जब वह असफल होता है तो उसका परिणाम यह होगा कि वह अधिक ऊँचे आदर्शों को सामने रखेगा और उच्चतर सफलताओं का भागी होगा।

साहस

आत्म-विजय प्राप्त करने में प्रबलतर और दिव्यतर साहस की आवश्यकता होती है। यह दिव्यतर साहस विश्वास का अनुगामी होता है। ईश्वर, वेद, शास्त्र और सृष्टि के सम्बन्ध में श्रद्धा केवल ऊपरी मत है। जो वस्तु यथार्थ जीवन के तल तक नहीं पहुँच पाती उसमें विश्वास उत्पन्न करने की शक्ति नहीं है। प्राय: ऐसा देखा जाता है कि जो लोग ईश्वर, अवतार, वेद, शास्त्र एवं धार्मिक ग्रन्थों में दृढ़ता से आस्था रखते हैं, उनमें विश्वास का अधिक अभाव रहता है। जहाँ विश्वास है वहाँ साहस, धैर्य, दृढ़ता और शक्ति है। मनुष्य की विचारधारा पदार्थों की यथार्थता से बहुत कम सम्बन्ध रखती है, क्योंकि वह पानी के बुलबुलों की भाँति होती है। जिस व्यक्ति में दिव्य-आचार नहीं है वह भले ही ईश्वर उपासक और घोर आस्तिक क्यों न हो, उसे हम घोर अधार्मिक ही कहेंगे। इसके विपरीत जो दिव्य-आचार के होते हैं, वे धर्म-प्रदर्शन नहीं करते।

विश्वास में अपूर्व साहस होना है जिससे जीवन की कठिनाइयों और क्षुद्र-स्वार्थजनित निराशाओं को दबाकर मनुष्य विजय पथ पर अग्रसर हो सके। विश्वास की ज्योति मन्द अवश्य है पर सन्देह के कुहासे और नैराश्य की निबिड़-निशा में, कंटीले और संकीर्ण मार्ग पर पथ-प्रदर्शन के लिये इसकी ज्योति अवश्य यथेष्ट है।

आत्म-निर्भरता

सफल जीवन के लिए आत्म-निर्भरता की आवश्यकता है। हमें अपनी अन्तरात्मा, मस्तिष्क और स्वयं का सम्राट् होना चाहिए। मनुष्य तभी अशक्त होता है जब वह अपनी निम्न वृत्तियों के हाथ में स्वयं को छोड़ देता है। हमें अपना मार्ग स्वयं ढूंढकर उस पर दृढ़ और अटल रहकर चलना चाहिए। दूसरों के अनधिकार हस्तक्षेप से बचना चाहिए। अन्तरात्मा के आदेश का सच्चाई के साथ पालन करना चाहिए। एक डरपोक और कमजोर व्यक्ति हमेशा भयभीत रहता है। ऐसा व्यक्ति जो दूसरों के हँसने से डरता है कभी पूर्ण मनुष्य नहीं कहा जा सकता। जो स्वावलम्बी और आत्म-निर्भर होते हैं वे दूसरों के उपहास की परवाह नहीं करते। अपनी तबियत से काम करते हुए दूसरों के लिए आदर्श बनते हैं। इमर्सन का कथन है—अपने ऊपर विश्वास करो, प्रत्येक दिल स्वावलम्बन के लिए स्पन्दन करता है। आज हम सफलता के लिए बाहरी साधनों पर अधिक विश्वास करते हैं और इसीलिए हम असफल रहते हैं। अपनी शक्ति पर विश्वास करने वाला ही अंत में सफल होता है।

संसार में सभी व्यक्तियों के विचार एक जैसे नहीं होते। जो व्यक्ति शक्तिशाली और आत्म-निर्भर है वह मेरे या दूसरे के मत का बलपूर्वक अनुसरण क्यों करेगा? यदि हमारी बात उसकी बुद्धि और अन्तरात्मा को छू दे तो वह स्वयं हमारे साथ कन्धा मिलाकर काम करेगा। दूसरों की स्वतन्त्र इच्छाशक्ति का हमें आदर करना चाहिए। यदि हमें शक्तिशाली बनना हो तो हमें विशालहृदय बनना होगा। यातनाओं पर विजय प्राप्त करने के लिए प्रकृति की क्षुद्रता से ऊपर उठना चाहिए।

ध्येय

जीवन में ध्येय के बिना सफलता नहीं मिलती। मनुष्य को अपने मन में एक सच्चा ध्येय अवश्य रखना चाहिए और उसे पूर्ण करने में लग जाना चाहिए। ध्येय को ही अपने विचारों का केन्द्र बना लेना चाहिए। यदि बराबर असफलता ही मिले तो भी बराबर आगे बढ़ते जाना चाहिए। उससे चरित्र-बल बढ़ेगा और चरित्र-बल से ही सफलता व शान्ति प्राप्त होगी।

जीवन में असफलता आती है तो अपनी दुर्बलताओं और मस्तिष्क के पतन पर आदमी रोता है। वह यह नहीं सोचता कि विजय का कार्य कितना महान् और मार्ग कितना प्रशस्त है। दुर्बलताओं और स्वार्थपरता को काट

फेंकिए। अस्वाभाविक अभिलाषाओं और विकृत आत्मानुराग को प्रश्रय न दीजिये। बल्कि सभी को दृढ़ता के साथ उखाड़ फेंकिए। जीवन में जो कुछ भी सफलता और असफलता मिलती है, वह केवल हमारे विचारों का फल है। उन्नति और विजय तभी हो सकती है जब हमारे विचार महान् हों। जो अपने विचारों को जितना ऊँचा उठा लेगा उतना ही वह साहसी बन जाएगा और स्थायी सफलता व सुख पाएगा।

शान्ति

सफल जीवन के लिए शान्ति का होना आवश्यक है। सब सुख-शान्ति ढूँढ रहे हैं पर वहाँ, जहाँ वह है ही नहीं। सागर के वक्षस्थल पर उठती हुई लहरों को देख हम सोचते हैं—कितना चंचल है यह सागर! पर सागर के अन्तरतम में प्रवेश करके देखें तो हमें दिखेगा कि इन तरंगों के नीचे समुद्र का गर्भ बिल्कुल शान्त है। इसी प्रकार जब हम अपने मन को टटोलते हैं तो दिखता है कि यहाँ तो विषयों की आँधी चल रही है। लेकिन मन की गहराई में जाएँ तो अनुभव होता है कि वहाँ अखण्ड शान्ति छाई हुई है। शान्ति तो एकमात्र प्रभु में है। यदि हमारी बुद्धि, मन और शरीर प्रभु को समर्पित हो जाएँ तो फिर अशान्ति सदा के लिए मिट जाय।

त्याग

रोटी, कपड़ा, मकान, धन, विद्या आदि वस्तुएँ प्राप्त हो जाने से हम सुखी नहीं होंगे। जिनके पास ये सारे पदार्थ प्रचुर मात्रा में हैं क्या वे वास्तव में सुखी हैं? क्या उन्हें शान्ति है? कदापि नहीं। वस्तुओं की लालसा ही सम्पूर्ण दुःख और अशान्ति का कारण है। लालसा बढ़ाने का अर्थ यही है कि अपने में कमी का अनुभव करना और जब तक अपने में कमी का अनुभव होगा, तब तक सुख और शान्ति हो ही कैसे सकती है? प्रत्युत दुःख ही बढ़ेगा। शान्ति तो सन्तोष और त्याग में है। जहाँ देने का भाव हो, लेने का नहीं, वहीं त्याग और सन्तोष है।

सच्ची चाह

संसार के सुखोपभोग का वही त्याग करता है जिसमें अशान्ति से मुक्त होने एवं परम शान्ति प्राप्त करने की चाह प्रबल होती है। जहाँ सच्ची चाह नहीं,

वहीं त्याग करना कठिन है। जिसे दुःखों से छूट कर सुख और शान्ति प्राप्त करनी है उसे दोषों का त्याग करना ही होगा। लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध आदि दोष हैं जिनके कारण मनुष्य को बड़े-बड़े दुःख भोगने पड़ते हैं। शान्ति प्राप्ति के लिए कामनाओं का त्याग करना होगा। प्रभु ने जो कुछ दिया है, उसे प्रसाद समझ कर सन्तोष से रहना ही कामनाओं का त्याग है।

अशान्ति के कारण

हमारी अशान्ति का सबसे पहला कारण है प्रभु की सत्ता में विश्वास का न होना। प्रभु ने हमें जो कुछ भी दिया है उसमें हमारा उत्थान होना निश्चित है। पर अपने मन के प्रतिकूल हम किसी भी विधान को स्वीकार नहीं करना चाहते। मनचाहा होने या मिलने पर तो हम आसानी से कह देते हैं कि यह ईश्वर की कृपा है, लेकिन मनचाहा न मिलने पर हमारा रवैया ही बदल जाता है। उस समय ईश्वर की कृपा की अनुभूति क्यों नहीं होती?

अशान्ति का दूसरा कारण हमारा स्वार्थ है। दूसरे को चाहे कुछ भी हो जाए पर हमारा भला होना चाहिए। ऐसी भावना रखनेवाले के मन में सुख और शान्ति की छाया भी नहीं आ सकती। अशान्ति का तीसरा कारण प्रिय वस्तुओं के छिन जाने का तथा अभिलषित वस्तुओं के न मिलने का भय है। यदि इस भय का त्याग कर हम यह सोचें कि निरन्तर देते रहना ही प्रभु का स्वभाव है, नित्य नव-आनन्द का सृजन करना ही उनका काम है तो अशान्ति हमारे पास आ नहीं सकती। अशान्ति का चौथा कारण है हमारा अहंभाव। कोई भी सुन्दर घटना घटने पर हमारा अहंभाव जाग उठता है। तुरन्त हम यह कह उठते हैं—'यदि मैं न रहता तो यह काम नहीं हो पाता।'

अपनी चेतना की गहराई में यदि हम उतरें तो वहीं पूर्ण शान्ति पायेंगे। बहिर्मुखी वृत्तियाँ हमें सुख, दुःख व अशान्ति की ओर ले जाती हैं, जबकि अन्तर्मुखी वृत्ति शान्ति की ओर। जो कुछ बीत चुका है उसे भूल जाएँ। भविष्य की चिन्ता न करें और संसार से तृप्ति की आशा न करें। बस यही शान्ति है।

स्वास्थ्य

जीवन की सफलता के लिए स्वस्थ रहना आवश्यक है। स्वास्थ्य से बढ़कर संसार में कोई सुख नहीं। बिना अच्छे स्वास्थ्य के जीने में आनन्द नहीं रह जाता। सच तो यह है कि स्वास्थ्य की समस्या आज केवल व्यक्ति या समाज

की न होकर पूरे राष्ट्र की ही समस्या बनी हुई है। औषधियाँ रोग निवारण में बड़ी सहायक तो हैं, लेकिन दूसरी ओर यह भी सच है कि औषधियाँ जितनी बढ़ती जा रही हैं रोग भी उतने अधिक बढ़ते जा रहे हैं। बहुत-से ऐसे जीर्ण रोग भी हैं जिन्हें दूर करने में औषधियाँ असफल रही हैं, जैसे दमा, गठिया, पेट की गैस इत्यादि। आज वैज्ञानिक युग में मानव मानसिक और शारीरिक, दोनों ही रोगों से पीड़ित है। हमें एक सरल और सुलभ नुस्खा चाहिए जिससे हमारे मन और शरीर की गाड़ी अच्छी दशा में चलती रहे, हमें दुरुस्त, सजग एवं सचेत रखे।

योगासन

स्वास्थ्य का सरल-सुलभ नुस्खा है योगासन। इसकी अपनी अलग उपयोगिता और विशेषता है। आसनों का अभ्यास निश्चय ही स्वास्थ्य की गारंटी दे सकता है। इसके लिए कुछ खर्च भी नहीं करना पड़ता। बहुत-से व्यक्ति ऐसे हैं जो निर्धन हैं, अपने रोगों का इलाज नहीं करा सकते। अत: आर्थिक समस्या का प्रश्न उठ खड़ा होता है। आसन करने में पैसों की आवश्यकता नहीं। अन्य प्रकार के व्यायाम तो प्राय: बलवर्धन के लिए किए जाते हैं किन्तु स्वास्थ्य सुधार एवं आरोग्य के लिए आसन ही उत्तम हैं। दण्ड-बैठक बलवर्धक है किन्तु वैज्ञानिक दृष्टि से स्वास्थ्यवर्धक नहीं। आसनों के अभ्यास से शरीर के स्नायु व पेशियाँ लचीली बनती हैं जिससे उनकी क्रियाशीलता बनी रहती है। मेरुदण्ड से निकले हुए अनैच्छिक तंत्रिका-तंत्र के स्नायुओं का भी व्यायाम हो जाता है। संसार के किसी भी दूसरे व्यायाम में अनैच्छिक पेशियों और स्नायुओं को सक्रिय करने की विधि नहीं है। अत: शारीरिक और मानसिक आरोग्य के लिए योगासनों का अभ्यास बेजोड़ उपाय है।

संक्षेप में हम यही कहेंगे कि जीवन की सफलता विश्वास, साहस, आत्म-निर्भरता, सच्चे ध्येय, त्याग, सच्ची चाह और अच्छे स्वास्थ्य पर निर्भर करती है। ये ही सफलता की शर्त्तें हैं।



13. विचारों का स्वास्थ्य पर प्रभाव

आज मानव समाज में हजारों स्वास्थ्य सम्बन्धी संस्थायें हैं जिससे यह प्रकट होता है कि वर्तमान मानव समाज रोगग्रस्त है। जिस प्रकार मनुष्य को मानसिक शान्ति प्रदान करने के लिये सहस्त्रों धार्मिक संस्थाएँ खुली हैं फिर भी मनुष्य की मानसिक अशान्ति बढ़ती ही जाती है, उसी प्रकार अस्पतालों की वृद्धि रोगों की वृद्धि ही कर रही है। जब तक मनुष्य का मन वश में नहीं है तब तक वह रोग्रस्त और दुःखी रहेगा ही। धार्मिक संस्थाएँ और अस्पताल बाह्य उपचार हैं। ये मनुष्य को शान्ति देने के बाह्य साधन मात्र हैं। अपने रोगों का निवारण करने के लिये मनुष्य नाना प्रकार की औषधियाँ व उपचार ग्रहण करते हैं पर यथेष्ट लाभ हमें उस समय तक नहीं हो सकता जब तक हमारा मन हमारे वश में नहीं है।

रोग व दर्द पाप और दुःख के समान बाह्य उपचारों से नहीं जा सकते। उनका निदान मस्तिष्क में है। यह ठीक है कि प्राकृतिक अवस्थाओं का भी रोगों पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है, पर गन्दगी का मुख्य कारण मन है। आज का मानव नाना प्रकार की इच्छाओं से अशान्त रहता है। यही इच्छायें आगे चलकर रोग का कारण बन जाती हैं।

विलासिता के पदार्थों की संख्या संसार में बढ़ती जा रही है। मनुष्य उन्हें पाने के लिये भरसक प्रयत्न करता है। एक के बाद दूसरी, दूसरी के बाद तीसरी, फिर तीसरी के बाद चौथी इच्छा उत्पन्न होती जाती है। इच्छाओं की तारतम्यता रहती है। इसे हम मृगतृष्णा ही कह सकते हैं। इच्छा से ही दुःख की उत्पत्ति होती है। इच्छा की पूर्ति न होने पर मनुष्य दुःखी और अशान्त हो जाता है। वह अपना जीवन चिन्ताग्रस्त होकर व्यतीत करने लगता है। न भरपेट भोजन करता है, न संतोष की निद्रा लेता है। मानसिक इच्छायें, काम और क्रोध का रूप धारण करती हैं और इन्हीं से रोगग्रस्त होकर मनुष्य संसार से चल बसता है।

आज के मनुष्य का जीवन पशुओं से भी गिरा हुआ है। पशु भोजन पा जाने पर शान्त होकर सोता है, परन्तु मनुष्य इच्छाओं के अधीन होकर अशान्त

ही रहता है। जब मनुष्य स्वार्थपरता को त्याग कर सेवा भाव ग्रहण करेगा, उस समय वह अपने पड़ोसी के आनन्द को बढ़ावेगा और उसी समय मनुष्य देवरूप धारण कर मनुष्य समाज में सुख की वृद्धि करेगा। शरीर मन का प्रतिबिम्ब है। शरीर को मन की आज्ञा माननी पड़ती है। प्रबल मन वाले मनुष्य अपनी शारीरिक दुर्बलता की परवाह नहीं करते। प्रबल मानसिक शक्ति द्वारा मनुष्य की सम्पूर्ण अस्वस्थता दूर हो जाती है। मानसिक कुविचार शारीरिक अस्वस्थता की अपेक्षा अधिक दु:खदायी होता है।

स्वयं को रोगी समझना तथा अपने शरीर और भोजन की अधिक चिन्ता करना, यह सब मनुष्य को त्याग देना चाहिये। 'अमुक भोजन स्वास्थ्यप्रद है, अमुक स्वास्थ्यप्रद नहीं है'—ऐसा सोचने वाला मनुष्य मानसिक रोग से ग्रस्त है। भोजन की व्यवस्था शरीर को दृढ़ बनाने के लिये है, उसे नष्ट करने के लिये नहीं। यह विचार भ्रामक है कि सादे भोजन अथवा प्राकृतिक भोजन से हमें हानि पहुँचेगी। मनुष्य को अपने अल्प दु:खों व तुच्छ कष्टों को अधिक महत्त्व नहीं देना चाहिये। जर-सा सिर में दर्द हुआ कि डॉक्टर के यहाँ दौड़ गए। इस प्रकार की क्रियायें हमारे चरित्र की दुर्बलता प्रकट करती हैं। सुख और स्वास्थ्य के विषय में मनुष्य को आशान्वित होना चाहिये। आशावादी होने से प्रसन्नता प्राप्त होगी और सुख में वृद्धि होगी।

नैतिक सिद्धान्तों से स्वास्थ्य अच्छा बनता है और सुख मिलता है। वे हमारे चरित्र के सच्चे निर्माता हैं। वे ही मनुष्य जीवन की प्रत्येक व्यवस्था को भली-भाँति सुलझाने वाले होते हैं। जिन विचारों में ईर्ष्या, द्वेष, निराशा आदि का भाव होता है वे शरीर को अस्वस्थ और नीरस बना देते हैं। हमारे मुख पर कठोरता अपने आप नहीं आ जाती, बल्कि कटु विचारों से आती है। चेहरे पर जो झुर्रियाँ पड़ जाती हैं, वे मूढ़ता, विषय-वासना और दम्भ से पड़ती हैं।

जब तक मकान में धूप और हवा न आने देंगे तब तक वह स्वच्छ और सुन्दर नहीं रह सकता। इसी प्रकार अपने मस्तिष्क में आनन्ददायक और हितकारक भाव स्वतंत्रतापूर्वक आने देंगे तो अपने शरीर को पुष्ट, मुख को सुन्दर और मन को आनन्दमय बना सकते हैं। शरीर के रोगों को दूर करने के लिये प्रसन्नचित्त रहने से उत्तम और कोई उपाय नहीं है। दु:ख और चिन्ता को दूर करने के लिये दया भाव से अधिक शक्ति किसी में नहीं। शरीर से अधिक अपने चरित्र को संभालने का प्रयत्न मनुष्य को करना चाहिये, क्योंकि चरित्र निर्माण से ही स्थायी सुख और आनन्द की उपलब्धि हो सकती है।

यह पुस्तक

बच्चों की यह पुस्तक पूज्य स्वामी सत्यानन्द जी की सद्भावना है; अत: उनके जन्मदिन के शुभ अवसर पर उन्हें ही *त्वदीय वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये* के रूप में समर्पित की जाती है।

14 वर्ष से कम उम्र के बच्चे-बच्चियों के संस्कार सुदृढ़ बनें, इसलिए परमहंस स्वामी सत्यानन्द जी ने विद्यालय में संध्या 5 से 7 के बीच बच्चों के लिए एक विशेष वर्ग निश्चित किया है। यह पुस्तक स्वामीजी द्वारा स्वीकृत उन विषयों का संकलन है जिनकी शिक्षा देवी सुभद्रा द्वारा बच्चों को यहाँ दी जाती है।

यह प्रथम संस्करण योग विद्यालय के पूर्व साधक श्री वासुदेव प्रसाद जी फिटकिरीवाला, मुंगेर की उदार श्रद्धा एवं सहायता से प्रकाशित किया जा रहा है।

बच्चे यहाँ की शिक्षा और इस पुस्तक को प्राप्त कर समाज के अच्छे सदस्य बनें, यही कामना है। ईश्वर की कृपा और आशीष तुम सबों के लिए।

हरि ॐ तत् सत्
और सब गप् शप्

बिहार योग विद्यालय,
मुंगेर

प्रारंभिक योग प्रकाश

(योग की पहली पुस्तक)

गायत्री मंत्र

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो
देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

यह गायत्री मंत्र है। प्रातःकाल शान्त बैठ कर इसका ग्यारह बार पाठ करो।

देवी पाठ

ॐ दुर्गा दुर्गार्तिशमनी दुर्गापद्विनिवारिणी।
दुर्गमच्छेदिनी दुर्गसाधिनी दुर्गनाशिनी॥
दुर्गतोद्धारिणी दुर्गनिहन्त्री दुर्गमापहा।
दुर्गमज्ञानदा दुर्ग दैत्यलोकदवानला॥
दुर्गमा दुर्गमालोका दुर्गमात्मस्वरूपिणी।
दुर्गमार्गप्रदा दुर्गमविद्या दुर्गमाश्रिता॥
दुर्गमज्ञानसंस्थाना दुर्गमध्यानभासिनी।
दुर्गमोहा दुर्गमगा दुर्गमार्थस्वरूपिणी॥
दुर्गमासुरसंहन्त्री दुर्गमायुधधारिणी।
दुर्गमांगी दुर्गमता दुर्गम्या दुर्गमेश्वरी॥
दुर्गभीमा दुर्गभामा दुर्गभा दुर्गदारिणी।

देवी के इस पाठ को नहा-धोकर शुद्ध मन से तीन बार पढ़ो। समझो कि माँ दुर्गा तुम्हारे सामने खड़ी होकर तुमसे यह पाठ सुन रही है।

सूर्य नमस्कार

यह एक संकलित आसन है जिसमें 12 मुद्रायें होती हैं। प्रत्येक मुद्रा के अन्त में एक मंत्र जुड़ा रहता है। मंत्र उच्चारण तथा मुद्रायें साथ-साथ चलाई जाती हैं। पहले इन मंत्रों को याद करो।

1. ॐ मित्राय नम:
2. ॐ रवये नम:
3. ॐ सूर्याय नम:
4. ॐ भानवे नम:
5. ॐ खगाय नम:
6. ॐ पूष्णे नम:
7. ॐ हिरण्यगर्भाय नम:
8. ॐ मरीचये नम:
9. ॐ आदित्याय नम:
10. ॐ सवित्रे नम:
11. ॐ अर्काय नम:
12. ॐ भास्कराय नम:

इन मंत्रों को याद करने के बाद सूर्य नमस्कार की मुद्राओं को करने के लिये तैयार हो जाओ।

1. सूर्य के सामने खड़े हो जाओ। दोनों हाथ जोड़ कर छाती से सटाये रहो, प्रणाम करने की मुद्रा में। मंत्र का मानसिक उच्चारण करो– ॐ मित्राय नम:।
2. दोनों हाथ ऊपर उठाओ कंधे के सीध में। तलहत्थी सूर्य के सामने हो। थोड़ा-सा पीछे झुको कमर से, जिससे की छाती तनी रहे और सूर्य की किरणें सीधे छाती पर पड़ें। मंत्र का उच्चारण करो– ॐ रवये नम:।
3. दोनों हाथों को आगे की ओर करते हुए झुकाओ और भूमि स्पर्श करो। घुटने सीधे रखो। कमर से शरीर आगे की ओर झुका रहे। सिर भूमि की ओर। हाथ-पैर अगल-बगल सीध में रखो। कहो– ॐ सूर्याय नम:।
4. दोनों हथेलियों को जमीन पर रख दो, दाहिने पैर को पीछे ले जाओ। बायाँ घुटना मुड़ा रहे, पैर के बायें पंजे के बल बैठो। पेट और छाती को बायें घुटने से सटाये रखो। सिर को ऊपर उठाओ। कमर से पीठ को पीछे की ओर थोड़ा झुकाओ। कोशिश करो, बच्चे हो, तुम्हारी हड्डियाँ लचीली हैं। तुम इसे कर ही लोगे। आँखें बन्द रखो। मंत्र का उच्चारण करो– ॐ भानवे नम:।
5. हथेलियाँ उसी जगह रखो। बायें पैर को भी पीछे ले जाओ। जहाँ पर दाहिना पैर है, उसी के पास बायें पैर को ले जाओ। हथेलियों और पंजों

पर भार देते हुए पीठ, कमर और जांघ को ऊपर की ओर उठाये रखो। सिर दोनों हाथों के बीच में रहे। शरीर की आकृति पृथ्वी पर त्रिकोण बनाती हुई रहे। मंत्र बोलो– ॐ खगाय नमः।

6. हाथों और पैरों को उसी तरह रखते हुए शरीर को जमीन की ओर लाओ। केहुनियों को झुकाओ। ध्यान रखो शरीर के आठ अंग भूमि का स्पर्श करते रहें। तुम्हारी दोनों हथेलियाँ और दोनों पंजें पहले से ही जमीन से सटे हैं। ठुड्डी, छाती और दोनों घुटने जमीन से सटाओ। इस तरह दो हथेलियाँ, ठुड्डी, छाती, दो घुटने और दो पंजे–ये आठ भूमि के स्पर्श में हैं। बाकी भाग कमर, जांघ आदि जमीन से उठाए रखो। इसे ही साष्टांग प्रणाम कहते हैं। मंत्र कहो– ॐ पूष्णे नमः।
7. केहुनियों को सीधे करते हुए सिर और धड़ को ऊपर उठाओ। ऊपर देखो। शरीर कमर से कमान के समान थोड़ा पीछे की ओर झुका रहे। मंत्र कहो– ॐ हिरण्यगर्भाय नमः।
8. दोनों हथेलियों को वहीं रखते हुये शरीर को ऊपर उठाकर त्रिकोण जैसा बनाओ, ठीक उसी तरह जैसा पाँचवीं मुद्रा में बताया गया था। मंत्र कहो– ॐ मरीचये नमः।
9. बायें पैर को आगे बढ़ाओ, घुटना मोड़कर बायें पंजे पर बैठो। सिर और पीठ को पीछे झुकाओ कमर से, ठीक चौथी मुद्रा की तरह। मंत्र बोलो– ॐ आदित्याय नमः।
10. दाहिने पैर को बायें पैर के पास लाओ। पंजा भूमि का स्पर्श करता रहे। कमर से शरीर मुड़ी रहे। मंत्र कहो– ॐ सवित्रे नमः।
11. दोनों हाथों को उठाकर खड़े हो जाओ। हाथ और छाती को थोड़ा पीछे झुकाओ कमर से। मंत्र का उच्चारण करो– ॐ अर्काय नमः।
12. दोनों हाथों को जोड़ कर नमस्कार करो। बोलो– ॐ भास्कराय नमः।

ये ही सूर्य नमस्कार के बारह आसन हैं; इन्हें प्रातःकाल सूर्य के सामने करो। सूर्य नमस्कार की इन बारह क्रियाओं को अधिक-से-अधिक 6 बार करो।

आसन

सूर्य नमस्कार एक स्वतंत्र आसन था। इसमें कई आसन तो थे ही, पर इसके अतिरिक्त भी कुछ आसन हैं, जो तुम लोगों के लिये उपादेय हैं। इन्हें भी करो–

1. *पद्मासन*– कम्बल को चौपरत बिछा कर बैठो। दाहिने पैर को उठाकर बायीं जांघ पर रखो। इसी तरह बायें पैर को उठाकर दायीं जांघ पर रखो। सीधा बैठो, जिससे कि रीढ़ की हड्डी सीधी रहे। दोनों हाथों को दोनों घुटनों पर या गोद में रखो। आँखें बन्द करो। यह पद्मासन है।
2. *योग मुद्रा*– पद्मासन में ही बैठो। दोनों हाथों को पीछे ले जाकर एक हाथ से दूसरे हाथ की कलाई पकड़ लो। आँखें बन्द रखो। रीढ़ की हड्डी सीधी रहे। अब धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुये आगे झुको। माथा या ठुड्डी दोनों में से किसी एक को भूमि से सटाओ। थोड़ी देर तक श्वास रोके रहो। फिर श्वास लेते हुए ऊपर उठो और पहले वाली अवस्था में आ जाओ।
3. *लोलासन*– यह तुम्हारे लिए बहुत अच्छा आसन है। पद्मासन में बैठो। दोनों हाथों को दोनों बगल पृथ्वी पर रखो। दोनों हथेलियों पर शरीर का भार देकर समूचे शरीर को पृथ्वी से ऊपर उठा लो। चाहो तो झूले की तरह झूल भी सकते हो।
4. *कुक्कुटासन*– पद्मासन में ही बैठो। पैर और जांघों के बीच घुटने के पास जो त्रिकोण बनता है, उसके अन्दर से हाथों को निकाल कर तलहत्थियों को जमीन पर टिका लो। हथेलियों के सहारे लोलासन की तरह शरीर को जमीन से उठा लो। लोलासन में दोनों हथेलियाँ बगल में रहती हैं जबकि कुक्कुटासन में दोनों जाँघों के बीच।
5. *पर्वतासन*– पद्मासन लगाकर बैठो। अब दोनों घुटनों के सहारे पद्मासन की अवस्था में ही खड़े हो जाओ। दोनों हाथों को सिर से ऊपर उठा कर प्रणाम की तरह हाथों को जोड़ लो।
6. *वज्रासन*– दोनों पैरों को पीछे मोड़ कर घुटनों के बल बैठो। दोनों एड़ियों के बीच में शरीर का भार रहे। पाँवों का ऊपरी हिस्सा जमीन पर रहे। एड़ियों को पंजों के बल खड़ा मत रखो। दोनों हाथों को दोनों जाँघों पर रखो। रीढ़ की हड्डी सीधी रहे।

7. *शशांकासन*– वज्रासन में ही बैठे रहो। दोनों हाथों को सिर के ऊपर उठाओ। रीढ़ की हड्डी सीधी रहे। श्वास छोड़ते हुये धीरे-धीरे आगे झुको। सिर जमीन पर टिकाओ, फिर धीरे-धीरे श्वास खींचते हुए ऊपर उठो।
8. *सिंहासन*– वज्रासन में बैठ कर दोनों हथेलियाँ अपनी दोनों तरफ जमीन पर रख लो। पीठ आगे की ओर झुकाओ। गर्दन को थोड़ा ऊपर उठाकर जीभ बाहर निकालो। जितना भी निकाल सको, निकालो। यह अभ्यास सूर्य के सामने करो ताकि सूर्य की रोशनी गले में जाये। आँखों को बन्द रखो।
9. *आकर्ण धनुरासन*– दोनों पाँव फैला कर बैठो। दाहिने पैर के अंगूठे को बायें हाथ के अंगूठे, सामने और बीच की अंगुली से पकड़ो। अब दाहिने हाथ से बायें पैर का अंगूठा पकड़ उसे कान तक खींच लाओ। नजर सामने रखो। अंगूठे को कस कर खींचो और तीर की तरह छोड़ दो।इसी तरह दूसरे पैर से भी करो।
10. *सुखासन*– दोनों पाँवों के घुटने खड़े कर दाहिने पाँव को बायीं तरफ और बायें पाँव को दाहिनी तरफ रख कर बैठो। दोनों हाथों से दोनों घुटनों को बाँध लो। एक हाथ से दूसरे हाथ की कलाई पकड़ लो।

प्राणायाम

आसनों के बाद प्राणायाम का नम्बर आता है। प्राणायाम सीखने के लिये तैयार हो जाओ।

सीधे खड़े हो जाओ। दाहिना पैर पीछे रखो। इस दाहिने पैर को चंगुल पर खड़ा रखो। दाहिने पैर की एड़ी जमीन से उठी रहे। शरीर का भार बायें पैर पर रहे।

दोनों हाथों को सामने सीध में फैलाओ, जमीन से समानान्तर। हाथों को सटाओ नहीं, थोड़ा अलग रखो। शरीर को थोड़ा आगे की ओर झुकाओ।

अब हाथों को जमीन के समानान्तर ही दोनों बगल में फैलाओ। श्वास खींचो। शरीर को थोड़ा पीछे की ओर ले जाओ। छाती को ताने रखो। हाथों को जहाँ तक हो सके, दोनों ओर पीछे की ओर ले जाओ।

अब धीरे-धीरे श्वास को छोड़ते हुये दोनों हाथों को सामने की ओर ले जाओ।

इसी तरह दाहिने पैर को आगे और बायें पैर को पीछे की ओर कर इसी क्रिया को दुहराओ।

ध्यान रखो कि हाथ आगे से पीछे की ओर फैले तो श्वास खींचना और आगे की ओर समेटा जाय तो छोड़ना।

इस क्रिया को पैर बदल कर 6 बार दाहिने से और 6 बार बायें से करो। इस प्रकार दोनों पैरों को आगे-पीछे कर 12 बार प्राणायाम की क्रिया करनी है।

योगनिद्रा

आसन-प्राणायाम करने के बाद योगनिद्रा के लिये तैयार हो जाओ। शवासन में चित् लेट जाओ। आँखें बन्द रखो, शरीर ढीला छोड़ दो। हाथ-पैर शिथिल रहें, उसी तरह जिस तरह तुम निद्रा में सोते हो। हाथों को दोनों बगल शरीर के साथ रखो। हथेलियाँ उपर की ओर रहें। पर सोओ नहीं, ध्यान दो।

अब गिनती गिनो। एक, दो, तीन, चार... इसी तरह पचास तक गिनो। गिनती के शब्द का उच्चारण मुख से करो। ध्यान को गिनती के शब्द पर ही स्थिर रखो। मन में और कोई विचार नहीं लाओ।

पचास तक उच्चारण के साथ गिनने के बाद, उसके बाद के अंकों को मन में गिनो, उच्चारण मत करो। 51, 52, 53, 54... इस तरह सौ तक मन में गिनो। ध्यान गिनती पर ही रहे। मन में और कोई विचार मत लाओ।

हाँ, तो तुम्हारी गिनती 100 तक पूरी हो चुकी है। फिर गिनो। आँखें बन्द ही रखो। पर 100 के बाद की गिनती को बन्द आँखों से देखने की चेष्टा करो। 101, 102, 103, 104... बन्द आँखों से भौंहों के बीच मन से अंकों को बनाओ। अंक में इसे जिस तरह लिखा जाता है, उसी तरह मन से भौंहों के बीच इसे लिखो। इस प्रकार 101 से 150 तक के अंकों के रूप को देखने की कोशिश करो।

हाँ, तो तुमने देख भी लिया और 1 से 150 तक की गिनती भी पूरी कर ली। अब आँखें खोलो और उठ जाओ।

सदुपदेश

1. बड़ों की आज्ञा का पालन करो। इसलिये कि बड़ा ईश्वर के समान होता है।
2. सदैव सत्य बोलो।
3. अपने पाठ को सदैव याद करो। विद्या का अध्ययन मनुष्य को महान् बनाता है।
4. मस्तिष्क के लिये अध्ययन की उतनी ही आवश्यकता है जितनी शरीर को व्यायाम की। *—जोसेफ एडीसन*
5. मूर्खता ऐसी रात्रि के समान है जिसमें न चाँद हो न तारे। *—कन्फ्युशियस*
6. किसी से घृणा मत करो, घृणा करना पाप है। *—ठक्कर बापा*
7. किसी काम को छोटा मत समझो। जितने नम्र रहोगे उतने ही महान् बनोगे। *—रोमो*
8. अभ्यास (आदत) रस्सी की तरह है। इसमें जितना बट दोगे, यह उतना ही मजबूत बनेगा। *—मान*
9. कोई भी अतिथि तुम्हारे द्वार पर आये उसकी सेवा करो। अतिथि देवता के समान होता है।
10. आलसी मत बनो। आलस्य जीवित व्यक्ति की मृत्यु है। *—जेरिमी टेलर*
11. ईश्वर उसी की सहायता करता है जो अपनी सहायता आप करता है।
12. ईश्वर को सदैव याद करो। इसलिये कि तुम उसके बच्चे हो और वह तुम्हारे प्रत्येक कार्य को देखता है।
13. शरीर को स्वस्थ और बलवान् बनाओ। इसलिये कि स्वस्थ शरीर वाला ही ईश्वर की कृपा पा सकता है।
14. व्यक्तियों के दुर्गुणों से घृणा करो, व्यक्तियों से नहीं।
15. चरित्र एक श्वेत कागज के समान है। एक बार कलंकित होने पर इसका पूर्ववत् उज्ज्वल होना कठिन होता है। *—जे. हावेज*
16. जितना अधिक जीवित रहना चाहते हो रहो; किन्तु याद रखो, प्रारम्भ के बीस वर्ष ही नींव के हैं। इन वर्षों में जैसे बनोगे, सारे जीवन भर वैसे ही रहोगे। *—साउदी*
17. उच्चकोटि के महान् व्यक्तियों के जीवन चरित्र से अनभिज्ञ रहने का तात्पर्य है आजीवन मूर्ख रहना। *—प्लूटार्क*

18. दु:ख आने से घबराओ नहीं। जिसने जीवन में कभी दु:ख नहीं देखा, वही सबसे बड़ा दु:खिया है।
19. इस सनातन नियम को याद रखो–यदि तुम प्राप्त करना चाहते हो तो अर्पित करना सीखो। *–सुभाष चन्द्र बोस*
20. गरीबी से घबराओ नहीं, जिसकी जेब खाली होती है, उसका हृदय समृद्ध होता है। *–विक्टर ह्यू*
21. दूसरे का धर्म भले ही श्रेष्ठ मालूम हो, पर उसे ग्रहण करने में तुम्हारा कल्याण नहीं। सूर्य का प्रकाश प्रिय है, उस प्रकाश से संसार पोषण पाता है। सूर्य वन्दनीय है, परन्तु इसलिए यदि तुम पृथ्वी पर रहना छोड़ उसके पास रहना चाहोगे तो जल कर खाक हो जाओगे।
22. तुम अपने जीवन को इतना पवित्र रखो कि कोई तुम्हारी निन्दा करे, फिर भी लोग उसका विश्वास न करें।
23. महान् बनो और तुम देखोगे कि अन्य मनुष्यों की महानता तुम्हारी महानता से मिलने उठ खड़ी होगी। *–लावेल*
24. अपने प्रति दूसरों के जिस व्यवहार को तुम पसन्द नहीं करते, वैसा व्यवहार तुम स्वयं भी दूसरों के प्रति मत करो। *–महाभारत*
25. छोटे बच्चे ईश्वर के सर्वाधिक निकट होते हैं ठीक उसी तरह जिस तरह छोटे ग्रह सूर्य के निकट होते हैं। *–स्वामी शिवानन्द*
26. बचपन जीवन का सबसे अमूल्य समय है। यदि तुम इस समय को नष्ट करोगे तो जीवन के आगे की अवस्था में समय ही तुम्हें नष्ट कर देगा। *–शेक्सपीयर*



कीर्तन

इन सब के बाद आओ, कुछ कीर्तन भी सीख लो। इन्हें एकदम याद कर लो और समय मिले तो गाते रहो।

1

अगड़ बं अगड़ बं बाजे डमरू।
नाचे सदाशिव जगत्-गुरु॥
नाचे ब्रह्मा, नाचे विष्णु, नाचे महादेव।
खप्पर ले के काली नाचे, हर हर महादेव॥
नाचे ब्रह्मा, नाचे विष्णु, नाचे महादेव।
वीणा लेकर नारद नाचे, हर हर महादेव॥
नाचे गोपी, नाचे ग्वाला, नाचे बलदेव।
कालिय-फण पर कान्हा नाचे हर हर महादेव॥
हम भी नाचें, तुम भी नाचो, नाचे संसार।
रास रचा कर रसिया नाचे, ब्रजवासिन के साथ॥

2

पढ़ो पोथी में राम, लिखो तख्ती में राम
देखो खम्भे में राम, हरे राम राम राम।
पियो पानी में राम, जिमो खाने में राम,
बोलो घूमने में राम, हरे राम राम राम।
बोलो पापा से राम, बोलो मम्मी से राम,
बोलो चाची से राम, हरे राम राम राम।
शम्भो शंकर हर, शम्भो शंकर हर,
शम्भो शंकर हर बं बं बं।

3

शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम् शिवोऽहम्
वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ।
अमर आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ॥

अखिल विश्व का जो परम आत्मा है,
सभी प्राणियों का वही आत्मा है,
वही आत्मा .... शिवोऽहम्॥

अमर आत्मा है मरणशील काया,
सभी प्राणियों के जो भीतर समाया,
वही आत्मा .... शिवोऽहम्॥

जिसे शस्त्र काटे, न अग्नि जलावे,
बुझावे न पानी, न मृत्यु मिटावे,
वही आत्मा .... शिवोऽहम्॥

है तारों-सितारों में आलोक जिसका,
है चन्दा औ' सूरज में आभास जिसका,
वही आत्मा .... शिवोऽहम्॥

जो व्यापक है कण-कण में है वास जिसका,
नहीं तीनों कालों में हो नाश जिसका,
वही आत्मा .... शिवोऽहम्॥

अजर औ' अमर जिसको वेदों ने गाया,
यही ज्ञान अर्जुन को हरि ने सुनाया,
वही आत्मा .... शिवोऽहम्॥



प्रार्थना

ईश्वर की कृपा से तुमने इन सबों को जान लिया। अब आओ, अन्त में उनकी प्रार्थना भी करें। पद्मासन में बैठो। आँखें बन्द रखो, हाथ जोड़े रहो और बोलो।

असतो मा सद्गमय
तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्माऽमृतं गमय
सर्वेषां स्वस्ति भवतु
सर्वेषां शान्तिर्भवतु
सर्वेषां पूर्णं भवतु
सर्वेषां मंगलं भवतु
लोका: समस्ता: सुखिनो भवन्तु
सर्वे भवन्तु सुखिन:
सर्वे सन्तु निरामया:
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु
मा कश्चिद् दु:खभाग्भवेत्

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे
सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्
उर्वारुकमिव बन्धनात्
मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्

॥ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:॥



आमुख

योग के व्यावहारिक पक्ष को स्वीकार करते हुए जनसाधारण में योग का उत्तरोत्तर प्रचार एवं प्रसार करने के लिये तथा योग प्रेमी सत्संगियों की बढ़ती अभिरुचि देख कर यह संकलन किया गया है। यह अपने ढंग से एक अनूठी पुस्तक है। इसमें संकलित आसन समूह बिहार योग विद्यालय तथा उसकी अन्यान्य शाखाओं की प्रशिक्षण प्रणाली पर आधारित है। स्वामीजी के एक अंतरंग शिष्य, स्वामी प्रज्ञातीर्थ सरस्वती 'विद्यापति' ने इसको पद्य रूप दिया है। इसमें दिये आसनों का पद्यरूप सिद्ध प्रार्थना की तर्ज के अनुरूप है। पाठकों की सुविधा के लिये प्रत्येक पद्य की तर्ज विषय सूची में उस आसन के साथ दे दी गयी है। प्रत्येक पद्य के साथ आसनों का चित्र भी दर्शित किया गया है।

आशा की जाती है कि आप भी इस 'सचित्र योगासन पद्यावली' में दिये गए आसनों का अभ्यास कर लाभान्वित होंगे तथा मानव मात्र के लिये इसके प्रचार और प्रसारार्थ सहायक होंगे।

हरि: ॐ तत्सत्

विषय सूची

सूर्य नमस्कार

सूर्यनमस्कार रोज सुबह करो भाई।
बने स्वस्थ इससे जीवन सुखदाई॥


रेचक

दोनों हाथों को जोड़ सीधे खड़े हो जावो।
आँखें बन्द करके ध्यान सूरज का लगावो।
प्रार्थनामुद्रा में हाथ छाती के पास लाओ।
मन शान्त करके 'ॐ मित्राय नमः' मंत्र जपो॥


पूरक

श्वास लो अन्दर और हाथ ऊपर उठाओ।
जितना हो सके पीछे धड़ को झुकाओ।
हाथों को भुजा के समानान्तर में रखना।
'ॐ रवये नमः' मंत्र मन ही मन जपना॥


रेचक

श्वास छोड़ते हुए धड़ नीचे की ओर झुकाओ।
हथेलियाँ जमीन पर पैरों के बाजू से सटावो।
कोशिश करो नाक घुटने से छुवाओ।
श्वास रोके रहो 'ॐ सूर्याय नमः' गावो॥


पूरक

दायाँ पैर पीछे कर श्वास अन्दर भर लो।
बायाँ पैर सामने हाथ बगल में टिकावो।
दृष्टि सामने रहे, धड़ धनुष सा बनाओ।
हाथ सीधे रखो मंत्र 'ॐ भानवे नमः' गावो॥



रेचक

श्वास छोड़ो बायें पैर को भी मिलावो।
पैर ताने रखो एड़ी भू पर छुवाओ।
सिर अन्दर खींचो, सुमेरु आसन बनावो।
दृष्टि एड़ी पर रखो 'ॐ खगाय नमः' जपो॥



बहिर्कुम्भक

छठवीं स्थिति में शरीर जमीन पर सटाओ।
श्वास बाहर रोक कर कमर पेट ऊपर उठाओ।
छाती के बगल में हाथों को सटाये रखो।
जानो साष्टांग आसन 'ॐ पूष्णे नमः' जपो॥



पूरक

श्वास लेते हुए शरीर ऊपर उठाओ।
यह स्थिति भुजंगासन सा बनाओ।
पीठ कमानी बने सिर पीछे झुकाओ।
ऊपर देख मंत्र 'ॐ हिरण्यगर्भाय नमः' गाओ॥



रेचक

आठवाँ आसन पाँचवें की तरह आता।
यह लाभकारी स्नायु रोग भगाता।
भुजा और पैरों का यह शक्ति दाता।
'ॐ मरीचये नमः' मंत्र इसमें जपना॥



पूरक

नवीं स्थिति चौथी तरह बनाओ।
आमाशय के रोगों को इससे भगाओ।
रीढ़ की हड्डी को लचीला बनावो।
'ॐ आदित्याय नमः' मंत्र गाओ॥

दसवीं स्थिति नम्बर तीसरी मानो।
मोटापा की पक्का दवाई इसे जानो।
कब्ज चर्बी वालों के लिये है सहायक।
मंत्र है इसका 'ॐ सवित्रे नमः'॥


रेचक

ग्यारहवीं स्थिति नम्बर दो में आओ।
करो आसन यह पाचन भूख बढ़ाओ।
भुजा और कंधों की कसरत इसमें।
मंत्र जपो 'ॐ अर्काय नमः' इसमें॥


पूरक

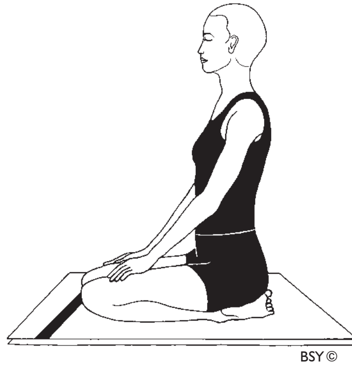
बारहवीं स्थिति नम्बर पहले में आओ।
सूरज की किरणों से शरीर को तपावो।
एकाग्रता बढ़े और मन होवे शांत।
मंत्र जपो इसमें 'ॐ भास्कराय नमः'॥


रेचक

ये 12 स्थितियाँ बायें पैर से करना।
यही स्थिति दायें पैर से बदलना।
एक चक्कर हुआ इसे बार-बार दुहरावो।
10 चक्कर रोज करो रोग मुक्ति पावो॥

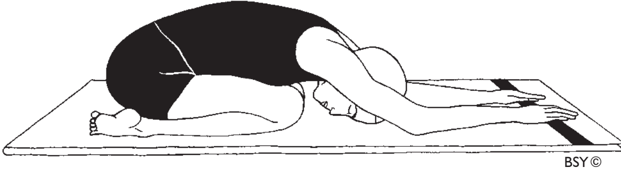
सभी आसनों का फल मिश्रित इसमें भाई।
दाद, खाज, खुजली को देत भगाई।
मन शांत करने की है ये दवाई।
शरीर होवे पुष्ट और दृष्टि की बढ़ाई॥

वज्रासन



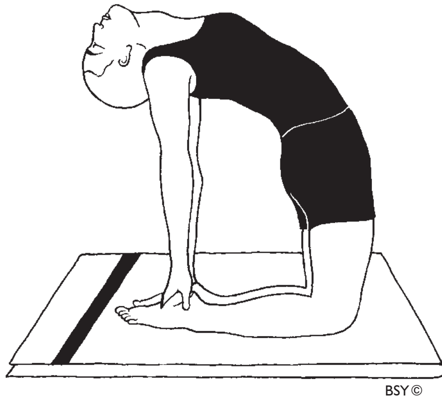
वज्रासन कर लो भैया, वज्रासन कर लो जी।
सुख से अगर जीना चाहो, वज्रासन कर लो जी॥1॥
खाने के बाद का तो आसन यही है भैया।
पन्द्रह मिनट हैं काफी, अभ्यास कर लो जी॥2॥
घुटनों को मोड़ बैठो, हाथों को ठेहुनों पर दो।
भोजन के पाचन हेतु, वज्रासन कर लो जी॥3॥
नासाग्र दृष्टि रखो, मन शान्त होता इससे।
पेप्टिक अल्सर छुटे, देह स्वस्थ कर लो जी॥4॥
जाँघों के स्नायु एवं मूत्राशय पुष्ट होते।
जननेन्द्रिय प्रणाली स्वस्थ होती, कर लो जी॥5॥
प्लुरिसी से पीड़ित बन्धु लाभ देखें करके इसकी।
युवा अवस्था दीर्घकालीन कर लो जी॥6॥
गुर्दे की कमजोरी, पाण्डु रोग मिटते इससे।
दिल के विकारों को भी शीघ्र दूर कर लो जी॥7॥
निराश जीवन को भी आशा से भरता भैया।
आलस्य, जड़ता छोड़, आनन्द कर लो जी॥8॥
व्यग्रता, क्रोध, चिन्ता, संकोच दूर होते।
शान्ति शीलता से अपने जीवन को भर लो जी॥9॥
वज्रासन कर लो भैया, वज्रासन कर लो जी।
खाने के बाद रोज भैया, वज्रासन कर लो जी॥10॥

शशांकासन



दीर्घायु रह कर जीना हो तो कर लो शशांकासन।
रोगों को दूर भगाना हो, कर लो शशांकासन॥1॥
घुटनों को मोड़ वज्रासन में बैठो।
दोनों हाथ पीछे पकड़ कर के कर लो शशांकासन॥2॥
सांस ले के गहरी, झुको धीरे आगे।
माथे को भू से सटा कर के कर लो शशांकासन॥3॥
झुकते हुए सांस धीरे निकालो।
झुकने पर थोड़ी देर रुक कर के कर लो शशांकासन॥4॥
अब साँस बाहर करो पूरी पूरी।
लेते हुए सांस धीरे तुम कर लो शशांकासन॥5॥
बड़ी तोंद वालों को वरदान है यह।
मुट्ठियों से पेट को दबा कर के कर लो शशांकासन॥6॥
कब्ज हटाना हो मुट्ठियों को बाँधो।
नाभि के नीचे उन्हें रख कर के कर लो शशांकासन॥7॥
पेट की चर्बी घटी, कब्ज भागा।
फिर कोई रोग न सतावे, तुम कर लो शशांकासन॥8॥
वस्ति-प्रदेश को भी विकसित है करता।
रुकता गर्भपात बहनों! तुम कर लो शशांकासन॥9॥
मूलाधार चक्र को जागृत है करता।
होता है मन शान्त इससे तुम कर लो शशांकासन॥10॥

उष्ट्रासन



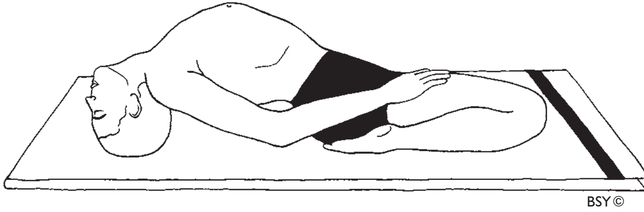
उष्ट्रासन कर लो मेरे भैया, भज राधे राधे।
काया निरोग तू बना ले, भज राधे राधे॥1॥
पैरों को मोड़ो औ वज्रासन में बैठो भैया।
हाथों को एड़ी पर अड़ा लो, भज राधे राधे॥2॥
अब जंघा धीरे-धीरे ऊपर उठाओ भैया।
रीढ़ कमान-सी बना लो, भज राधे राधे॥3॥
पेट और छाती आगे तानो, माथा पीछे खींचो।
फेफड़ों में थोड़ी सांस भर लो भज राधे राधे॥4॥
आँतों को कसरत होती, कब्ज दूर होता इससे।
लीवर और किडनी पुष्ट होते, भज राधे राधे॥5॥
कूबड़ और पीठ दर्द दूर होते इससे भैया।
कटिशूल को भी भगाता, भज राधे राधे॥6॥
पेट और आँत रोग दूर होते भैया इससे।
प्रतिदिन प्रात: इसको कर लो, भज राधे राधे॥7॥

सिंहासन



सिंहासन की विधि अब सीखो भाइयों।
बहुत लाभकारी है यह भाइयों॥1॥
वज्रासन में बैठो सूरज की ओर देखो।
मध्य घुटनों के हाथों को अपने रखो॥2॥
अंगुलियाँ रहें हाथ की पीछे ओर।
रहें बाहें सीधी, झुको आगे ओर॥3॥
मुँह फैलाओ अब, जीभ बाहर करो।
सूरज-रश्मियों को गले तक भरो॥4॥
छोड़ो साँस धीरे करो आ...आ...।
निकालो यही स्वर, करो आ...आ...॥5॥
कभी भी करना है इसे लाभकारी।
मगर दिन में तीन बार करना भाई॥6॥
गला, नाक, मुँह, कान की गड़बड़।
या हकलाने का रोग करता हो गड़बड़॥7॥
तो यह सिंहासन करे लाभकारी।
है जबड़ों की जकड़न की रुकती बीमारी॥8॥

सुप्त वज्रासन



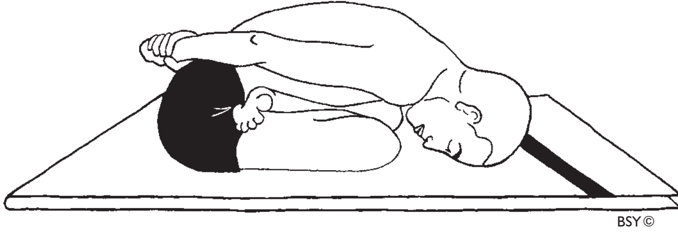
अगड़ बम अगड़ बम बाजे डमरू, नाचे सदा शिव जगतगुरु।
सो के वज्रासन करो, नित्य इसको सेव
वज्रासन में बैठो पहले, हर हर महादेव॥1॥

कोहनी को भू से टिका पीछे झुकाना
हाथों का सहारा लेके खूब झुकना
भू से माथा छूए तब तक झुकना
पीठ को कमानी-सा बना के लेटना॥2॥

घुटने जमीन छुएँ, हाथ जाँघों पर
साँस चले धीरे धीरे, आँखें बन्द कर
लाभ पावो सारा वज्रासन सा ही
रीढ़ भी लचीली बनती, आँतें तनती॥3॥

अर्थराइटिस, बौन टी. बी. वाले न करें
पाँच ही मिनट अन्य लोग भी करें
अगड़ बम अगड़ बम बाजे डमरू, नाचे सदा शिव जगतगुरु॥4॥

योगमुद्रा



करो योग मुद्रा, है आँतों का आसन।
बड़ी आँत को पुष्ट करता ये आसन॥1॥

उसे पुष्ट कर कब्ज को है मिटाता।
है आँतों की वायु को बाहर हटाता॥2॥

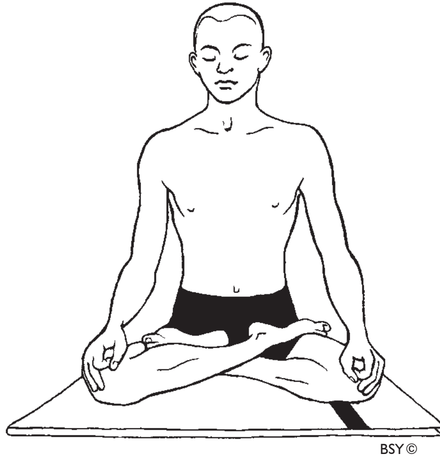
करो बन्द आँखें, लगा पद्मासन।
दोनों हाथ पीछे रहें, हो ये आसन॥3॥

पकड़ लो कलाई किसी हाथ की अब।
निकालो पूरी साँस धीरे-धीरे अब॥4॥

झुको सामने भू से माथा सटाओ।
रुको जितना चाहो, अब ऊपर को आओ॥5॥

ऊपर आ के लो साँस, फिर दुहराओ।
कई बार कर लाभ इसका उठाओ॥6॥

पद्मासन



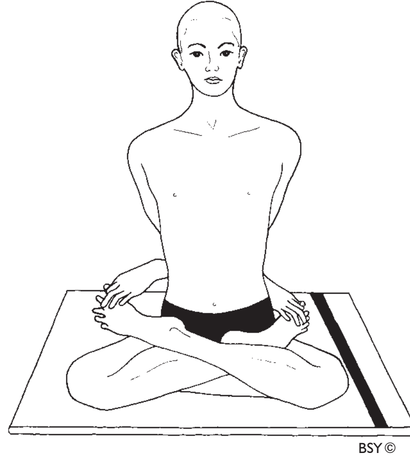
श्रीमन् नारायण नारायण नारायण।
श्रीमन् नारायण नारायण नारायण॥
बैठो पद्मासन में भैया भजलो नारायण।
श्रीमन् नारायण नारायण नारायण॥ 1॥

दायाँ पैर मोड़ बायीं जंघा पर रख लो।
बायाँ पैर मोड़ उसके ही ऊपर धर दो॥
मेरुदण्ड सीधा कर लो, हाथ ठेहुनों पर रखो।
आँखें बन्द करके बैठो, भज लो नारायण॥ 2॥

जठराग्नि तीव्र करता, भूख बढ़ती खूब है।
टखनों, घुटनों का कड़ापन दूर होता इससे है॥
माँसपेशियाँ सुधरती जाँघ और पैर की।
गठिया भी दूर करता, भज लो नारायण॥ 3॥

देह स्वस्थ एवं मन आनन्दित रहता है।
गहरे ध्यान हेतु उपयुक्त यही आसन है॥
बाद भोजन के तुरंत इसको करना मना है।
प्रतिदिन इसमें बैठो, भज लो नारायण॥ 4॥

बद्ध पद्मासन

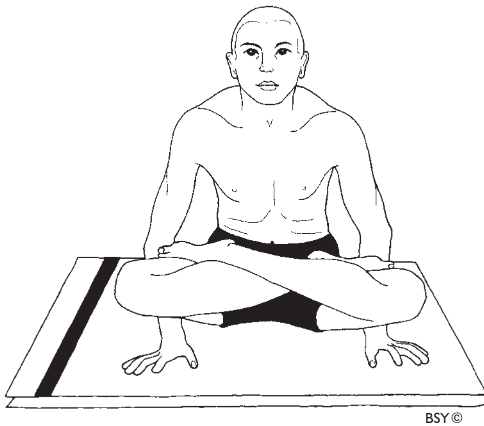


श्रीमन् नारायण नारायण नारायण।
श्रीमन् नारायण नारायण नारायण।
पहले पद्मासन में बैठो, भज लो नारायण।
श्रीमन् नारायण नारायण नारायण॥1॥

दायाँ हाथ पीछे ले जाओ बायीं तरफ को।
बायाँ हाथ पीछे ले जाओ दायीं तरफ को।
दोनों पैरों के अँगूठे हाथ से पकड़ लो।
नासिकाग्र दृष्टि रख के भज लो नारायण॥2॥

छाती का विकास पूरा पूरा इससे होता है।
कन्धा, पीठ एवं हाथ दर्द ठीक होता है।
हाथ, पैरों के सभी स्नायु लचीले बनते हैं।
बद्ध पद्मासन में बैठो, भज लो नारायण॥3॥

लोलासन



करो भैया लोलासन विधि सीख लो।
पद्मासन में बैठो भू पर हथेली टिका लो॥1॥

जाँघों की बगल में तुम बाहें रख लो।
साँस लेके देह को ऊपर उठा लो॥2॥

सारी देह हाथों पर ही थामे रहना।
हाथों बीच देह को हिलाते रहना॥3॥

आगे-पीछे देह को झुला के साँस छोड़ो।
नीचे आ आराम करो आसन को तोड़ो॥4॥

हाथों का कम्पन छूटे, हों वे मजबूत।
कलाई की कमजोरी जाती शीघ्र छूट॥5॥

कसरत होती पेट माँसपेशी की।
इसे कर भलाई करो निज देह की॥6॥

प्रारम्भिक योग प्रकाश

सम्पादक–श्री दयानन्द, बी.ए. (आनर्स)

स्वामी सत्यानन्द जी की शिक्षाओं से

बिहार योग विद्यालय द्वारा प्रकाशन – 1969, 2013



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

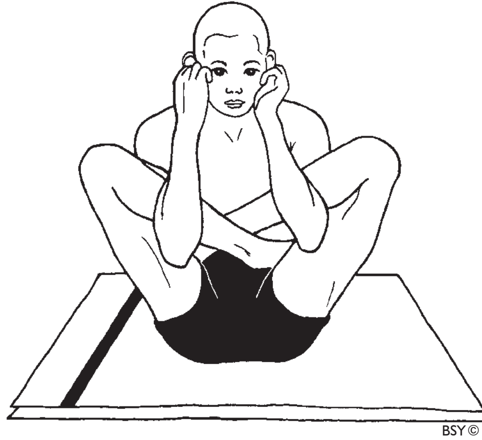
प्रारम्भिक योग प्रकाश

स्वामी सत्यानन्द जी के लिए बच्चों की शिक्षा-दीक्षा हमेशा एक प्राथमिकता रही। उनका कहना था, *'दुनिया की नियति नन्हें, निर्दोष बच्चों पर निर्भर है। अगर तुम अंधेरी निशा में आशा की किरण देखना चाहते हो तो बड़े-बूढ़ों की बजाय बच्चों को अध्यात्म की ओर उन्मुख करना होगा।'*

सन् 1969 में प्रकाशित यह पुस्तिका बच्चों को योग और अध्यात्म का प्रथम परिचय कराने का प्रथम प्रयास थी।

–*सम्पादक*

गर्भासन



गर्भासन है सुन्दर आसन सीखो विधि यह भाई।
पद्मासन में बैठ कर इसे रोज करना भाई॥1॥

हाथों को पिण्डली जाँघ बीच डालो भाई।
केहुनी तक घुस जाय, कान तब पकड़ो भाई॥2॥

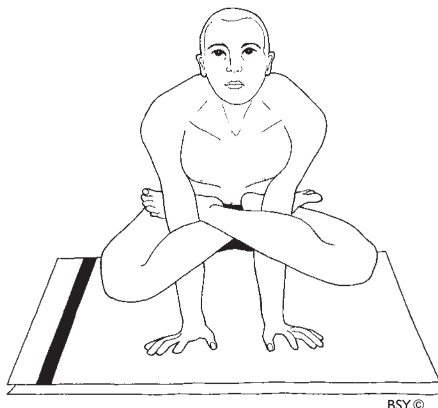
अब नितम्ब पर टिकी रहे यह देह तुम्हारी।
सहज रूप में श्वास चले, देखो यह भाई॥3॥

रुक कर थोड़ी देर, तोड़िये इस आसन को।
भूख बढ़ाता और शान्त करता है मन को॥4॥

स्नायविक दुर्बलता में है अति गुणकारी।
उत्तेजित औ क्रोधित मन को शान्ति प्रदायी॥5॥

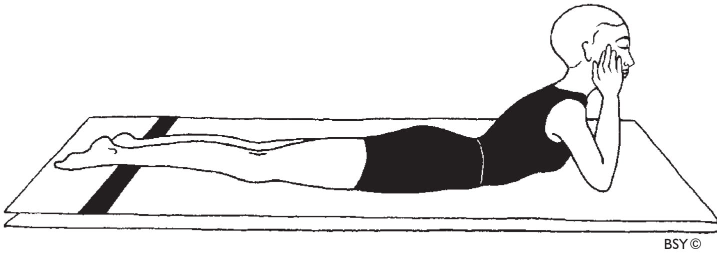
जब भी मन में क्रोध उठे तुम इसको करना।
क्रोधजयी बन कर जीवन को सुखमय करना॥6॥

कुक्कुटासन



जय सिया राम जय जय सिया राम।
जय सिया राम जय जय सिया राम॥
कुक्कुट आसन कर भजो राम।
जय सिया राम जय जय सिया राम॥ 1 ॥
पद्मासन में जम कर मीत।
बाँह घुसाओ पिण्डली बीच॥
केहुनी तक नीचे पहुँचाय।
हाथ जमाओ भू पर जाय॥ 2 ॥
अँगुली रहे सामने ओर।
देह उठाओ करके जोर॥
सारी देह बाँह पर थाम।
जय सिया राम जय जय सिया राम॥ 3 ॥
बनती देह खूब ही चुस्त।
छाती कन्धे होते पुष्ट॥
हाथ बड़े बनते मजबूत।
ऐसा आसन है कुक्कुट॥
कुक्कुट आसन कर भज राम।
जय सिया राम जय जय सिया राम॥ 4 ॥

मकरासन



सीधा सा आसन है, नाम मकरासन।
करना सहज है जी, कर लो ये आसन॥ 1 ॥

पेट बल लेट, धड़ ऊपर उठाओ।
केहुनियाँ धरती पै रख के टिकाओ॥ 2 ॥

केहुनी से पहुँचे तक बाहें सटाओ।
तलहत्थी फैला के सिर को संभालो॥ 3 ॥

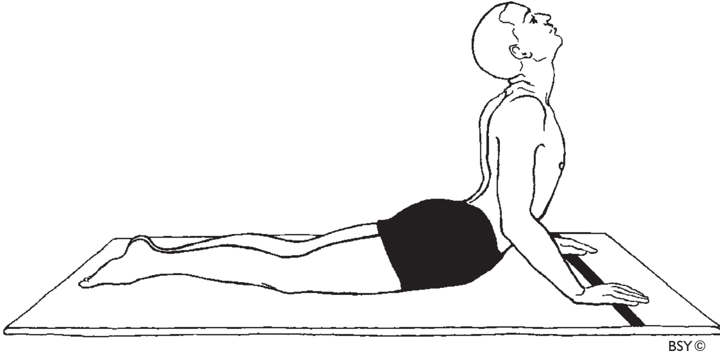
स्लिप-डिस्क, कूबड़ में है लाभकर।
फुफ्फुस के रोगों का भी है सुधारक॥ 4 ॥

भोजन-नली पतली हो, कष्टकारी।
उसमें सभी रूप से लाभकारी॥ 5 ॥

देह झुकी हो, या गर्दन कड़ी हो।
आँतों में वायु हो, दमा-रोगी हो॥ 6 ॥

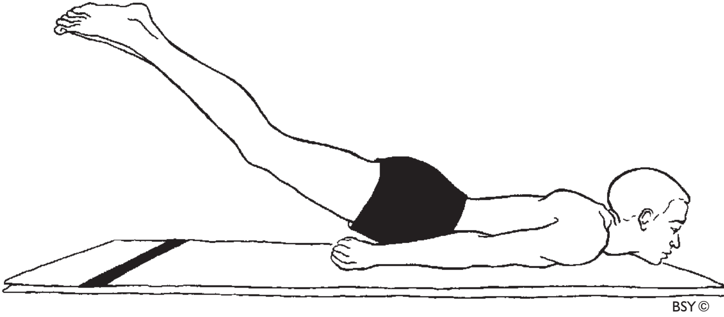
सब ठीक करता है, यह मकरासन। करना सहज...

भुजंगासन



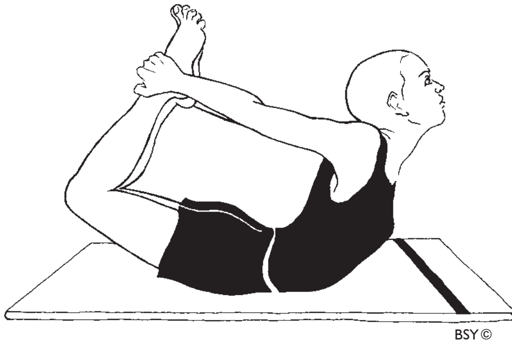
सुन्दर है आसन भुजंगासन, इसको करना भैया।
देह लचीली हो बनाना, इसको करना भैया॥ 1॥
पेट बल लेट, पैर तान, हाथ मोड़े रखो।
कंधों के हाथ बाजू रख के इसको करना भैया॥ 2॥
साँस लेते गहरी, सिर ऊपर उठाते जाओ।
हाथों से लेकर सहारा इसको करना भैया॥ 3॥
पैर नाभि भू को छुएँ, शेष अंग ऊपर उठें।
पीठ कमान-सी बनाके, इसको करना भैया॥ 4॥
साँस रोक रखो, आसमान ओर दृष्टि रखो।
पीठ, कंधा पीछे ओर खींचे इसको करना भैया॥ 5॥
साँस धीरे बाहर करते, नीचे आओ धीरे धीरे।
पाँच बार तक दुहरा के, इसको करना भैया॥ 6॥
गले के स्नायु पुष्ट होते, दृष्टि-शक्ति बढ़ती।
लीवर की क्षमता हो बढ़ानी, इसको करना भैया॥ 7॥
कब्ज दूर होता, भूख बढ़ती है इसके कारण।
स्लिप-डिस्क ठीक हो करना, इसको करना भैया॥ 8॥
माताओं बहनों का गर्भाशय सबल बनाता।
स्त्री-रोग दूर है भगाता, इसको करना भैया॥ 9॥
हर्निया, पेप्टिक अल्सर, आँतों के टी.बी. वाले।
इन रोगियों को छोड़ शेष, इसको करना भैया॥ 10॥

शलभासन



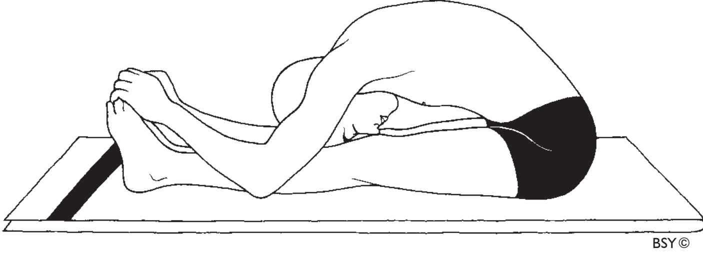
शलभासन कर लो भैया शलभासन कर लो।
रोग मुक्त रहना चाहो, शलभासन कर लो॥ 1॥
पेट के बल लेटो भू पर, पैर सीधे कर लो।
साँस लेके पूरा पूरा, शलभासन कर लो॥ 2॥
दोनों बाहें नीचे रखो, जांघें ऊपर से रहें।
धीरे पैरों को उठा के, शलभासन कर लो॥ 3॥
बारी बारी दोनों पैरों को, ताने ही ताने रखो।
जितना उठ सके उठा के, शलभासन कर लो॥ 4॥
दोनों पैर साथ कर के, गहरी साँस लेके फिर।
जितना उठ सकें उठा के, शलभासन कर लो॥ 5॥
लीवर, पैंक्रियाज़, किडनी को सबल बनाता है।
भूख खूब बढ़ती इससे, शलभासन कर लो॥ 6॥
आँतों की क्रिया क्षमता बढ़ती इसको करने से।
पाचन क्रिया सुगम होती, शलभासन कर लो॥ 7॥
आँतों के टी. बी., अल्सर वाले, हर्निया रोगी।
इन्हीं को छोड़ शेष, शलभासन कर लो॥ 8॥

धनुरासन



धनुरासन कर भाई, जीवन बने सुखदाई।
रोगों को दूर भगाई, जीवन बने सुखदाई॥1॥
छाती के बल लेट, पाँवों को मोड़ो।
बाहों को पीछे उठाई, जीवन बने सुखदाई॥2॥
हाथों से टखनों को खींचो पकड़ के।
छाती औ ठेहुना उठाई, जीवन बने सुखदाई॥3॥
सारा शरीर खींच ऊपर धनुष सा।
आगे पीछे बगल में डुलाई, जीवन बने सुखदाई॥4॥
धीरे-धीरे ढीली करो देह सारी।
कर लो आराम थोड़ा भाई, जीवन बने सुखदाई॥5॥
आँतों के वायु में वरदान है यह।
अनपच, कुबड़पन हटाई, जीवन बने सुखदाई॥6॥
रीढ़ की हड्डी लचीली बनाता।
लीवर क्रियाशील बनाई, जीवन बने सुखदाई॥7॥
अतिरिक्त चर्बी है पच जाती इससे,
गठिया को देता भगाई, जीवन बने सुखदाई॥8॥
स्लिप-डिस्क को भी है यह ठीक करता,
कब्ज को देता जलाई, जीवन बने सुखदाई॥9॥
पेशाब की सब खराबी हटाता,
पथरी की है यह दवाई, जीवन बने सुखदाई॥10॥

पश्चिमोत्तानासन



पश्चिमोत्तान आसन रोजाना करो।
पश्चिमोत्तान आसन रोजाना करो॥

लेट कर पीठ बल, पैर सीधे करो।
दोनों हाथों को सिर से सटा कर रखो॥
साँस लो औ उठो, धड़ को सीधा करो।
दोनों हाथों को ऊपर उठाये रहो॥

शान्त होकर ये आसन रोजाना करो।
पश्चिमोत्तान आसन रोजाना करो॥ 1 ॥

अब झुकाओ कमर छोड़ते साँस को।
हाथ अँगूठे धरें, ऐसी कोशिश करो॥
नाक ठेहुने छुएँ, इतना नीचे झुको।
हाथ ढीले न हों, पाँव सीधे रखो॥
साँस रोके रहो और ये आसन करो।
पश्चिमोत्तान आसन रोजाना करो॥ 2 ॥

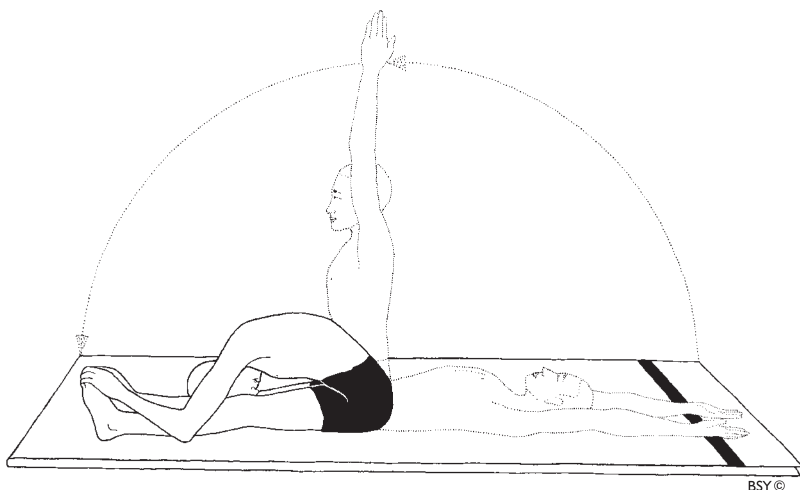
मोटापा तथा पीठ का दर्द भागे।
सभी रोग किडनी के जल्दी ही जावें॥

पेट के वायु को शीघ्र बाहर निकाले।
मेरुदण्ड को यह लचीला बनावे॥

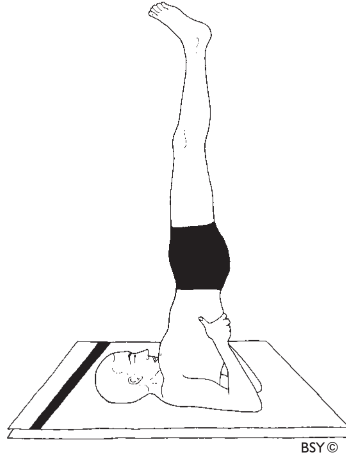
पैंक्रियाज़ चुस्त इससे बनाया करो।
पश्चिमोत्तान आसन रोजाना करो॥3॥

कमर-सन्धियों को लचीला बनाता।
कमर-सन्धियों को भी धत्ता बनाता॥
पेट के स्नायु मजबूत बनते हैं इससे।
हमें यह सुडौल औ गठीला बनाता॥

ऊर्ध्व श्वास इससे छुड़ाया करो।
पश्चिमोत्तान आसन रोजाना करो॥4॥

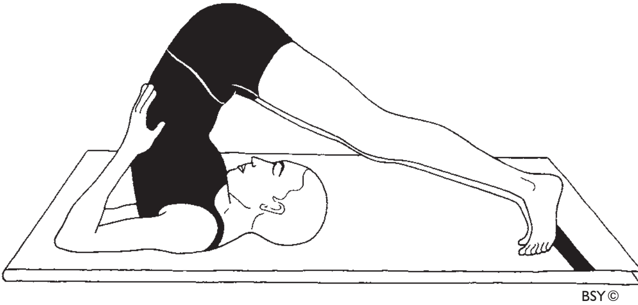


सर्वांगासन



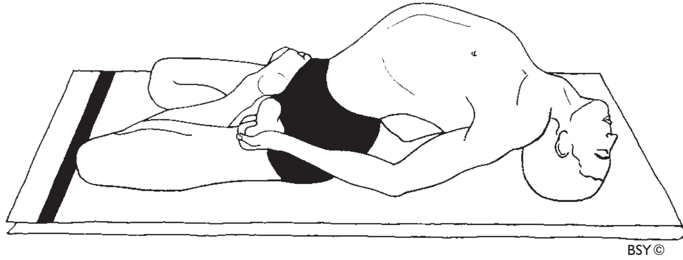
सुख के चहैया मोरे भैया, सर्वांगासन कर लो।
शीर्षासन का है छोटका भैया, सर्वांगासन कर लो॥1॥
सिर और कन्धा भू पर, शेष अंग फेंको ऊपर।
हाथों को पीठ से लगा के, सर्वांगासन कर लो॥2॥
ठुड्ढी से छाती को दबा कर के रखना भैया।
पैरों को खूब ताने रख के सर्वांगासन कर लो॥3॥
गल-ग्रन्थि में है इससे, रक्त संचार बढ़ता।
क्षमता बढ़ाने हेतु इसकी, सर्वांगासन कर लो॥4॥
काम-ग्रन्थि एवं अस्थियों का विकास होता।
श्वसन-प्रणाली ठीक रहती, सर्वांगासन कर लो॥5॥
फीलपाँव, फेता बढ़ना रुकता है भैया इससे।
पाचन-क्रिया को हो बढ़ाना, सर्वांगासन कर लो॥6॥
पैंक्रियाज़ ग्रन्थि काम ठीक करती इससे।
अपेन्डिसाइटिस को दबाता, सर्वांगासन कर लो॥7॥
खाँसी, दमा, सिर दर्द अथवा हो दिल की धड़कन।
इन सब को दूर भगाता, सर्वांगासन कर लो॥8॥
आसन है एक किन्तु गुण हैं बहुत से भैया।
रोज सुबह में तड़के उठके, सर्वांगासन कर लो॥9॥

हलासन



हलासन करो जी, हलासन करो।
सुखी रहना चाहो, हलासन करो॥1॥
पीठ धरती पै रख लेट जाओ जरा।
पैर धीरे उठा के, हलासन करो॥2॥
पैर पीछे ले जाओ, कि धरती छुएँ।
उनको ताने रहो औ हलासन करो॥3॥
तोंदवालों को राहत दिलाता है यह।
पेट के रोगियों, तुम हलासन करो॥4॥
डायबीटिज़ छुड़ाना इसे प्रिय है।
फोते की पीड़ा वालों, हलासन करो॥5॥
किशोरी लड़कियों को हितकारी है।
स्तन-रोगी बहनों, हलासन करो॥6॥
मेरुदण्ड इससे लचीला बने।
है यह रक्त-शोधक, हलासन करो॥7॥
श्वास-खाँसी छुड़ाने में माहिर है यह।
गुदा-शिश्न रोगी, हलासन करो॥8॥
रक्त पित्त रोग में तो ये वरदान है।
पाण्डू से ग्रस्त बन्धु, हलासन करो॥9॥
गले और पैरों की क्षमता बढ़े।
हो कन्धे में पीड़ा, हलासन करो॥10॥

मत्स्यासन



श्री राम जय राम, जय जय राम।
मत्स्यासन कर जय जय राम॥

पद्मासन में बैठा जाय, हाथ सहारा ले झुक जा।
इतना पीछे झुकता जा, धरती पीठ छुए झट जा॥

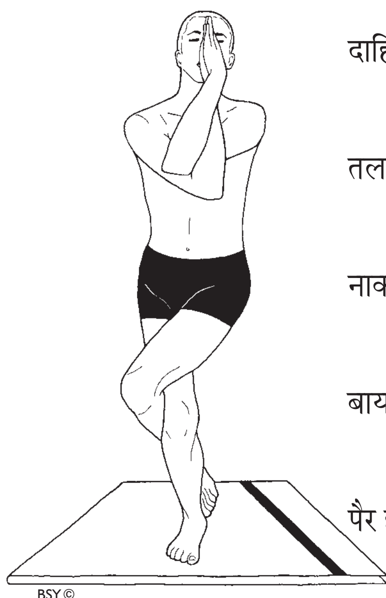
पैरों के अँगूठे पकड़ाएँ, हाथ बढ़ाओ इतने तात।
पीठ कमानीदार बना, सर कुल्हे पर देह टिका॥

केहुनी भू पर टिका रहे, मणिपुर में चित्त रहे।
आँतें इससे तनतीं खूब, और फेफड़े फूलते खूब॥

अत: पेट-फुफ्फुस के रोग, दूर भागते इससे लोग।
सर्वांगासन का विपरीत, कब्ज रोग को लेता जीत॥

इसका रोज करो अभ्यास, श्री राम ... ...।

गरुड़ासन



कर लिया कर गरुड़ासन, बहुत हितकारी है।
कर लिया कर गरुड़ासन, बहुत हितकारी है॥ 1॥

सीधे खड़े हो बायाँ पैर उठाओ।
दाहिने में लपेटो, परम गुणकारी है॥ 2॥

एक बाँह में दूसरे को लपेटो।
तलहत्थियाँ हों सटी, यह बड़ा लाभकारी है॥ 3॥

प्रार्थनामुद्रा में हाथों को लाओ।
नाक से उनको सटाओ, नहीं कष्टकारी है॥ 4॥

अब दाहिना पैर मोड़ो नीचे को।
बायाँ अँगूठा छुए भू को, यह कुछ न भारी है॥ 5॥

आओ पुन: पहले की स्थिति में।
पैर हाथ बदल दुहराओ, विनय यह हमारी है॥ 6॥

आसन को करते रहो साँस रोके।
जितना होवे दुहराओ, ये हिम्मत तुम्हारी है॥ 7॥

पैरों की हड्डी तथा माँसपेशी।
और स्नायु मजबूत बनते, यह गुण इसमें भारी है॥ 8॥

साइटिका, हाथ पैरों का गठिया।
औ हाइड्रोसिल के रोगों का यह नाशकारी है॥ 9॥

फीलपाँव को रोकता है ये आसन।
रोज सुबह में करो तुम न रहती बीमारी है॥ 10॥

सचित्र
आसन पद्यावली

स्वामी प्रज्ञातीर्थ सरस्वती 'विद्यापति'

स्वामी सत्यानन्द जी की शिक्षाओं से

बिहार योग विद्यालय द्वारा प्रकाशन – 1974, 2013



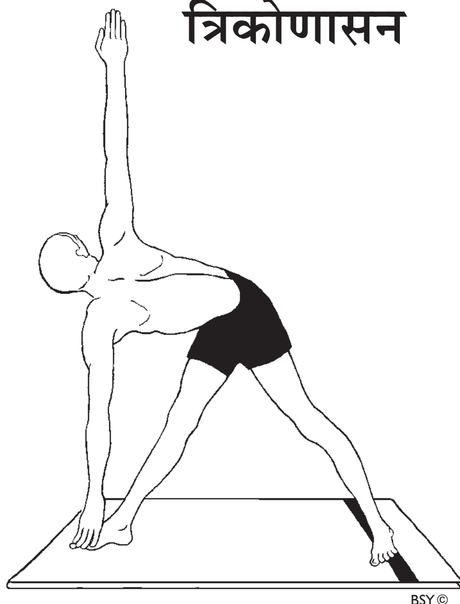
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

सचित्र
आसन पद्यावली

इस पुस्तिका में अनेक योगासनों की अभ्यास विधि और उनसे सम्बन्धित अन्य जानकारी बड़ी ही सुन्दर और सरस पद्यशैली में प्रस्तुत की गई है। रचयिता स्वामी प्रज्ञातीर्थ ने इन पद्यों को आश्रम के लोकप्रिय भजनों और कीर्तनों की तर्ज पर बैठाया है, जिससे आसनों को सीखते-सिखाते समय इन्हें आसानी से गाया जा सकता है और आसन कक्षा का वातावरण मनोरंजक और रोचक बनाया जा सकता है।

–*सम्पादक*

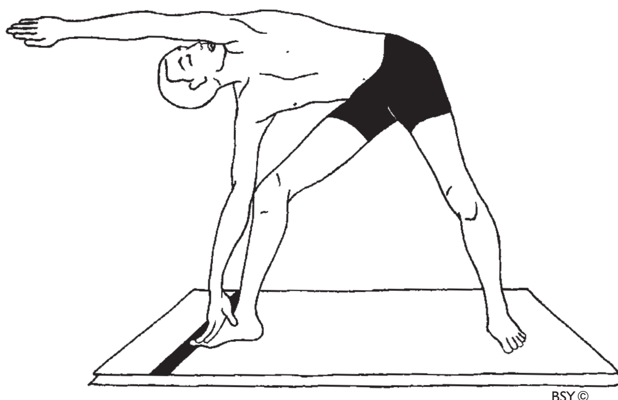
त्रिकोणासन



त्रिकोण आसन, त्रिकोण आसन।
कर लिया कर भैया, त्रिकोणासन॥

पैरों को फैला के सीधे खड़े हो।
बाहें हों बाजू में, सीधी तनी हों॥
अब देह को अपनी बायें झुकाओ।
फिर देह मोड़, मुँह पीछे घुमाओ॥
बायाँ हाथ नीचे इतना लाओ।
दाहिने पैर का अँगूठा छुवो॥
दाहिना हाथ ऊपर को सीधा तना हो।
दृष्टि उसी पर हो त्रिकोण बना हो॥
पहली अवस्था में आ सुस्ताओ।
दूसरी तरफ झुक के फिर दुहराओ॥

ऐसे ही कई बार कर त्रिकोणासन।
कर लिया कर भैया त्रिकोण आसन॥ 1 ॥



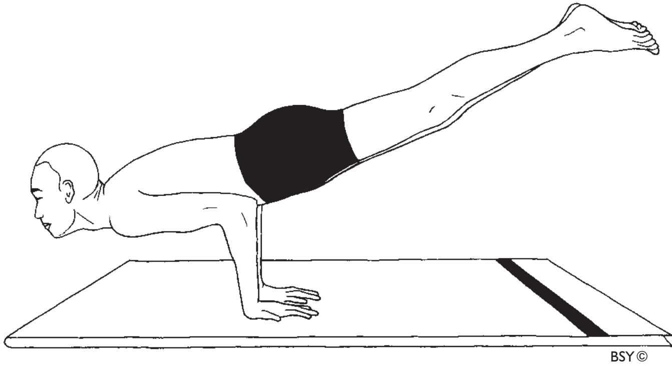
दूसरा तरीका भी है इसका भाई।
जिसमें बायाँ हाथ ऊपर न जाई॥
बल्कि सटा उसको माथे से रखना ।
भू के समानान्तर सीधे रखना॥

ऐसा भी कर के करो त्रिकोणासन।
कर लिया कर भैया त्रिकोण आसन॥2॥

रीढ़ की हड्डी तथा माँसपेशी।
बनती लचीली औ मजबूत होती॥
उदर-अवयवों की मालिश है होती ।
पाचन सुधरता क्षुधा वृद्धि होती॥

बढ़ती हुई बालिकाओं का आसन।
है यह, तू कर लिया कर त्रिकोणासन॥3॥

मयूरासन



हाथों को रखो धरती पर, नाभि को टेको केहुनों पर।
पैरों को पीछे ताने रख, अभ्यास करो मयूरासन का॥ 1॥

सारा शरीर सन्तुलित करो, केहुनी के नीचे हाथों पर।
ग्रन्थियाँ प्रभावित होती हैं, अभ्यास करो मयूरासन का॥ 2॥

शारीरिक परिवर्तन-प्रक्रिया को तीव्र बनाता यह भाई।
है रक्त स्वच्छ होता इससे, अभ्यास करो मयूरासन का॥ 3॥

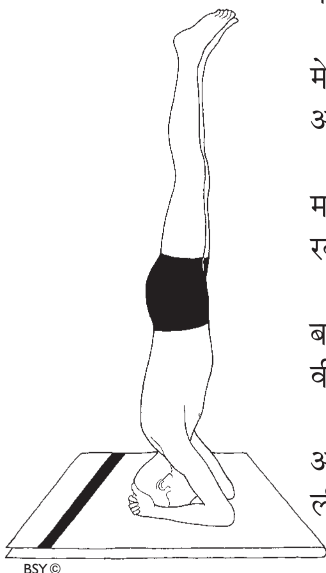
आँतों से जहरीले तत्त्वों को जल्दी दूर भगाता है।
व्रण, फोड़े, फुन्सी दूर रहें, अभ्यास करो मयूरासन का॥ 4॥

डायबीटिज़, यकृतरोग या आमाशय की गड़बड़ियाँ हों।
इन सब को दूर भगाता है, अभ्यास करो मयूरासन का॥ 5॥

शीर्षासन

शीर्षासन, शीर्षासन, शीर्षासन कर शीर्षासन।
स्वस्थ सुखी रहना चाहो तो, शीर्षासन कर शीर्षासन॥

केहुनी के बल टिक धरती पर, सिर नीचे कर धड़ ऊपर।
पैर तान कर, आँख मूंद कर शीर्षासन कर शीर्षासन॥



मेरुदण्ड को सीधा कर लो, साँस चले धीरे धीरे।
आनन्दित रहना चाहो तो, शीर्षासन कर शीर्षासन॥

मानसिक सन्तुलन ठीक कर, मन को करता है एकाग्र।
रक्त-प्रवाह ठीक करता है, शीर्षासन कर शीर्षासन॥

बन्ध्यापन, हर्निया मिटाता, अपच, अनिद्रा करता दूर।
वीर्य दोष अरु कब्ज हटाता, शीर्षासन कर शीर्षासन॥

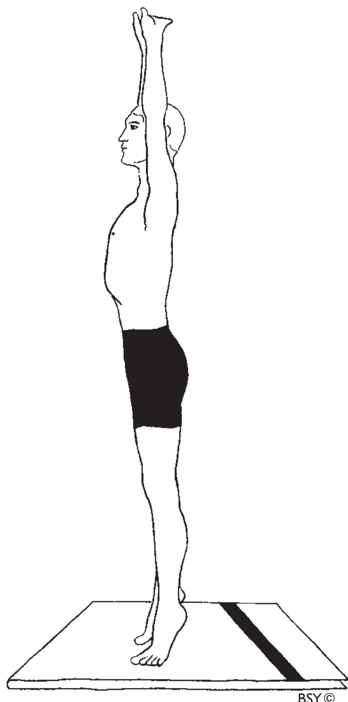
आँख-नाक के रोग भागते, हृदय बना रहता है शान्त।
लीवर क्रियाशील बनाता है, शीर्षासन कर शीर्षासन॥

जननेंद्रिय की सभी खराबी, श्वसनप्रणाली के सब रोग।
ठीक सदा रहते हैं इससे, शीर्षासन कर शीर्षासन॥

कितना गुण गायें हम इसका, सब आसन का है राजा।
अत: सुबह में प्रतिदिन भाई, शीर्षासन कर शीर्षासन॥

ताड़ासन

कर लो ताड़ासन, कर लो ताड़ासन।
शीर्षासन के बाद तुरन्त कर लो ताड़ासन॥



दोनों पैरों मिलाके सीधे खड़े हो जाओ।
हथेलियों को जाँघों के बाजू से सटावो॥ 1॥

सामने ला हाथों की अंगुलियाँ फसाओ।
अब हाथ धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठावो॥ 2॥

हथेलियाँ अब आकाश की ओर पलटो।
झुका गर्दन पीछे, ऊपर की ओर देखो॥ 3॥

श्वास लेकर एड़ियाँ ऊपर उठावो।
सभी अंगुलियों के बल सीधे खड़े हो जावो॥ 4॥

श्वास छोड़ो एड़ियाँ अब जमीन से लगावो।
जल्दी-जल्दी ऐसे कई बार दुहरावो॥ 5॥

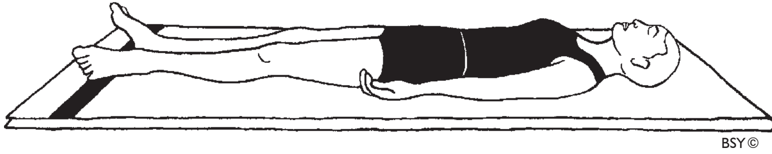
पेट की खराबी, पाचन को ठीक करता।
करो अभ्यास इसका ऊँचाई इससे बढ़ता॥ 6॥

छह गिलास पानी पीकर सुबह इसे करना।
सौ कदम ताड़ासन में आगे चलना॥ 7॥

कब्ज वायु रोग को जल्दी यह भगाता।
सभी स्नायुओं को पुष्ट यह करता॥ 8॥

मधुमेह वालों के लिए भी लाभकर।
शंखप्रक्षालन का पहला यह आसन॥ 9॥

शवासन



सभी आसन करने के बाद शवासन की आती बारी।
धरा पर चित् लेट कर के करो तुम इसकी तैयारी॥1॥
थोड़ा पैरों को बिलगा, खूब देह को शिथिल करो भाई।
जरा भी हरकत मत होवे, बनो तुम मुर्दा-सा भाई॥2॥
श्वास में स्थिरता तथा लयात्मक गति भी आने दो।
पुनः तुम अपना सारा ध्यान श्वास पर ही केन्द्रित कर दो॥3॥
अन्दर और बाहर आ रही दोनों ही श्वासों को।
सजग हो, बंद आँखों से ही देखो इन दो श्वासों को॥4॥
इसे करने से चिन्ता हटती, तन अक्लान्त होता है।
थकावट दूर होती है तथा चित्त शान्त होता है॥5॥
हमारे आधुनिक जीवन में तो वरदान यह भारी।
तनावों को मिटा जीवन में कराता ताजगी जारी॥6॥

नोट



सन् 2013 में बिहार योग विद्यालय की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर बिहार योग परम्परा के मौलिक प्रकाशनों को 'स्वर्णिम संग्रह शृंखला' के नाम से पुनर्प्रकाशित किया गया है।

इस शृंखला के अंतर्गत यह पाँचवी पुस्तक, श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के शिष्यों की आसन, प्राणायाम, तथा बच्चों और अन्य वर्गों के लिए योगाभ्यास सम्बन्धी रचनाओं का स्वर्णिम संकलन है।



[bar code here]

ISBN : 978-93-81620-93-9